बीए तराख्व वषम वष (प्रथम पत्र)

खण्ड – 1

कर्मकाण्ड : आरम्भिक परिचय
इकाई – 1 कर्मकाण्ड का उद्देश्य

इकाई की संरचना

1.1 प्रस्तावना
1.2 उद्देश्य
1.3 कर्मकाण्ड का उद्देश्य स्रोत
1.3.1 कर्मकाण्ड के विविध आयाम
1.4 धर्मसूत्र एवं स्मृति
    अभ्यास प्रश्न
1.5 सारांश
1.6 शब्दावली
1.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
1.8 संदर्भ ग्रन्थ सूची
1.9 निबन्धात्मक प्रश्न
1.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई में कर्मकाण्ड प्रथम पत्र के प्रथम इकाई ‘कर्मकाण्ड के उद्ध सोत’
नामक शरीरिक से समवेति है। कर्मकाण्ड का उद्ध स्थल मूल रूप से वेद है। वेद कर्मकाण्ड का ही
नहीं वरन् सर्वविव्ध का मूल है। कर्मकाण्ड का समवेति केवल पूजन, पाठ, विभिन्न प्रकार के
अनुष्ठान से ही समवेति नहीं है, बल्कि इसका समवेति मानव के जीवन से भी सीधे जुड़ा है।
धार्मिक ज्ञानों से जुड़े कर्म को ‘कर्मकाण्ड’ कहते हैं। वह कर्मकाण्ड की स्थूल परिभाषा है।
वस्तुतः मनुष्य अपने दैनिक जीवन में जो भी कर्म करता है, उसका समवेति कर्मकाण्ड से है।
इस इकाई में आप कर्मकाण्ड से समवेति विविध विषयों का अध्ययन करेंगे तथा विशेष रूप से
उसके उद्ध सोत को समझ सकेंगे।

1.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप समझ सकेंगे कि—
1. कर्मकाण्ड क्या है।
2. कर्मकाण्ड का उद्ध सोत क्या है।
3. कर्मकाण्ड का महत्त्व क्या है।
4. कर्मकाण्ड के विविध आयाम
5. कर्मकाण्ड के प्रकार

1.3 कर्मकाण्ड के उद्ध सोत

भारतीय मान्यता के अनुसार वेद सूतिक्रम की प्रथम वाणी है। फलतः भारतीय संस्कृति
का मूल ग्रन्थ वेद सिद्ध होता है। पश्चात्य विचारकों ने ऐतिहासिक दृष्टि अपनाते हुए वेद को विविध का
आदि प्रथम सिद्ध किया। अतः यदि विविव्धसंस्कृति का उद्ध सोत वेद को माना जाय तो कोई अत्युक्ति
नहीं होगी। इस आधार पर कर्मकाण्ड का भी उद्ध सोत मूल रूप से वेद ही है। वेदों में कर्मकाण्ड के
समस्त संस्कृति उपस्थित है। यदि आप उसका अवलोकन करेंगे तो आपको मूल रूप से कर्मकाण्ड का
आदि वर्तमान रूप से प्राप्त होगा।
कर्मकाण्ड का मूलतः समवेति मानव के सभी प्रकार के कर्मों से है, जिनमें धार्मिक ज्ञानों भी
सम्मिलित हैं। स्थूल रूप से धार्मिक ज्ञानों को ही ‘कर्मकाण्ड’ कहते हैं, जिससे पौरोहित्य का
तादाूगंध वाणी है। कर्मकाण्ड के भी दो प्रकार हैं—
1. इष्ट
2. पूर्त
सभी धर्म तीन काण्डों में विभाज्य है—
1. ज्ञान काण्ड,
2. उपासना काण्ड
3. कर्म काण्ड

यज्ञस्वरूपे, अद्वैत और अपूर्व के ऊपर आधारित कर्म को इत्यत कहते हैं। लोक-हितकारी दृष्ट फल वाले कर्मों को पूर्व कहते हैं। इस प्रकार कर्मकाण्ड के अंतर्गत लोक-परलोक-हितकारी सभी कर्मों का समावेश है।

कर्मकाण्ड वेदों के सभी भाष्यकार इस बात से सहमत हैं कि चारों वेदों में प्रधानत: तीन विषयों: कर्मकाण्ड, ज्ञान- काण्ड एवं उपासनाकाण्ड का प्रतिपादन है।

कर्मकाण्ड अर्थात हज़रत वह है जिससे ज्ञान को इस लोक में अभीष्ट फल की प्राप्ति हो और मरने पर यथेष्ठ सूखे रहे। ज्ञानवेद के प्रथम से उन्नतियों अध्याय तक यहों का ही वर्णन है। अंतिम अध्याय(40 वृत्ति) इस वेद का उपसंहार है, जो 'ईशावास्योपनिषद्' कहलाता है।

वेद का अधिकार कर्मकाण्ड और उपासना से परिपूर्ण है, शेष अतिपाद के ज्ञानकाण्ड है।

कर्मकाण्ड किन्तु अधिकारी के लिए है। उपासना और कर्म मध्यम के लिए। कर्म, उपासना और ज्ञान तीनों उत्तम के लिए हैं। पूर्वमीमांसाशास्त्र कर्मकाण्ड का प्रतिपादन है।

इसका नाम 'पूर्वमीमांसा' इस लिए पड़ा कि कर्मकाण्ड मनुष्य का प्रथम धर्म है, ज्ञानकाण्ड का अधिकार उसके उपरांत आता है।

पूर्व आचरणीय कर्मकाण्ड से सम्बन्धित होने के कारण इसे पूर्वमीमांसा कहते हैं। ज्ञानकाण्ड-विषयक मीमांसा का दूसरा पक्ष 'उत्तरमीमांसा' अथवा वेदान्त कहलाता है।

वेद शब्द और उसका लक्ष्यात्मक स्वरूप

शास्त्रिक सिद्ध से विश्वेषण करने पर वेद शब्द की नियुक्ति 'विद-ज्ञाने' धातु से 'यज्ञ' प्रत्यय करने पर होती है। विचारकों ने कहा है कि-जिसके द्वारा धर्मादि पुर्णार्थ-चतुर्थ-सिद्धि के उपाय बलिलये जायं, वह वेद है।

- आचार्य सार्वेक्षण ने वेद के ज्ञात्मक ऐतिहासिक ध्यान में से रखकर लक्षित किया कि-अभिलेखित पदार्थ की प्राप्ति और अनिन्द-परिहार के अलंकरण इन उपायों जो ग्रन्थ बोधिक करता है, वह वेद है। यहाँ यह ध्यात्मक है कि आचार्य सार्वेक्षण वेद के लक्षण में 'अलोकिकमुपायम' वह विशेषण देकर वेदों का यज्ञमूलकता प्रकाशित की है।
- आचार्य लोगाधि भास्कर ने दार्शनिक दृष्टि संबंधी - अपौरुषेय आचार्य को वेद कहा है।
- आचार्य उदयन ने भी कहा है कि-जिसका दृष्ट समूह कहीं उपलब्ध नहीं है और महाजनों अर्थात आतिक लोगों ने वेद के रूप में मानना दी हो, उन आनुपूर्व विश्वास वाक्यों को वेद कहते हैं।
- आपस्तम्भादि सूक्ष्मों ने वेद का स्वरूपावरोधक लक्षण करते हुए कहा है कि- वेद मन्त्र और ब्राह्माणत्मक हैं।
• आचार्यवर्ण भवांगी श्रीराजपाओ जी महाराज ने दार्शनिक एवं यात्रिक दोनों दृष्टियों का समन्वय करते हुए वे का अऊः लक्षण इस प्रकार उपस्थापित किया है।

• उपर्युक्त लक्षणों की विवेचना करने पर यह तथ्य सामने आता है कि - ऐहामुंगिक फलग्राही के अनौचिक उपयोग का निर्देशन करने वाला अपीलरेष विशिष्टानुपूर्वक मन्त्र-ब्रह्मणात्मक शाब्दराशि वेद है।

श्रेण परमग्रामाँ 

मार्ग कर्मण की महान परमाणों में जितने भी आयोजन एवं अनुवदन है उनमें सबसे बड़ी परमाणों में जितने भी आयोजन एवं अनुवदन है उनमें सबसे बड़ी परम्पर्संस्थाएं एवं पर्यावरण है।

संस्थाओं धर्मानुसार व्यक्ति एवं परिवार को और पर्यावरण के माध्यम से समाज को प्रशिक्षित किया जाता है। इस पुष्प-परम्पराओं पर जितनी ही बारीकी से हम ध्यान देते हैं उतना ही अधिक उनका महत्त्व एवं उपयोग विविध होता है। पर्यावरण की चर्चा अन्वय करो, यहाँ तो हम नीड़ा िंदरों को उपयोगिता एवं आवश्यकता पर ठोड़ा प्रकाश डालेंगे।

यो व्यक्तित्व- सतिकर, प्रशिक्षण, चिन्तन, मनन आदि का प्रभाव मनुष्य की मनोभूति पर पड़ता ही है। और उससे व्यक्ति के भावना को विकसित करने में सहायता मिलती ही है और इसीकी उपयोगिता को स्वीकार करते हुए सबर्ख इसका प्रचालन रखे भी जाता है।

• बहुदेव वाद 

सदा भवानी दाहिनी, समुख रहे गणेश। पांच देव रखा करें, ब्रह्मा विष्णु महेश।

(१) ब्रह्मा- भगवान के नाम ब्रह्म चतुसंक हुई शारीर के अन्य अंगों में से नाम की के साथ सूक्त हुई शारीर के अन्य अंगों में से नाम की के साथ सूक्त कार्य का संबंध अधिक है, इसलिए परमात्मा की नाम सृष्टिकार ब्रह्माजी का उत्तन होना विज्ञान मिलता है।

• ब्रह्मा अनौद्य तथा अविभूति प्रकृति का रूप है और उसी से ब्रह्मा की उत्पत्ति होती है। ब्रह्मा जी क्रृष्टि के अनुरूप राजस्क भाव पर अद्वित रूप से कारते हैं।

"अजामेका लोहृतुकल 
कृष्णामा!" (शाद्रश्त स्वपनिष्ट)

िगुणमयी प्रकृतित लोहृतुकल और कृष्णवर्ण है। रजोगुण लोहित, सतोगुण शुकल और तमोगुण
उूgद9भपुूgद9्डरीकिनलयंजगदेकमूलमालोकयिूgद98तकृितनः पुूg्2दषं
अथा/ऊथचअत्
बुिूg29भ
शाूg्द8 मूgद6भ वणूgदठ0न िकया है। आूg20भनायगं िूg2अ्चरणं घननीलम ुूg299ूg्66ोवूgद9भस कौूgद98तुभगदाूg20भबुजशंखचूg2भ8म्
अथा/ऊथचअत्
हूg2भपुूgदूgद9्डरीकिनलयंजगदेकमूलमालोकयिूgद98तकृितनः पुूg्2दषं
अथा/ऊथचअत्
बुिूg29भ
शाूg्द8 मूgद6भ वणूgदठ0न िकया है। आूg20भनायगं िूg2अ्चरणं घननीलम ुूg299ूg्66ोवूgद9भस कौूgद98तुभगदाूg20भबुजशंक
भगवान की सता का छोड़कर कोई भी जीव पृथक नहीं रह सकता, समस्त जीव सूत्र में मणियों की तरह परमात्मा में ही प्राप्त है। सारे जीव मणि है, परमात्मा सारे जीवों में विराजमान सूत्र है। गले में माला की तरह जीव भगवान में ही स्थित है। इसी भाव का बताने के लिए उनके गले में माला है। उक माला की मणियों के बीच में उजवर्तन कोष्ठमणि नित्य शुद्ध बुद्ध मुक्त स्वभाव कूर्त्स्थ चैतन्य है। ज्ञान रूप तथा मुक्त स्वरूप होने से ही कूर्त्स्थरूपी कोष्ठोभ की इतनी ज्योति है। माला की अन्याय मणियाँ जीवांमा और कोष्ठ बूर्स्थ चैतन्य है। यही कोष्ठ और मणि से युक्त माला का भाव है। भगवान के चार हाथ धर्म अर्थ, काम और मोक्ष रूपी चरुर्वर्ग के द्वारदेश रूप में प्रदान करने वाले है। शंक, चक्र,गदा और चतुर्वर्ग अनुसार माला का भाव है। भगवान के चार हाथ धर्म अर्थ, काम और मोक्ष रूपी चतुर्वर्ग के द्वारदेश रूप में प्रदान करने वाले है।

(2) शिव- योग शास्त्र में देवधेव महादेव जी का रूप जो वर्णन किया गया है, वह इस प्रकार है-

पवासीं समानान् स्तुतिमारणायां योग शास्त्रम्।।

पवासीं समानान् स्तुतिमारणायां योग शास्त्रम्।।

(3) दुर्गा- शिव के इस ध्यान में वे चाँदी के पवत के समान कृत्वर्ण तथा चन्द्रकला से भूतिष्ठ है। वे उजवर्तन, प्रसन्नाचितूत को चन्द्रहस्त में परशु, मृग, तर और अभय के धारण करने वाले हैं।

(4) गणेश- शिव के इस ध्यान में वे चाँदी के पवत के समान कृत्वर्ण तथा चन्द्रकला से भूतिष्ठ है। वे उजवर्तन, प्रसन्नाचित्त को चन्द्रहस्त में परशु, मृग, तर और अभय के धारण करने वाले हैं।

(5) गणेश- शिव के इस ध्यान में वे चाँदी के पवत के समान कृत्वर्ण तथा चन्द्रकला से भूतिष्ठ है। वे उजवर्तन, प्रसन्नाचित्त को चन्द्रहस्त में परशु, मृग, तर और अभय के धारण करने वाले हैं।

अभ्यास प्रश्न

1. कर्मकाण्ड के कितने प्रकार है।
1.3.1 कर्मकाण्ड के विविध आयाम

ब्रत और उपवास

भारतीय संस्कृति में, ब्रत, त्योहार, उत्सव, मेले आदि अपना विशेष महत्व रखते हैं। हिंदूओं के ही सबसे अधिक त्योहार मनाये जाते हैं, कारण हिंदू ऋषि-मुनियों ने त्योहारों के रूप में जीवन को सर्वोत्तम और सुन्दर बनाने की योजनाएँ रखीं हैं। प्रत्येक त्योहार, ब्रत, उत्सव मेले आदि का एक गुप्त महत्व है। प्रत्येक के साथ भारतीय संस्कृति जुड़ी हुई है। वे विशेष विचार अथवा उदेश्य को सामने रखकर निश्चित किये गये हैं।

प्रथम विचार तो कृत्यों के परिवर्तन का है। भारतीय संस्कृति में प्रकृति का साहचर्य विशेष महत्व रखता है। प्रत्येक कृत्य के परिवर्तन अपने साथ विशेष निर्देश लाता है, खेती में कुछ स्थान रखता है। कृषि प्रथाओं के कारण प्रत्येक कृत्य-परिवर्तन हांसी-खुशी मनोरंजन के साथ अपना उत्सव रखता है। इन्हीं अवसरों पर त्योहारों का समाचार किया गया है, जो उचित है। गैर भीम दो प्रकार के होते हैं और उदेश्य की दृष्टि से इन्हें दो भागों में विभक्त किया जा सकता है।

प्रथम श्रेणी में वे ब्रत, उत्सव, त्योहार और मेले हैं, जो संस्कृतिक हैं और जिनका उदेश्य भारतीय संस्कृति के मूल तत्त्वों और विचारों की रक्षा करना है। इस वर्ग में हिन्दूओं के सभी बड़े-बड़े त्योहार आ जाते हैं, जैसे- होलिका दृष्टि, दीपावली, बसंत, श्रावण, संक्रांति आदि। संस्कृति की रक्षा इसकी आत्मा है।

दूसरी श्रेणी में वे त्योहार आते हैं, जिन्हें किसी महापुरुष की पूजा समृद्धिमें बनाया गया है। जिस महापुरुष की समृद्धि के ये सूचक हैं, उसके गुणों, लीलाओं, पावन विक्रम, महानताओं को समरण रखने के लिए इनका विचार है। इस श्रेणी में रामनवमी, कृष्णाष्टमी, भीष्म-पंचमी, हनुमान-जयन्ती, नाग पंचमी आदि त्योहार रखे जा सकते हैं।
कर्मकाण्ड एवं मुहूर्त ज्ञान

उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय
वर्तमान में ये लुप्तप्राय होते जा रहे हैं।
जैसे भिन्न-भिन्न मनुष्यों की भ्रमन-भ्रम सूचियाँ होती हैं, तैसे ही हमारे पृथक-पृथक देवताओं की मन्त्र, आरतियों, पूजा पार्श्व कृत्यों की विधियाँ भी पुरूष-पुरूष ही हैं। ये देवी-देवता हमारे भावों के ही मूर्ति रूप हैं। जैसे हनुमान हमारी शारीरिक शक्ति के मूर्ति स्वरूप हैं, शिव कल्याण के मूर्ति रूप हैं, लक्ष्मी आध्यात्मिक बल की मूर्ति रूप है आदि। अपने उद्देश्य के अनुसार जिस देवी-देवता की स्थिति या आरति करते हैं, उसी प्रकार के भावों या विचारों का प्रारूपवाच निरत हमारे मन में होने लगता है।
हम जिन श्रद्धा अथवा विचारों, नाम अथवा गुणों का पुनः-पुनः उच्चारण, ध्यान या निर्दत चितत करते हैं, वे ही हमारी अन्तर्गति उच्चारण ही हमें ध्यान करने का साधन है। मंत्र, पार्श्व हमारा या चेतना उस दिशा चेतना का आवाहन करके उसको मन, वृद्धि और शरीर में ध्यान करते हैं। अतः ये वे उपाय हैं जिनसे सदृश का विकास होता है और विद्यु वृद्धि हो जाती है।
प्राचीन देवता यी जो स्थिति, मंत्र या पार्श्व है, वह स्वरूप होकर आस-पास के वातावरण में कमन करती है। उस भाव की आकृतियों सूची वातावरण में फैल जाती है। हमारा मन और आत्मा उससे पूर्वत: सिक भी हो जाता है। हमारा मन उस कमनों से उस उच्च पार्श्व-स्तर में पहुँचता है, जो उस देवता का भाव-स्तर है, जिसका हम मंत्र जपते हैं, या जिसकी अर्थन करते हैं, पार्श्व हमारा मन उस देवता के समर्पण में आता है। उस मंत्रों से जप बाहर- भीतर एक दी स्थिति उत्पन्न हो जाती है। इस प्रकार मंत्र, जप, पार्श्व, प्रस्तुति या कमनात्मक शक्ति हैं।
दानशीलता
भारतीय संस्कृति परमार्थ और परोपकार को प्रचुर महत्त्व देती है। जब अपनी साधारण आवश्यकताओं की पूर्ति हो जाय, तो लोक-कल्याण के लिए दूसरों की उन्नति के लिए दान देना चाहिए। प्राचीनकाल में ऐसे मित्र: स्वरूप लोक-हित कृषि, मुनि, पार्श्व, पुरोहित, योगी, संधारी होते थे, जो समस्त आयु लोक-हित के लिए दे डालते थे। कुछ विद्याधान, पदन-पासन में वे आयु व्यतीत करते थे। उपदेशा हमारा जनता की शिक्षा, स्वास्थ्य, उद्योग, सहयोग, सुख, सुचित्वा, विवेक, धर्मपरिवर्तना आदि सदृश का बढ़ाना का प्रयत्न किया करते थे। माननीय स्वभाव में जब सततत वेद है, उसी की चिंता वे वे अपने अधिकार दिन व्यतीत करते थे। वे जानी उद्देश्य महामाय अपने आप में जीवित कल्याण की संस्थाएँ थे, वह रूप थे। जब वे जनता की इतनी सेवा करते थे, जो जनता भी अपना कल्याण समझकर इनके बीजोन, विवाद, वस्त्र, स्तनान का पालन-पोषण का प्रावध करती थी।
जैसे लोक-हितकारी संस्थाएँ आज भी सार्वजनिक चन्दन से चलाई जाती है, उसी प्रकार ये कृषि, मुनि, पार्श्व भी दान, पुरुष, भिक्षा आदि द्वारा निर्माण करते थे।
प्राचीन भारतीय ऋषि-मुनियों का इतना उच्च, पवित्र और प्रार्थी इतनी साधारण होती थी कि उनके संबंध में किसी प्रकार के संदेह की कल्याण तक नहीं की जा सकती थी, क्योंकि उन्हें पैसा देकर जनता उसके सदृशयोग के विषय में निश्चित रहती थी। हिसाब जाँचने की आवश्यकता तक न समझती थी। इस प्रकार हमारे पुरोहित, विद्याधान देने वाले पार्श्व, मुनि, कृषि दान-दक्षिणा द्वारा
जनता की सर्वत्रदीर्घ उन्नति का प्रवर्तक किया करते थे। दान द्वारा उनके जीवन की आवश्यकताएँ पूरी करने का विधान उत्पन्न था। जो परमार्थ और लोक- हित जनता की सेवा सहायता में हर्षित हो जाय कि अपने व्यक्तिगत लाभ की बात सोच ही न सके, उसके भरण- पोषण की चिंता जनता को करनी ही चाहिए। इस प्रकार दान देने की परिपारित चली। कालान्तर में उस व्यक्ति को भी दान दिया जाने लगा। जो अर्पण, अंधा, लूह, जीता गया है, अपघात या हर प्रकार से लाचार हो, जीविका उपार्जन धारण करने के लिए अन्य कोई साधन ही शेष नहीं रहता। इस प्रकार दो रूप में दुःसूरों को देने की प्रणाली प्रचलित रही है- १. ऋषि- मुनियों, ब्राह्मणों, पुरोहितों, आचार्यों, संधानि सियों को दी जाने वाली आर्थिक सहायता को नाम रखा गया दान। २. अर्पण, लूह, लूह, कुछ भी कार्य न कर सकने वाले व्यक्तियों को दी जाने वाली सहायता को भिड़खा कहा गया। दान और भिड़खा दोनों का ही तात्पर्य दूसरे की सहायता करना है। पूर्ण, परोपकार सत्कार, लोक- कल्याण सूचक- शान्ति की बुद्धि, सातिकता का उन्नयन तथा समृद्धि की, जनता की सेवा के लिए ही इन दिनों का उपयोग होना चाहिए।

दूसरों को देने का क्या तात्पर्य है। भारतीय दान परमर्श और कुछ उद्धार नहीं देने परमर्श की एक वैज्ञानिक पद्धति है। जो कुछ हम दूसरों को देते हैं, वह हमारी रक्षित पूंजी की तरह जमा हो जाता है। अन्य दान जब रथ मंडों को देना कुछ विशेष महत्व नहीं रखता। कुप्राणों को धन देना व्यवहार है जिसमें पैट भरा हुआ हो, उसे और भोजन कराया जाय, तो वह बीमार पड़ेगा और अपने साथ दाता को भी अधोपगति के लिए बहुत ही उत्साह धर्म- कर्म है। जो, अपनी रोटी दूसरों को बॉन्ट कर खाया है, उसका किसी बात की क्रप्ती नहीं रहती। मृत्यु बड़ी बुरी लगती है, पर मौत से बुरी बात यह है कि कोई व्यक्ति दूसरे का दूसरे का दूसरे देखे, भोजन के अभाव में रोता चिल्लाता या मरता हुआ देखे, और उसकी किसी प्रकार भी सहायता करने में अपने आप को असमर्थ पावे। हिंदू शाखा एक स्वर से कहते हैं कि मनुष्य- जीवन में परोपकार ही सार है हमें जितना भी संभव हो सोदें परोपकार में रहना चाहिए। किन्तु यह दान अभिमान, दम्प, कीर्ति के लिए नहीं, आत्म कल्याण के लिए ही होना चाहिए। मेरे कारण दूसरों का भला हुआ है, वह सोचना उचित नहीं है। दान देने से स्वयं हमारी ही भलाई होती है। हमें संयम का पाठ मिलता है। अपना बदल न देंगे, तो किसी भी भुखारी भुखारी भूखा मर जायेगा। किसी प्रकार उसके भोजन का प्रबंध हो जायेगा। रूह शाखा एक स्वर से कहते हैं कि मनुष्य- जीवन में परोपकार ही सार है हमें जितना भी संभव हो सोदें परोपकार में रहना चाहिए। किन्तु यह दान अभिमान, दम्प, कीर्ति के लिए नहीं, आत्म कल्याण के लिए ही होना चाहिए। मेरे कारण दूसरों का भला हुआ है, यह सोचना उचित नहीं है। दान देने से स्वयं हमारी ही भलाई होती है। हमें संयम का पाठ मिलता है। आप यदि न देंगे, तो कोई भी भावना भावना भूखा मर जायेगा। किसी प्रकार उसके भोजन का प्रबंध हो जायेगा। रूह शाखा एक बदल हो जायेगा। हमारी उपकार भावना कृपण हो जायेगी। दान से हमारी उपकार प्रबंध ही होती है, आत्म का मानसिक उन्नति होती, वह दान देने वाले को भी होती है। दूसरों का उपकार करना मानों एक प्रकार से अपना ही कल्याण करना है। किसी को धोड़ा या पैसा देकर भला हम उसका कितना भला कर सकते हैं? हमारी उदारता का विकास हो जाता है। आनंद- सोते हुए जाता है।
1.4 धर्मसूत्र एवं स्मृति –

जैसा कि नाम से ही विदित है कि धर्मसूत्रों में व्यक्ति के धर्मसम्बन्धी क्रियाकलापों पर विचार किया गया है, किन्तु धर्मसूत्रों में प्रतिपादित धर्म किसी विशेष पूजापद्धति पर आधित्र न होकर समस्त - आचरण व व्यवहार पर विचार करते हुए सम्पूर्ण मानवजीवन का ही नियन्त्रक है। 'धर्म' शब्द का प्रयोग वैदिक संहिताओं तथा उनके परवर्ती साहित्य में प्रचुर मात्रा में होता जा रहा है। यहाँ पर यह अवधेय है कि परवर्ती साहित्य में धर्म शब्द का वह अर्थ दृष्टिगोचर नहीं होता, जो कि वैदिक संहिताओं में उपलब्ध है। संहिताओं में धर्म शब्द विस्तृत अर्थ में प्रयुक्त है। अध्वेद में पृथ्वी के स्वार हारक तत्त्वों की गणना ‘पृथ्वी स्वारयन्ति’ कहकर की गयी है। इसी प्रकार अथवेद* में ‘ताति धर्माणि प्रथमानन्याणम्’ कहकर यही भाव प्रकट किया गया है। इस प्रकार यह धर्म किसी देशविशेष तथा कालविशेष से सम्बन्धित न होकर ऐसे तत्त्वों को प्रकाशित करता है जो समस्त पृथ्वी अथवा उनके निवासियों का धरण करते हैं। वे विनय शास्त्र हैं तथा सभी के लिए, अपरिहार्य हैं। मैथसूलर ने भी धर्म के इस स्वरूप की ओर इन शब्दों में इंगित किया है। इन शब्दों के स्वरूप का ओर इन शब्दों में इंगित किया है। इस प्रकार यह धर्म किसी देशविशेष तथा कालविशेष से सम्बन्धित न होकर ऐसे तत्त्वों को प्रकाशित करता है जो समस्त पृथ्वी अथवा उनके निवासियों का धारण करते हैं। वे विनय शास्त्र हैं तथा सभी के लिए, अपरिहार्य हैं। मैथसूलर ने भी धर्म के इस स्वरूप का ओर इन शब्दों में इंगित किया है। इस प्रकार यह धर्म किसी देशविशेष तथा कालविशेष से सम्बन्धित न होकर ऐसे तत्त्वों को प्रकाशित करता है जो समस्त पृथ्वी अथवा उनके निवासियों का धारण करते हैं। वे विनय शास्त्र हैं तथा सभी के लिए, अपरिहार्य हैं। मैथसूलर ने भी धर्म के इस स्वरूप का ओर इन शब्दों में इंगित किया है। इस प्रकार यह धर्म किसी देशविशेष तथा कालविशेष से सम्बन्धित न होकर ऐसे तत्त्वों को प्रकाशित करता है जो समस्त पृथ्वी अथवा उनके निवासियों का धारण करते हैं। वे विनय शास्त्र हैं तथा सभी के लिए, अपरिहार्य हैं। मैथसूलर ने भी धर्म के इस स्वरूप का ओर इन शब्दों में इंगित किया है। इस प्रकार यह धर्म किसी देशविशेष तथा कालविशेष से सम्बन्धित न होकर ऐसे तत्त्वों को प्रकाशित करता है जो समस्त पृथ्वी अथवा उनके निवासियों का धारण करते हैं। वे विनय शास्त्र हैं तथा सभी के लिए, अपरिहार्य हैं। मैथसूलर ने भी धर्म के इस स्वरूप का ओर इन शब्दों में इंगित किया है। इस प्रकार यह धर्म किसी देशविशेष तथा कालविशेष से सम्बन्धित न होकर ऐसे तत्त्वों को प्रकाशित करता है जो समस्त पृथ्वी अथवा उनके निवासियों का धारण करते हैं। वे विनय शास्त्र हैं तथा सभी के लिए, अपरिहार्य हैं। मैथसूलर ने भी धर्म के इस स्वरूप का ओर इन शब्दों में इंगित किया है।
प्रकार धर्म के लक्षण में शृंखला के साथ स्पष्टता तथा शिष्टाचरण को भी सम्मिलित कर लिया गया।

दर्शनशास्त्र में धर्म का लक्ष्य लोकोक्तक अत्यन्त व्यापक कर दिया गया तथा *सिद्धि परत्क की - एक प्रकार से समस्त मानवजीवन को ही इसके द्वारा नियन्त्रित कर दिया गया।* वेदोक्त दर्शन के उत्कर्ष लक्षण का यही अर्थ है कि समस्त जीवन का, जीवन के प्रत्येक ध्वस्त एवं ध्वस्त का उपयोग ही इस रीति से किया जाए कि जिससे अभ्युदय तथा निषेधयंत्र की सिद्धि हो सके। इसमें ही अपना तथा दृष्टि का क्लयाचरण निहित है। धर्म मानव की शाँक्तियों एवं लक्षण को संकुचित नहीं करता अपितु वह तो मनुष्य में अपरिवक्त प्रकार देखा है जिसके आधार पर मनुष्य अपने लक्ष्य को प्राप्त कर सकता है। अभ्युदय तथा निषेधयंत्र की सिद्धि नामक लक्षण इतना महान है कि इससे बाहर कुछ नहीं हो सके। इसे अनुसार जीवन के संस्कृति में निहित है।

इस प्रकार जीवन के प्रत्येक पक्ष पर धर्म चिराग करता है तथा अपनी व्यवस्था देता है।

धर्ममूर्तियों में विभागम-धर्म, व्यविक्षित आचरण, राजा एवं प्रजा के कर्त्तव्य आदि का विचार है। ये आचरणों का शृंखला के रूप में ही उपलब्ध होते है। श्रीसत्तुत्रों के समान ही, माना जाता है कि प्रत्येक शाखा के धर्मसूत्र भी पृथकः-पृथकः थे। वर्तमान समय में सभी शाखाओं के धर्मसूत्र उपलब्ध नहीं होते। इस अनुवादक का एक कारण यह है कि सभी धार्मिक वाचन में अधिकतम समान है। उसका एक बड़ा भाग कालुक्तवित हो गया। इसका दूसरा कारण यह माना जाता है कि सभी शाखाओं के पृथकः-पृथकः धर्मसूत्रों का संभवतः प्रागैतिहासिक भास्करों के पृथकः - पृथकः धर्मसूत्रों को ही अपना ही लिया गया था। पूर्वीमानों में कुमारलिऩ्थ भी ऐसा ही संकेत दिया है।

आचारों के रीति-रिवाज़ एवं विनिमय आचरण, राजा एवं प्रजा के कर्त्तव्य आदि का विचार है। ये आचरणों का शृंखला के रूप में ही उपलब्ध होते हैं। श्रीसत्तुत्रों के समान ही, माना जाता है कि प्रत्येक शाखा के धर्मसूत्र भी पृथकः-पृथकः थे। वर्तमान समय में सभी शाखाओं के धर्मसूत्र उपलब्ध नहीं होते। इस अनुवादक का एक कारण यह है कि सभी धार्मिक वाचन में अधिकतम समान है। उसका एक बड़ा भाग कालुक्तवित हो गया। इसका दूसरा कारण यह माना जाता है कि सभी शाखाओं के पृथकः-पृथकः धर्मसूत्रों का संभवतः भास्करों के साथ-साथ प्रागैतिहासिक भास्करों के पृथकः - पृथकः धर्मसूत्रों का ही अपना ही लिया गया था। पूर्वीमानों में कुमारलिऩ्थ भी ऐसा ही संकेत दिया है।

आचारों के रीति-रिवाज़ एवं विनिमय आचरण, राजा एवं प्रजा के कर्त्तव्य आदि का विचार है। ये आचरणों का शृंखला के रूप में ही उपलब्ध होते हैं। श्रीसत्तुत्रों के समान ही, माना जाता है कि प्रत्येक शाखा के धर्मसूत्र भी पृथकः-पृथकः थे। वर्तमान समय में सभी शाखाओं के धर्मसूत्र उपलब्ध नहीं होते। इस अनुवादक का एक कारण यह है कि सभी धार्मिक वाचन में अधिकतम समान है। उसका एक बड़ा भाग कालुक्तवित हो गया। इसका दूसरा कारण यह माना जाता है कि सभी शाखाओं के पृथकः-पृथकः धर्मसूत्रों का संभवतः प्रागैतिहासिक भास्करों के साथ-साथ प्रागैतिहासिक भास्करों के पृथकः - पृथकः धर्मसूत्रों का ही अपना ही लिया गया था।
धर्मसूत्रों का महत्व उनके विषयप्रतिपादन के कारण है। सामाजिक व्यवस्था का- आधार वर्णश्रम-व्यवस्था के आधार पर-वर्णश्रम पद्धति है। धर्मसूत्रों में ही विविध विषयों का प्रतिपादन किया गया है। इनमें ब्राह्मण के कर्मों तथा अधिकारों पर पर्याप्त प्रकाश डाला गया है। धर्मसूत्रकार आपस्काल में भी मन से ही आचारपालन पर बल देते हैं। अर्थात् तथा दृष्टि व्यक्ति से परिधान का सर्वथा निषेध किया गया है। वर्णों एवं आश्रमों के कर्मचरण की- दृष्टि से भी धर्मसूत्र पर्याप्त महत्व रखते हैं।

धर्मसूत्रों के कारण तक आश्रमों का महत्व पर्याप्त बढ़ गया था अत:धर्मसूत्रों में एताहिष्यकः पर्याप्त निर्देश दिये गये हैं। सभी आश्रमों का आधार गृहस्थाश्रम है तथा उसका आधार है विवाह। धर्मसूत्रों में विवाह पर पर्याप्त प्रकाश डाला गया है। यहाँ पर यह विशेष है कि अधिक विवाहों में सभी धर्मसूत्रकार ने तो एक क्रम को अपनाया तथा न ही उनकी श्रेणी के तात्पर्य को सभी ने स्वीकार किया। प्रतीतिम विवाह की सर्वत्र निदान की गयी है। विवाहपारस्त परिपत्रों के धार्मिक कृत्य एक - सम्पत्ति दोनोंः-साध करने का विवाह है। धन का समान रूप से अधिकार माना गया है। गृहस्थ के लिए पत्न महापत्न तथा सभी संस्कारों की अवधारणा यहाँ पर प्रतिपादित की गयी है। धर्मसूत्रकार इस बात से भी भक्तिभाव परिचित थे कि मर्यादालंबन से समाज में वर्गसंकरता-उत्पन्न होती है।

धर्मसूत्रकारों ने वर्गसंकर जातियों को भी मान्यता प्रदान करके उनकी सामाजिक स्थिति का निर्धारण कर दिया तथा वर्गव्यवस्था का पालन कराकर वर्गसंकरता को रोकने का दायित्व राजा को सौंप दिया। गोतम धर्मसूत्र में जातिवर्गकर्ता तथा जातिविकार वर्ग विचार का सिद्धांत है। इस प्रकार वर्णश्रम के विविध कर्मों का प्रतिपादन करके इसके साथ पत्न, महापत्न, प्राप्तिक्ष, भक्ति, आदि, विवाह और उनके निर्णय, साती, न्यायकर्ता, अपाराध, दण्ड, ऋण, व्याज, जनम-मृत्युविवाहक अशौच, ऋषिधर्म आदि ऐसे सभी विषयों पर धर्मसूत्रों में- विधार किया है, जिनका जीवन में उपयोग है।

स्मृति

हिन्दू धर्म के उन धर्मप्रथाओं का समूह है जिनकी मान्यता स्मृति से नीची श्रेणी की है और जो मानवों द्वारा उपयुक्त थे। इनमें वेद नहीं आते। स्मृति का शाब्दिक अर्थ है - "याद किया जाया"। व्याख्या द्वारा स्मृति को वेदों से नीचे का दर्जा हासिल है तथापि वे (रामायण, महाभारत, गीता, पुराण) अधिकांश हिन्दूओं द्वारा पढ़ी जाती हैं, क्योंकि वेदों को समझना बहुत कठिन है और स्मृतियों में आसान कहानियाँ और पौराणिक स्तर पर उपलब्ध हैं।

मनु ने स्मृति तथा स्मृति महत्व को समान माना है। गोतम ऋषि ने भी यही कहा है कि "वे दो धर्ममूल तौढ़ियाँ च स्मृतिविशेष। हरदर्शन ने गोतम की व्याख्या करते हुए कहा कि स्मृति से अभिप्रयास है। मनुस्मृति से। परन्तु उनकी यह व्याख्या उचित नहीं प्रतीत होती क्योंकि स्मृति और शीतल इन शब्दों का प्रयोग सीता के रूप में किया है, किसी विशिष्ट स्मृति ग्रन्थ का आलोचना के लिए नहीं। स्मृति अभिप्रयास है वे दोनों की स्मरण शक्ति में पढ़ी उन रूप और परम्पराओं से जिनका उल्लेख काव्यिक साहित्य में नहीं किया गया है तथा शीतल से अभिप्रयास है। उन विद्वानों के व्यवहार तथा आचार में।
उभरते प्रमाणों से। फिर भी आपस्तम्भ ने अपने धर्म-सूत्र के प्रारम्भ में ही कहा है ‘धर्मज्ञान: प्रमाण वेदाद’।

स्मृतियों की रचना वेदों की रचना के बाद लगभग 500 ईसा पूर्व हुआ। छठी शताब्दी ई.पू. के पहले सामाजिक धर्म वेद एवं वैदिक-कालीन व्यवहार तथा परम्पराओं पर आधारित था। आपस्तम्भ धर्म-सूत्र के प्रारम्भ में ही कहा गया है कि इसके नियम सामाजिक धर्म के आधार पर आधारित हैं। समाजवादी धर्म से अभिप्राय है सामाजिक परम्परा से। सब सामाजिक परम्परा का महत्व इसलिए था कि धर्मशास्त्रों की रचना लगभग 1000 ई.पू. के बाद हुई। पीछे शिष्यों की स्मृति में पड़े हुए परम्परागत व्यवहारों का संकल्पन स्मृति प्रमाणों में रूपयों द्वारा किया गया। इसी का मान्यता समाज में इसीलिए स्वीकार की गई होगी कि जो बातें अच्छे तक लिखित नहीं थीं केवल परम्परा में ही उसका स्वरूप जीवित था। अब लिखित रूप में नामकरण अतिक्रमण शिष्यों की स्मृतियों से संकलित इन परम्पराओं के पुतलीकृत स्वरूप का नाम स्मृति रखा गया। पीछे चलकर स्मृति का क्षेत्र व्यापक हुआ। इसकी सीमा में विविध धार्मिक ग्रन्थों—गीता, महाभारत, विष्णुसहस्त्रनाम की भी गणना की जाने लगी। संकल्पनाचर्य ने इन सभी प्रमाणों को स्मृति ही माना है।

स्मृति की भाषा सरल थी, नियम समायुक्त थे तथा नवीन परिस्थितियों का इनमें ध्यान रखा गया था। अत: ये अधिक जनगणना तथा समाज के अनुकूल बने रहे। फिर भी श्रुति की महत्ता इनकी अपेक्षा अत्यधिक स्वीकार की गई। परन्तु पीछे इनके बीच संधि स्थापित करने के लिए वृहस्पति ने कहा कि श्रुति और स्मृति मनुष्य के दो नए हैं। यदि एक को ही महत्ता दी जाय तो आदमी कहा हो जाएगा। अत्र ने तो यहाँ तक कहा कि यदि कोई वेद में पूर्ण पारंपरिक हो स्मृति को गुण की दृष्टि से देखता हो तो इक्किस बार पशु योगी में उसका जन्म होगा। वृहस्पति और अत्र के कथन से इस प्रकार यह स्पष्ट है कि वेद के सामान स्मृति की भी महत्ता अब स्वीकार की गई। पीछे चलकर सामाजिक चलन में श्रुति के ऊपर स्मृति की महत्ता को स्वीकार कर लिया गया जैसे दत्त पुरूष का परम्परा का वेदों में जहाँ विरोध है वहीं स्मृतियों में इसी स्वीकृति दी गई है। इसी प्रकार पञ्चमहायज्ञ श्रुतियों के रचना कार की अपेक्षा स्मृतियों के रचना कार में व्यापक हो गया। वेदों के अनुसार इंद्राजात में, अतिथियों के आने पर, पूर्णिमा के दिन छात्रों को स्वाध्याय कराना चाहिए क्योंकि इन दिनों में सर्व पार करने की मनाही थी। परन्तु स्मृतियों ने इन दिनों स्वाध्याय को भी बना कर दिया। शुरू के समान्य में श्रुति का यह स्पष्ट निर्णय है कि वे मौख नहीं प्राप्त कर सकते हैं परन्तु उपनिषदों ने श्रुतों के ऊपर से यह बन्धन हटा दिया एवं उनके मौख प्राप्त की मान्यता स्वीकार कर ली गई। ये सभी तत्व सिद्ध करते हैं कि श्रुति की निर्धारित परम्पराओं पर स्मृतियों की विरोधी परम्पराओं को पीछे सामाजिक मान्यता प्राप्त हो गई। स्मृतियों का इस महत्ता का कारण बताते हुए मारीचि ने कहा है कि स्मृतियों के जो वचन निरस्त या श्रुति विरोधी नहीं हैं वे श्रुति के ही प्राप्त हैं। वेद वचन रहस्यम तथा बिखरे हैं जिन्हें सुविधा में स्मृतियों में स्पष्ट किया गया है। स्मृति वायु परम्पराओं पर आधारित हैं अत: इनके लिए वैदिक प्रमाण की आवश्यकता नहीं है। इनकी वेदगत प्रामाणिकता
वैदिक भाषा जनमानस को अधिक दुर्घट प्रगति होने लगी थी, जबकि स्मृतियाँ लोकिक संस्कृत में लिखी गई थीं जिसे समाज सरलता से सम्बन्ध सक्ता था तथा वे समाजिक व्यवस्था के अनुसार सिद्धांतितिपादित करती थी। स्मृति लेखकों को भी वैदिक महत्वों की तरह समाज ने गार्मा प्रदान की थी। वैदिक और स्मृति काल के बीच व्यवहारों तथा परिच्छेदों के बदलने से एवं विभिन्न आधिकारिक कारणों और नवीन विचारों के समागम से स्मृति की श्रद्धा की अपेक्षा प्राथमिकता मिली। इसका कारण यह भी बताया जा सकता है कि समाजशास्त्रीय मानवता के पक्ष में था। इन सब कारणों से श्रद्धा की मान्यता को स्मृतियों की मान्यता के सम्पूर्ण ५०० ईसा पूर्व से महत्वहीन समझा जाने लगा।

देव पूजा का विधान

भारतीय संस्कृति देव- पूजा में विधान करती है। 'देव' शब्द का स्मृति अर्थ है - देने वाला, जानी, विद्वान आदि श्रेष्ठ व्यक्ति। देवता हमसे दूर नहीं हैं, बल्कि पास ही हैं। वैदिक धर्मग्रन्थों में जिन तैतीस करोड़ देवताओं का वर्णन किया गया हैं, वे वास्तव में देव -- शक्तियाँ हैं। ये ही गुप्त रूप से संसार में नाना प्रकार के परीक्षण, उपाय, उत्कृष्ट उपाय करती रहती है।

हमारे यहाँ कहा गया है कि देवता ३३ गुण के हैं, पिताए आदि प्रकार के हैं, असुर ६६ गुण के, गन्धर्व २७ गुण के, वन ४६ गुण के बताए गए हैं। इन भिन्न भिन्न शक्तियों को देखने से हमें इस सरल और सामूहिक पृथ्वी से जनता को अपने जीवन को ऊँचाई करता है। देवता एक गुण का ही मूर्ति है देव- पूजा एक प्रकार से सदृश उत्साहों और उन्नति के गुण तथ्य का प्रतीक है। जीवन में धारण करने योग्य उत्साहों और उन्नति के गुण तथ्य का प्रतीक है। जीवन में धारण करने योग्य उत्साहों का देवता का रूप देकर समाज का कार्य उनकी ओर आकृति किया गया। गुणों का मूर्ति स्वरूप प्रदान कर भिन्न- भिन्न देवताओं का निर्माण हुआ है। इस सरल प्रतीक पद्धति से जनता को अपने जीवन को ऊँचाई की ओर ले जाने का अच्छा अवसर प्राप्त हुआ।

शिखा का महत्व

भारतीय संस्कृति में शिखा हिन्दुत्व की प्रतीक है कारण इसे धारण करने में अनेक शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक लाभ है। शिखा- स्थान मर्यादा की नाम्मी है, इस केंद्र से उस स्वूक्ष्म तंतुओं का संचालन होता है, जिसका प्रसार समस्त मर्यादा में हो रहा है और इसके बल पर अनेक मानसिक शक्तियों का पोषण और विकास होता है। इस केंद्र स्थान से विकेव दृढ़ता, दूरदर्शिता, प्रेम शक्ति और संतुष्टि शक्तियों का विकास होता है। इसे भिन्न स्थान पर केंद्र रखने से सुधार हो जाती है। बालों में बाहरी प्रभाव को रोकने की शक्ति है। शिखा स्थान पर बाल रहने से अनावश्यक सदृश- गर्मी का प्रभाव नहीं पड़ता। उसकी सुधार सदा बनी रहती है।
शिखा से मानसिक शक्तियों का पोषण होता है। जब बाल नहीं काटे जाते, तो नियत सीमा पर पहुँच कर उनका बढ़ता बदल हो जाता है। जब बढ़ता बदल हो आया तो केशों की जड़ों को बाल बदलने के लिए रक्त लेकर खराब करने की आवश्यकता नहीं पड़ती। बचा हुआ रक्त उन पाँच शक्तियों का पोषण करता है, जिससे उनका पोषण और विकास अच्छी तरह होता है। इससे मनुष्य विवेकशील, दृढ़ स्वभाव, दृढ़दशा, त्रयों से समान बनता है। वासना को वहाँ में रखने का एक उपाय शिखा रखना है। बाल कटने से जड़ों में एक प्रकार की हलचल मचती है। यह खुजली मस्तिष्क से समबद्ध वासना तनुओं में उतर जाती है। फलस्वरूप वासना भड़कती है। इस अनिष्ट से परिचित होने के कारण ऋषि-मुनि केश रखते हैं और उत्सजना से बचते हैं।

बालों में एक प्रकार का तेज होता है। शिखा लम्बे बाल रखती हैं, तो उनकी तेजस्विता बढ़ जाती है। पूर्व काल में महापुष्प बाल रखते थे, और वे तेजस्वी होते थे। शिखा स्थान पर बाल रखने से विशेष रूप से तेजस्विता बढ़ती है। शिखा स्पर्श से शक्ति का संचार होता है। यह शक्ति का प्रतिनिधित्व करती है। प्रत्येक शक्ति का जनन है कि चाणक्य ने शिखा को हाथ में लेकर अर्थात दुगा को साथी बना कर नन्द वंश के नाश की प्रतिज्ञा की थी और वह अंतः पूरी हुई थी। शक्ति रूपी शिखा को श्रद्धापूर्वक धारण करने से मनुष्य शक्तिसम्पन्न बनता है। हिंदू धर्म, हिंदू राज्य, हिंदू संस्कृति, की ध्यज्ञा इस शिखा को धारण करना एक प्रकार से हिंदुत्व का गौरव है। शिखा के निचले प्रदेश में आत्मा का निवास थियों ने माना है। इस प्रकार इस स्थान पर शिखा रूपी मंदिर बनाए ईश्वर धर्म में सहायक होता है। मनुष्य के शरीर पर जो बाल हैं, वे भी छिड़ गुक हैं। अगाऊन के स्थान पर शिखा खाक से जड़ घुंट जाता है। उसका शिखा रखने का एक उपाय है। इसका नाय के बाल रखने से नवम्बर की बृद्धि होती है और बृद्धि आती है। संक्षेप हृदय के साथ शिखा की ध्यज्ञा रहती है। शिखा के पाँच शिखा रूपों के पोषण करने के अलावा आकाश से प्राण बाल खुचते हैं। बाल कटाने से जड़ घुंट जाती है। इसका कारण यह है कि रूपी शिखा को हाथ में लेकर अथाूँ दुगा को साथी बना कर नन्द वंश के नाश की प्रतिज्ञा की थी और वह अंतः पूरी हुई थी। शक्ति रूपी शिखा को श्रद्धापूर्वक धारण करने से मनुष्य शक्तिसम्पन्न बनता है। हिंदू धर्म, हिंदू राज्य, हिंदू संस्कृति, की ध्यज्ञा इस शिखा को धारण करना एक प्रकार से हिंदुत्व का गौरव है। शिखा के निचले प्रदेश में आत्मा का निवास थियों ने माना है। इस प्रकार इस स्थान पर शिखा रूपी मंदिर बनाए ईश्वर धर्म में सहायक होता है। मनुष्य के शरीर पर जो बाल हैं, वे भी छिड़ गुक हैं। अगाऊन के स्थान पर शिखा खाक से जड़ घुंट जाता है। उसका शिखा रखने का एक उपाय है। इसका नाय के बाल रखने से नवम्बर की बृद्धि होती है और बृद्धि आती है। संक्षेप हृदय के साथ शिखा की ध्यज्ञा रहती है। शिखा के पाँच शिखा रूपों के पोषण करने के अलावा आकाश से प्राण बाल खुचते हैं। बाल कटाने से जड़ घुंट जाती है। इसका कारण यह है कि रूपी शिखा को हाथ में लेकर अथाूँ दुगा को साथी बना कर नन्द वंश के नाश की प्रतिज्ञा की थी और वह अंतः पूरी हुई थी। शक्ति रूपी शिखा को श्रद्धापूर्वक धारण करने से मनुष्य शक्तिसम्पन्न बनता है। हिंदू धर्म, हिंदू राज्य, हिंदू संस्कृति, की ध्यज्ञा इस शिखा को धारण करना एक प्रकार से हिंदुत्व का गौरव है।
भारतीय संस्कृति में प्रतीकवाद का महत्वपूर्ण स्थान है। सबके लिए सरल सीधी पूजा- पद्धति को आवश्यक करने का श्रेय भारत को ही प्राप्त है। पूजा- पद्धति की उपयोगिता और सरलता की दृष्टि से हिन्दू धर्म की तुलना अनुप्रयोगों से नहीं हो सकती। हिन्दू धर्म में ऐसे वैज्ञानिक मूलभूत सिद्धांत दिखाई देते हैं, जिनसे हिन्दूओं का कुशाक्रुद विचार और मनोविज्ञान की अपूर्व कानूनी तत्त्व से चलता है। मूर्ति- पूजा ऐसी ही प्रतीक पद्धति है।

मूर्ति- पूजा क्या है? परंतु, गीती, धातु या चित्र इत्यादि की प्रतिमा को मध्यस्थ बनाकर हम सर्वानुकूल अनन्त शक्तियों और गुणों से समपन परमेश्वर को अपने समुच्छ उपस्थित देखते हैं। निराकार ब्रह्म का मानस चित्र निर्माण करना कठसाध्य है। बड़े योगी, विवेकानन्द, तत्क्रिया सम्भव है जो कठिन कार्य कर दिखाते हैं, किन्तु साधारण जन के लिए तो यह निर्दिष्ट असंभव है। भावुक भक्तों, विवेकजनित नारी उपासनाओं के लिए किसी प्रकार की मूर्ति का आधार रहने से उपासना में बड़ी सहायता मिलती है। मानस चित्रन और एकांकता की सृष्टि का ध्यान में रखने हुए प्रतीक रूप में मूर्ति- पूजा की योजना बनी है। साधक अपनी प्रतीक के पूजा की नीति चुन लेता है और साधना अनुष्ठान अनुष्ठान पूजा का आधार रहता है। तत्त्व के जन्तु से समस्त अनुभव होता है तथा परमगुण मूर्ति- पूजा के लिए प्रतीक से समझना असंभव होता है। भावुक भक्तों का यह कथन सत्य है कि इस प्रकार की मूर्ति- पूजा में भावना प्रतीक की प्रतीक के सूची अभावी है। तो भी प्रतीक को ही है यह श्रेय देना पड़ता है कि यह भगवान की भावना का उत्तरक्रृत और संचालित विशेष रूप से हमारे अनुरक्षण में करती है। योगी चाहें, तो चाहें जब जहाँ भगवान को सम्पूर्ण कर सकता है, पर मनिर्देश के प्रभु- प्रतीक के समुच्छ अनुप्रयोग ही जो आंदोलन प्राप्त होता है, वह बिना मनिर्देश में जाते, चाहें, जब कठिनता से ही प्राप्त होता हैं। गंगा- तत्पर वैदिक श्रद्धालू से चाहें जब किसी को या मन को अधारभूत करके परमेश्वर का अध्ययन कर
रहे होते हैं क्योंकि वे जड़ नहीं हैं? परमात्मा भी जड़ प्रकृति के बिना कुछ नहीं कर सकता, सृष्टि भी नहीं रच सकता। तब सिद्ध हुआ कि जड़ और चेतन का परस्पर संबंध है। तब परमात्मा भी किसी मूर्ति के बिना उपास्य केसे हो सकता है?

हमारे यहाँ मूर्तियों मन्दिरों में स्थापित हैं, जिनमें भावुक जिज्ञासु पूजन, वन्दन अर्चन के लिए जाते हैं और इंद्र की मूर्तियाँ पर चित्र एकाक्ष करते हैं। घर में परिवार की नाना चिन्ताओं से भरे रहने के कारण पूजा, अर्चन, ध्यान इत्यादि इतनी तरह नहीं हो पाता, जितना मन्दिर के प्रशान्त स्वच्छ वातावरण में हो सकता है। अतः वातावरण का प्रभाव हमारी उत्तम वृत्तियों को शक्तिशाली बनाने वाला है। मन्दिर के सातीत्व वातावरण में क्रुद्धवृत्तियों स्वयं फीकी पड़ जाती है। इसलिए हिंदू संस्कृति में मन्दिर की स्थापना को बड़ा महत्व दिया गया है।

कुछ व्यक्ति कहते हैं कि मन्दिरों में अनाचार होते हैं। उनकी संख्या विदेशी प्रतिविदेशी बढ़ती जाती है। उन पर बहुत व्यक्ति हो रहा है। तब उन्हें समाप्त कर देना चाहिए। सम्भव है इनमें से कुछ आंशिक सत्य हों, किन्तु मन्दिरों को समाप्त कर देने या सरकार द्वारा जन्म कर लेने मात्र से पुरूष अनाचार दूर हो जायेगा? यदि किसी अंडा में कोई विधान आ जाय, तो क्या उसे जड़मूल से नष्ट कर देना उचित है?

कदाचित नहीं। उसमें उचित परिष्कार और सुधार करना चाहिए। इसी बात की आवश्यकता आज हमारे मन्दिरों में है। मन्दिर स्वेच्छा नैतिक शिक्षण के केन्द्र रहे। उनमें पढ़ा-लिखा निर्मूह पुजारी रखे जायें, जो मूर्ति-पूजा करने के साथ-साथ जनता को ज्ञान-ग्रन्थों, आचार शास्त्रों, नीति, ज्ञान का शिक्षण भी दे और जिनका चरित्र जनता के लिए आदर्श रूप हो।

1.5 सारांश -
इस इकाई का अध्ययन करने के बाद आप कर्मकाण्ड का मूल सोत क्या है। कर्मकाण्ड के विविध रूप, उनके प्रकार, मूर्तिपूजा, सन्ध्या वन्दन, दानशीलता, देवपूजन का विधान, शिक्षा का महत्व आदि का ज्ञान आप इस इकाई में करेंगे। कर्मकाण्ड के अन्य उपयुक्त विषय समानार्थ है, जिसका ज्ञान परमात्मा का आचार सम्बन्धित है। इस दृष्टिकोण से आपको इस इकाई के माध्यम से इन विषयों का ज्ञान कराया जा रहा है।

1.6 शब्दावली
कर्मकाण्ड - धार्मिक क्रियाओं से जुड़े कर्म को कर्मकाण्ड कहते है।
वेद - सूत्रविद्या का मूल
पूजन - धार्मिक क्रिया
दानशीलता - दान में निपुणता
मूर्तिपूजा- मूर्तियों की पूजा
सन्ध्या - गायत्री उपासना सम्बन्धित कार्य।

उत्तराखंड मुक्त विश्वविद्यालय 19
1.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर –

1. क
2. क
3. ख
4. ख
5. ख

1.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

<table>
<thead>
<tr>
<th>प्राप्त नाम</th>
<th>प्रकाशन</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>नित्यकर्म पूजाप्रकाश</td>
<td>गीताप्रेस गोरखपुर</td>
</tr>
<tr>
<td>भारतीय संस्कृति के आधारभूत तत्त्व</td>
<td>कर्मकाण्ड प्रदीप</td>
</tr>
</tbody>
</table>

1.9 निबन्धात्मक प्रश्न

1- कर्मकाण्ड को परिभाषित करते हुये विस्तार से उसका वर्णन कीजिये ?
2- मूर्तिपूजा एवं देवपूजन विधान से आप क्या समझते हैं ? विस्तृत व्याख्या कीजिये |
3- धर्मसूत्र एवं स्मृति का विस्तार से उल्लेख कीजिये |
इकाई की रूपरेखा

2.1 प्रस्तावना
2.2 उद्देश्य
2.3. प्रातःकालीन नित्यकर्म परिचय
   अभ्यास प्रश्न
2.3.1 कृत्य नित्यकर्म
2.3.2 भगवत स्मरण
2.4 सारांश
2.5 शब्दावली
2.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
2.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
2.8 निबन्धात्मक प्रश्न
2.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई प्रथम खण्ड के द्वितीय इकाई ‘प्रातःकालीन नित्यकर्म विधि’ नामक शैर्षक से संबंधित है। मानव अपने दैनिक जीवन में क्या – क्या करना हो, जिससे कि उसका सर्वोत्तम विकास हो इसके लिये आचार्य ने नित्यकर्म विधि की विधि बतती है। यदि व्यक्ति उसका क्रमण: पालन करें तो निश्चय ही उसका सर्वोत्तम विकास कल्याण होगा।

प्रतिदिन किया जानेवाला कर्म ‘नित्यकर्म’ कहलाता है। इसके अनुसार एक प्रातःकाल से दूसरे प्रातःकाल तक शाखों की रीति से, दिन-रात के अहस्यों के आठ यामों कृत्यों यथा: ब्राह्म मुहूर्त में निद्रात्मक, देव, द्वितीय और रूपिक स्मरण, शौचालय से निवृत्ति, वेदाम्य, वृज, भोजन, अध्ययन, लोककर्म आदि करना चाहिए।

इस इकाई में आप प्रातःकालीन नित्यकर्म विधि का विधिवत् अध्ययन करेंगे तथा तत्सम्बन्धित अनेक विषयों से परिचित हो सकेंगे।

2.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप जान सकेंगे कि –

1. प्रातःकालीन नित्य कर्म को जान सकेंगे।
2. नित्यकर्म किया की विधि को समझ सकेंगे।
3. नित्यकर्म से जुड़ी अनेक बातें को जान पाएंगे।
4. नित्यकर्म के महत्व को समझ सकेंगे।
5. नित्यकर्म को परिभाषित करने हेतु उसकी मीमांसा कर सकेंगे।

2.3 प्रातःकालीन नित्यकर्म का परिचय

मीमांसकों ने द्विविध कर्म कहें हैं - अर्थकर्म और गुणकर्म। इनमें अर्थ कर्म के तीन भेद हैं - नित्यकर्म, नैमित्तिक कर्म और कामयक्षम। गृहस्थों के लिए इन तीनों को करने का निर्देश है। इनमें प्रथम कर्म नित्यकर्म है जिसके अंतर्गत पंचल्यादि आते हैं। अभिव्यक्ति आदि ब्राह्मणों के नित्यकर्म हैं।

इन्हें करने से मनुष्य के विशेष दिन के पापों का क्षय होता है। जो इस विशेष को नहीं निवाहता वह शास्त्र के अनुसार पाप का भांगे होकर पत्तन और निधियों जाता है।

जगपति जायते शूद्रः। संस्काराद् द्वितीय उच्चते। - महर्षि मनु

महर्षि मनु महाराज का कथन है कि मनुष्य शूद्र के रूप में उत्पन्न होता है तथा संस्कार से ही द्वितीय बनता है। संस्कार हमारे चित्त पर पड़ी वे शुभ व दिव्य हैं, जो हमें अशुभ की ओर जाने से रोकती है।

उत्तराखण्ड मुक्ति विश्वविद्यालय 22


नित्य क्रियाकलाप

मनुष्य के दैनिक जीवन में क्रिया क्रियाकलाप का निर्मलिखित उल्लेख आपके अध्ययनार्थ प्रस्तुत है।

नित्य क्रिया में मुख्य छः कर्म बनाए गये हैं;

- सन्ध्या स्नान, जप, देवपूजन, अतिथि सत्कार।

वैष्णव तथा मार्त्यस्तिथ्य पद क्रियापत्र दिने दिने।

मनुष्य को शारीरिक शुद्धि के लिए स्नान, संध्या, जप, देवपूजन, बलिवेध्वेद और अतिथि सत्कार - ये छः कर्म प्रतिदिन करने चाहिए। हमारी दिनचर्या निर्मित है। प्रात: काल जगरण से लेकर शनिवार तक की समस्त क्रियाओं के लिए शाखाकार्यों ने अपने विशेषकालीन अनुभव से ऐसे नियमों का निर्माण किया है जिनका अनुसरण करके मनुष्य अपने जीवन को सफल कर सकता है। नियमित क्रियाओं के ठीक रहने पर ही आत्मनिर्भर एवं मन स्वस्थ रहता है।

उपात्मकालीन दैनिक कर्मचय

“प्रथम सदा-10 बजे शनिवार और शनि के अन्तिम प्रहर अर्थात् 4 बजे उठकर सर्वप्रथम हृदय में परमेश्वर का चिनन करके, धर्म और अर्थ का विचार किया करें। धर्म और अर्थ के लिए अनुश्रुणा वा उद्योग करने में यदि कभी भी पीड़ा हो तो भी धर्मजुक्त पुस्तार्थ को कभी न छोड़ें। सदा शांत और आत्मा की रक्षा के लिए युक्त आहारविहार-, औषधसेवन, सुपूज्य आदि से निरंतर उद्योग करके
व्यावहारिक और पारमार्थिक कर्तव्य कर्म की सिद्धि के लिए ईश्वर की स्तुति प्रार्थना और उपासना भी किया करें ताकि उस परमेश्वर की कृपादृष्टि और सहाय से महाकृत्तिन कार्य भी सुगमता से सिद्ध हो सकें। इसके लिए निम्नान्तिक वैदिक मंत्र हैं- 

प्रात: कालीन जागरण मन्त्र -

ॐ प्रतरमिन्त्र प्रतिनिध्रु हवमहे प्रतार्मावरणा प्रतार्षिना।
प्रतार्थं पूर्ण ब्रह्मसम्पति प्रातस्योमुरु हुवेम ॥

अर्थ -हे स्त्री पुरुषोऽभ्रमत्ता (प्रात) जैसे हम विद्वान उपदेशक लोग ! वेला में (अभ्रम) परमेश्वर के (इन्द्र) (प्रात) स्वप्रकाशस्वप्न दाता और परमेश्वर्युक्त (प्रात) प्राण (मित्रावस्था), उदान के समान प्रिय और सर्वस्वकिर्मान् सूर्य (अशिवाना) (प्रात), चन्द्र को जिससे उपवन किया है, उस परमात्मा की स्तुति करते हैं (हवमहे); और (प्रात:) (भगम्:भजनीय सेवनीय (, ऐश्वयुक्त पुष्टिकाली (पूषण) (बहृणस्पतिमुल्यने ( (उपासक, वेद और ब्रह्माण्ड के पालन करने वाले वाले, (प्रात:अन्तःस्थ (सोमम्) (, प्रेक्षा रूढ़) और (उत्र)रंपणियों क (े नाशक और सर्वोद्घनाशक जगदीशव की स्तुति (हुवेम), करते हैं, इसी प्रात समय में :ईश्वर का स्वर्ण करना चाहिए ॥

ॐ प्रातःलिंग भगमुः हुवेम यव पुनमहतेत्यारी दिन्धत।

आधिपथिदयं मन्यमनस्तुरसिद्धाग्य चिदवयं भगं भक्तियां।

अर्थ -हे स्त्री पुरुषोऽभ्रमत्ता (प्रात) -श्रेष्ठ यहे ऐश्वय के (भगम) जयशील (जितम) दाता (उग्रम) (अदिते) तेजस्वी अन्तःक्रिय के (पुष्रं) पुनरुप सूर्य की उत्पत्ति करने वाले और जै (य) (विष्णु) कि सूर्यादि लोकों का विशेष कर्के धारण करने वाले हैसब और से (आध) (यं चित्र) धारणकर्तासभी को जानने (अन्यवमा)वलेदुभि न (तुर्षित) ते भी दण्ड-दाता; और भी (चित्र) भजनीयस्वप्न को (भगम) जिस (यं) सबका प्रकाशक है (राजा) (भक्तिनियय प्रकाश सेवन करता हूँ और इसी प्रकार भग (वाचु परमेश्वर सबको (आह (उपदेश करता है कि में सूर्यादि जगत् को बनाने और धारण करने वाला हूँ, अत: मेरी उपासना किया करो और मेरी आजा से चला करो, इसी कारण (वयमहम लो (गों) को उनकी स्तुति कर (हुवेम) नी चाहिये ।

ॐ भग प्रणेतरभंग सत्यारयो भगेमा धियमुदवा ददन्न।

भग प्रणें जनय गोमिश्रवंशजै प्रणेतरसुव्यमुःपुरुषम् ॥

अर्थसवके उपादक (प्रणेत) भजनीयस्वप्न (भग) है -, सत्याचार में प्रेक्ष (भग ऐश्वयः (सत्याचारन करने (भग) सत्य धन को देने हारे (सत्यारय) हारो को ऐश्वय देने वाले आप
कर्मकाण्ड एवं मुहूर्त ज्ञान

परमेश्वर (धिमु) इस (इम्म) हमको (न) ! प्रजान को दीजिये और उसके दान से (ददत) रक्षा कीजिये। हे (उदवा) हमारी (भगवधोढ़े आदि) (अश्व) गाय आदि और (ङोभ) आप (उत्तम पशुओं के योग से राज्यश्री को) (भग) प्रगट कीजिये। हे (प्रजनय) हमारे लिये (न) हे भजनीय स्वरूप परमात्मा नूम (आपकी कृपा से हम लोग नित्तम मनुष्यों से (: नूल्त (:से भी उत्तम मनुष्य हो (प्रयम))।

ऊँ उददानो भगवन्तस्यामोत प्रिति उत मद्ये अहनाम्।

उसां दिता मधवन्तसुरुवंद्यं वां देवाणां सुमतौ स्याम्।।

अर्थ- हे भगवान् और अपने पुरुषार्थ से हम लोग (उत) आप की कृपा (इदानीमु) (और (उत) उत्तमता की प्राप्ति में प्रकरणता (प) पिते) समय (अहनाम इन दिनों के (अस्वर्यायु और (अस्वर्य) मद्य में (मद्ये) भक्तिमान् और हे (उत) होते (स्याम) परम पुजित असंक्षेप धन देने (मधवन) हारे उदय में (उददिता) सूर्यलोक के (सूर्यस्त) ! पूर्ण विदु (देवानादु) वान धार्मिक आप्त लोगों की और (उत) अच्छी उत्तम प्रजा (सुमतौ) सुमिति में (वयस्मह) (लोग सदा प्रवृत्त रहें)। (स्याम)

ऊँ भग वंह भगवण् अस्तु देवास्तेन वंह भगवन्तस्याम्।

तं लव भग वर्य इजज्मोहविताः स नो भग पुर एता भवे ॥

अर्थ-आपकी (लवा) उस (तम) जिससे ! सकलेश्वरसम्पन्न जगदधश्वर (भग) हे - (सरसव : सो आप (:स) विश्राप करके प्रशंसा करते हैं (इजजोहविति) सजजन, हे ! ऐश्वर्येण (भग) पुर) हमारे गूढ़श्रम में (न) इस संसार और (इह) एताछ्रागमी और आगे सक्रमों में (भग एव) हृजिये और (भव) बहाने हारे सम्पूर्ण ऐश्वर्य युक्त और समस्त ऐश्वर्य के दाता होने के आप ही हमारे (भगवान् देव) उसी हेतु से (तेन) हृजिये। (अस्तु) पूजनीय देव (हम (वयस्म विद्वान लोग सकलेश्वर सम्पन्न होके सब संसार के उपकार में (भगवत) तन, मन, धन से प्रवृत्त हो (स्याम)।

इस प्रकार परमेश्वर की स्तुति, प्रार्थना और उपसना करनी चाहिए। तप्यशालात् शौच, दन्तधावन, मातिश व्यायाम आदि स्नान करके स्नान करें। पश्यशालात् एक कोश या डेढ़ कोश एकान्त जंगल में जाके योग्याव्यास की रैंति से परमेश्वर की उपसना कर, सृष्टीदय पर्यंत अथवा घडी आध घडी दिन चढ़े तक घर पर आकर सन्ध्योपासनादि नित्यकमं यथाविधि उचित समय में किया करना चाहिए।

2.3.2 भगवत स्मरण

श्री गणेश स्तुति:

गणानं भूत गणाधिस्थितं कतिपय जम्मुफल चारु भक्षणम्।
उमा मुंत शोक विनाश कारकं नवामि विनेश्वर पाद पंकजम्।।

उत्तराखंड मुद्रित विश्वविद्यालय 25
शिव स्तुति:
कर्मकाण्ड एवं महूर्त्त्ज्ञान

शांति कारं भुजगशयनं पूनमानं सुरेशहम्। िवू्09ाधारं गगनसू्20शं मेघवणूदठ0शुभांगम्।।

जूगद98म मरण , भय का नाश करने वाला है ऐसे लू22भमीपित , कमलनेूूद्णु भगवान को मेरा 

श्री कृपण स्तुति:
श्री कृपण गोविन्द हे मुरोर, हे नाथ नारायण वासुदेव। हे मुरोर मधु कैटभारे, निराश्रथं माँ जगदीश 

लक्ष्मीकारं कमलनचं योगिभिध्रायनमस्य। वदे विषुं भवमयहं सर्वलोककनाथमू॥

जिज्ञकी आकृति अतिशय शांत है, जो शेषनाग कू2्6 शैया पर शयन िकये हूद6ठ। िजसकू2्6 नािभ 

श्री दुर्गा स्तुति:
धर्माः सर्वसाध्यमं किं मािमां नारायणाम साक्षी। दुर्गा श्रमांशमं किं मािमां नारायणाम साक्षी। दुर्गा श्रमांशमं किं मािमां नारायणाम साक्षी। दुर्गा श्रमांशमं किं मािमां नारायणाम साक्षी।

सरस्वती स्तुति:
या कुदने-नुमाराहराधवला या शुभ्रव्यावृता या वीणाचरणांमणिदतकरा या- श्रेष्ठप्रवासन। या

उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय
कर्मकाण्ड एवं महूर्त ज्ञान

ब्रह्मचर्यविरोधप्रभुतिमिथिवेने, सदा बनिता। सा मां पातु सरस्वती भगवती निशेष जाध्यपाह।

हनुमान स्तुति:

मनोजवं मातवेंग-तुल्य-, जितेन्द्रिय बुद्धिमाता वरिष्ठम् वातात्मजं वानरस्वथुमुखं, श्री रामदूतं शरणं प्रपधो।

गुरु बन्दना

गुरुभा गुरविष्णुसाकारं परं ब्राह्म:। गुरुभावेनो महेश्वर: तस्मे श्रीगुरुन्म नम:।।

कसुरी तिलकम लताद परले चक्षुस्थले कौटुभम् तासाणे वर्मोकिकम् करतले वेणुके करकणम्।!

सचिवें हरि चन्दनम सुलिलितं कंठे व मुनिवली। गोपितों। श्री परिवेशिष्ट: विजवते गोपाल चुड़ामणि। अत्युं केशवम गोपिनारा बल्भम। कृणन दामोदरम जानकी नायकम्।।

अभ्यास प्रश्न

1. नित्यकः में कृतार्थ मुख्य रूप से शास्त्रो में कितने कर्मों का विवेचन किया गया है।
   क. 2   ख. 3   ग. 6   घ. 5

2. संस्कारों की संख्या कितनी है।
   क. 13   ख. 14   ग. 15   घ. 16

3. सूर्योदय से चार घटी पूर्ण को कहते है।
   क. मध्याह्न   ख. दिवा मुहूर्त   ग. ब्राह्म मुहूर्त   घ. कोई नहीं

4. आचारो परमो ............।
   क. धर्म:   ख. कर्म:   ग. वश:   घ. मोक्ष:

5. या कुदने तुषारार हार धवला या शुभ्रस्वर्ण कुंजर किसकी स्तुति है।
   क. दूर्गा की   ख. लक्ष्मी की   ग. सरस्वती की   घ. हनुमान की

हमारी सोलह संस्कार गर्भाधान, पूजावनम, सीमन्तोन्नयम, जातक संस्कार, नामकरण संस्कार, निष्क्रमण संस्कार, चूड़ाकर्म संस्कार, अन्नप्राशन संस्कार, कर्णवेध संस्कार, उपचार संस्कार, वेदार्थ संस्कार, समावत्न संस्कार, वाह विस्थाप, वान प्रस्थाश्रम संस्कार, संयोजकास्थ्रम संस्कार, अन्येष्ठिक कर्म संस्कार।

आचारो परमो धर्म: -

उपयुक्त पंक्ति के अनुसार आचार ही मनुष्य का परम धर्म है। आचार - विचार के पवित्र होने पर ही मनुष्य चरित्रवान बनता है, मनुष्य के चरित्रवान होने से राष्ट्र का भी सर्वाणि विकास होता है।

उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय 27
कर्मकाण्ड एवं मूहर्त ज्ञान

प्रातः कालीन कर्मों में सबूतः प्रामुहर्त में जगना चाहिये, प्रामुहर्त में नहीं जगने से क्ष्या हानि होती है आचायों ने इस प्रकार प्रतिपादित किया है -

प्रामुहर्त या निद्रा सा पुष्पक्षयकारणी।

तो करोतिहि द्विजो मोहात् पादकृष्णेण सुद्रयतिः।

प्रामुहर्त में जो मुनुष्य सोता है, उस समय की निद्रा उसके पुष्पों को समाप्त करती है। उस समय जो श्यान करता है उसे इस पाप से बचने के लिए पादकृष्ण (त्रता) प्राप्त किया जाता है।

हमारी दैनिक चया का आरम्भ प्रातः प्रामुहर्त में जागरण से होता है। शाखों में प्रामुहर्त की न्याय्या इस प्रकार से है -

रात्रेः पश्चिमयामस्य मूहताः यस्तुतियकः।

स प्रामुहि इति विजेतो विहितः स प्रवोधने।

अर्थात् - रात्रि के आख़र भाग का जो तीसरा भाग भाग है उसको प्रामुहर्त कहते है। निद्रा ल्याग के लिए यह समय शाखा विहित है।

प्रामुहर्त सूचूय से चार पहड़ी (डेढ़ घंटे) पूर्व को कहते हैं। मनुष्य प्रातः कालीन जागरण के पश्चात् आँखों के खुलने तो होता है। शाखा के गुहीकों की हथेलियों को देखे और निम्न मन्त्र को बोले -

कराया बसते लक्ष्मीः करमध्ये सर्वत्रती।

करम्भे रिथ्लोः प्रामुह प्रभाते करदशनम्।

भाषा - हाथ के आभास में लक्ष्मी हाथ के मध्य में सर्वत्रती का निवास है, हाथ के मूल भाग में प्रामुहर्त का निवास है, अतः प्रात: काल कर (हाथ) का दर्शन करना चाहिए।

उपयुक्त श्रीको बोलते हुए अपने हाथों को देखना चाहिए। यह शाखीय विश्वास बढ़ा ही अर्थपूर्ण है।

इससे मनुष्य के हृदय में आत्म-निर्भरता और स्वावलक्ष्य भावना उदय होती है। वह जीवन के प्रचेत कार्य में दूसरों की तरफ न देखकर अन्य लोगों के भरोसे न रहकर-अपने हाथों की तरफ देखने का अभ्यास बन जाता है।

भूमि की बनना - शास्त्र से उठकर पृथ्वी पर पैर रखने से पूर्व पृथ्वी की प्रार्थना करे -

समुद्रसन देवी वर्तसत्तमणिते।

विष्णुपतिं नमस्तुभ्य पादपश्री श्रमस्य मै।

समुद्रपूर्वी वसं वो धारण करने वाली पर्वत रूपी स्तंभों से मणित भगवान विष्णु की पत्नी पृथ्वी देवी आप-मेरे पाद शरी को क्षमा करे।

प्रातः - धर्म शाखाओं ने निद्रा ल्याग के उपरान्त मनुष्य मात्र का प्रथम कार्य उस कोटि-कोटि प्रामुहर्त-नायक, सन्तिदानन्द-स्वरूप प्यारे प्रभु का स्मरण बताया है - जिस की असीम कृपा से
अन्तर दूरब्रह्म भजन देख प्राप्त हुई है, जो समस्त सृष्टि के कण-कण में आत्म-प्रात है, और सत्य, शिव, व सुनर है। जिसकी क्षुद्रा से मनुष्य सब प्रकार के भयों से मुक्त होकर ‘अहं ब्रह्मासिम’ के उच्च लक्ष्य पर पहुँच कर तमय हो जाता है। दैनिक जीवन के प्रारम्भ में उस के स्मरण से हमारे हृदय में आत्मविश्वास और दुःख की भावना ही उत्पन्न नहीं होगी अपि समर्पण दिन मंगलमय वातावरण में व्यतीत होगा।

मानसिक शुद्धि के लिए मनुष्य बोलें -

१. अपवित्र पवित्रो वा सर्वव्यास्तां गतोपि वा।

य: समर्पण पुण्ड्रीकाष्ठ स बाह्यभुज्यत: गृहिः॥

प्रातः समर्पणीय श्रोकः-

मन्मतं खिं नामोऽनातः त्रिपादो ज्ञान संन्यास करते तथा। विवेकविज्ञानसम्पन्नसि। तत्तत्त्वं ब्रह्माणि ब्रह्माणि ब्रह्माणि। तत्तत्त्वमाता ब्रह्माणि गृहिः।

तप: सत्यप्राय करे -

ॐ महाशिवरामः: स्वः तत्सतितपर्यं भगोऽद्वस्य धीमहि धियो धोः: प्रतेऽद्यात्॥

गायत्री जप करते समय गायत्री मन्त्र के अर्थ को ध्यान में रखते हुये जप करें।

अधीन - भू - सत् मुः - चित् - स्व: आनंद स्वरूप: सृष्टिकर्तार प्रकाशायन परमात्मा के उस प्रसिद्ध वर्णीय तेज का (हम) ध्यान करते है, जो परमात्मा हमारी बुद्धि को सतू मार्ग की ओर प्रेरित करे।

तप: सत्यायते गायत्री तपो गायत्री तप: करे तप: सत्यायते गायत्री तपो गायत्री।

विवेक - तृणं ग्याया चिराग्मत्स्त्रुष्ष: सबिता देवता गायत्री च।: गायत्री तपः सवः गमपुः॥

ॐ भू: नृदुःपुःत्तत्त्वप्रायायम्: ऋषिः श्रवणात् देवता गायत्री च।: गायत्री ब्रह्माणि गृहिः॥

ॐ भू: ऋषिः श्रवणात् देवता गायत्री च।: गायत्री तपः सवः गमपुः॥

ॐ भू: ऋषिः श्रवणात् देवता गायत्री च।: गायत्री तपः सवः गमपुः॥

उत्तराखण्ड मुख्त विश्वविद्यालय 29
िकया हूंभभ आ जप भगवान को अपूणण करूभ।

अनेन गायूअी जपकर्णा सवांभी भगवान् नारायणः भीयतां न मम।।

गाय/ऊ्5ःी कवच हाथ मूदभ जल लेकर िविनयोग पढ़े

िविनयोगः।। िविनयोग के बाद हाथ जोड़े और मूदभ पूहत् आचमन करूभ और भगवान का भमरण करूभ।

2.4 सारांश -

इस इकाई का अध्ययन करने के बाद आप कर्मकाण्ड के आरम्भिक प्रातःकालीन नित्यकर्म विधि का ज्ञान प्राप्त करेंगे। मनुष्य अपने जीवन में किन कर्मों को करके परम्पराको प्राप्त कर सकता है। हमारे प्राचीन ऋषि मुनियों ने दैनिक जीवन में कृत्य जिन कर्मों का शास्त्रों में उल्लेख किया है। उसे मानव यदि अपने जीवन में अपना ले तो उसका सत्तोमुखी विकास हो।
कर्मकाण्ड एवं मुहूर्त ज्ञान

2.5 शब्दावली

नित्यकर्म - देनान्दनी जीवन में किया जाने वाला कर्म
षट्कर्म - छः प्रकार के नित्य किये जाने वाला कर्म
सन्ध्या वन्दन - ब्राह्मणों के लिये गायत्री उपासना हेतु किये जाने वाला वन्दनादि कर्म।
पुण्यक्षय - पुण्य का नाश
आत्मविश्वास - स्वयं पर विश्वास
कारोंे - हाथ के अग्र भाग में
कवच - रक्षार्थ धारण करने वाला

2.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर –

1. ग
2. घ
3. ग
4. क
5. ग

2.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

<table>
<thead>
<tr>
<th>ग्रन्थ नाम</th>
<th>प्रकाशण</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>नित्यकर्म पूजा प्रकाश</td>
<td>गीताप्रेस गोरखपुर</td>
</tr>
<tr>
<td>भारतीय संस्कृति के आधारभूत तत्त्व - चौक्षम्बा प्रकाशन</td>
<td></td>
</tr>
<tr>
<td>कर्मकाण्ड प्रदीप - चौक्षम्बा प्रकाशन</td>
<td></td>
</tr>
</tbody>
</table>

2.8 निबन्धात्मक प्रश्न

1- प्रातः कालीन नित्यकर्म विधि का विस्तार से वर्णन कीजिये ?
2- षट्कर्म से आप क्या समझते ? विस्तृत व्याख्या कीजिये।
इकाई – 3 पंचमहायज्ञ

इकाई की संरचना

3.1 प्रस्तावना
3.2 उदेश्य
3.3 पंचमहायज्ञ परिचय
पंचमहायज्ञ का महत्व
3.4 सारांश
3.5 बोध प्रश्न
3.6 शब्दावली
3.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
3.8 सल्लभ ग्रन्थ सूची
3.9 निबन्धात्मक प्रश्न
3.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई बी0र, कर्मकाण्ड के प्रथम पत्र के तृतीय इकाई ‘पंचमहायज्ञ’ नामक शीर्षक से सम्बन्धित है। इस इकाई में गृहस्थ जीवन में मनुष्य के लिये आचार्याँ द्वारा कथित पंचमहायज्ञ का वर्णन किया गया है।

चार आश्रमों में गृहस्थ आश्रम श्रेष्ठ बनाया गया है। अन्य सभी आश्रम इसी आश्रम पर निर्भर रहते हैं। जीवन की महत्वपूर्ण तरीकों के साथ जीने के लिये गृहस्थ के लिये पंचमहायज्ञ की महती आवश्यकता है।

इस पूर्व की इकाईयों में आपने कर्मकाण्ड के उद्देश्य सोत एवं ग्राम-कालीन कृत्य नित्यकर्म को समझ लिया है। यहाँ इस इकाई में आप पंच महायज्ञ का अध्ययन करेंगें। आशा है पाठकगण इसे पढ़कर पंचमहायज्ञ का बोध कर सकेंगे।

3.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप पंचमहायज्ञों के बारे में जान पाएंगे- ।

1. पंचमहायज्ञों वशा प्रतायज्ञ देवयज्ञ पितृयज्ञ इत्यादि का अध्ययन आप सम्पद रूप से कर पाएंगे।
2. पंचमहायज्ञों के महत् का निरूपण कर सकेंगे।
3. पंचमहायज्ञों को परीबाण्डित कर सकेंगे।
4. पंचमहायज्ञों से सम्बन्धित किशन विषयों का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।

3.3 पंचमहायज्ञ परिचय

पंच महायज्ञ भारतीय सनातन परम्परा में मानवों के लिये आवश्यक अंग के रूप में बताये गए हैं। कर्मशास्त्रों ने भी हर गृहस्थ को प्रतिभान पंच महायज्ञ करने के लिए कहा है। नियमित रूप से इन पंच यज्ञों को करने से सुख-समृद्धि व जीवन में प्रसन्नता बनी रहती है। इन महायज्ञों के करने से ही मनुष्य का जीवन, परिवार, समाज शुद्ध, सदाचारी और सुखी रहता है।

पंच यज्ञ की महत्

पर्याप्त धार-भाग होने पर भी अधिकांश परिवार दुःखी और असाध्य रोगों से प्रस्त करते हैं, क्योंकि उन परिवारों में पंच महायज्ञ नहीं होते। मानव जीवन का उद्देश्य धर्म, अर्थ, काम व मोक्ष की प्राप्ति है। इन चारों की प्राप्ति तभी संभव है, जब वैदिक विधान से पंच महायज्ञों को निरन्तर जायं। पंच महायज्ञ का उल्लेख 'मनुस्मृति' में मिलने पर भी उसका मूल यज्ञौद के शतपथ ब्राह्मण हैं।
रायका एवं अवृद्धि ज्ञान

इसीलिये ये वेदों का एक अंश है। जो वैदिक धर्म में विवाह रहते हैं, उन्हें हर दिन ये 5 यज्ञ करते रहने के लिए मनुष्यता में निमन मंत्र दिया गया है- 

'अथवा यज्ञ ब्रह्म यज्ञः पित्र यज्ञस्त तर्पण। होमोदेवो बलिभीमो त्रयो अतिथिः पूजनम्।।

प्रकार

मानव जीवन के लिए जो पंच महायज्ञों माने गए हैं, वे निम्नलिखित हैं- 

1. ब्रह्मयज्ञ
2. देवयज्ञ
3. पितृयज्ञ
4. भूतयज्ञ
5. अतिथियज्ञ

पंचमहायज्ञ का चरण प्रायः सभी ऋषि-मुनियों ने अपने-अपने धर्मग्रंथों में किया है, जिनमें से कुछ ऋषियों के वचनों को यहाँ उद्देश्य किया जाता है- 

'भूतयज्ञः मनुयज्ञः पितृयज्ञः देवयज्ञः ब्रह्मयज्ञः इति।'

वेदों को पढ़ना और पढ़ाना ब्रह्म यज्ञ कहा जाता है। तर्पण, पिण्डदान और श्राद्ध को पितृ यज्ञ। देवताओं के पुजन, होम हवन आदि को देव यज्ञ कहते हैं। अपने अन्य से दूसरे प्राणियों के कल्याण हेतु प्राण देना भूतयज्ञ तथा घर आए अतिथि का प्रेम सहित आदर सत्कार करना अतिथियज्ञ कहा जाता है। ब्रह्म यज्ञ, पितृयज्ञ, देवयज्ञ, भूतयज्ञ और अतिथिः यज्ञ यही पंच महायज्ञ है।

भगवान् मनु की आज्ञा है कि -

पञ्चपरात् यो महायज्ञ अधिकतर शक्तिः। 
समेततत्र सुनायत्त देवसुनायत्त लिपयते।।

'जो गृहयज्ञ शक्ति के अनुकूल इन पंचमहायज्ञों का एक दिन भी परित्याग नहीं करते, वे गृहस्थ-आश्रम में रहते हुए भी प्रतिदिन के पञ्चसूनार जिन पाप के भागी नहीं होते।

महर्षि हरित ने कहा है -

यतकल सोम यागेन प्राप्योति धनवान्भ्रम् द्विजः। 
सम्यक् पन्चमहायज्ञेः दानसद्वानुपयात्।

धनवान्भ्रम द्विज सोमयाग करके जो प्रति आय सकता है उसी प्रति भोजन कर पाप लगता है।

पंचमहायज्ञों के अनुमान से समस्त प्राणियों की तृप्ति होती है।

पंचमहायज्ञ करने से अन्नादि की गृहद्वारा और पापों का श्रंगति होता है।

पंचमहायज्ञ किये बिना भोजन करने से पाप लगता है।

उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय
भगवान श्री कृष्ण ने गीता (3/13) में कहा है -

यज्ञशिष्याधिन: सन्नौ मुच्यन्ते सर्वकिल्लिण्यः।

भुन्ते ते त्वय पापा पचन्त्यात्मकारणात्।

यज्ञ से शेष बचे हुए अन्य को खानेवाले श्रेष्ठ पुरुष सभी पापों को मुक्त हो जाते हैं, किन्तु जो पापी केवल अपने लिए ही भोजन बनाते हैं, वे पाप का ही भक्षण करते हैं।

महाभारत में भी कहा है -

अहंहनि ये लवितानकृत्वा भुन्ते स्वयम्।

केवल मलमश्रिति ते नर न च संयाय॥।

जो प्रतिदिन इन पंचमहायज्ञों को किये बिना भोजन करते हैं, वे केवल मल खाते हैं, इसमें कोई सन्देह नहीं।

अतः पंचमहायज्ञ कर के ही गुर्गस्थों को भोजन करना चाहिए। पंचमहायज्ञ के महत्व एवं इसके वर्ष व स्वरूप को जानकर द्विग्रामत्र का कर्त्तव्य है कि वे अवश्य पन्चमहायज्ञ किया करें ऐसा करने से धर्म, अर्थ, काम, और मोक्ष की प्राप्ति होगी।

पञ्च महायज्ञों के पृथक-पृथक रूप

ब्रह्मयज्ञ

अध्ययन - अध्ययन को ब्रह्मयज्ञ कहते हैं, श्रीमद्राष्टाग कीता में कहा है -

स्वाध्ययायप्रमसं चैव वाङ्मयं तत्व उच्चते।

वेद - शास्त्रों के पदन एवं परमेश्वर के नाम का जो जपाभ्यास है वही वाणी सम्भवति तप कहा जाता है।

स्वाध्यय से जान की वृद्धि होती है। अतः सबी अवस्थाओं में जान की वृद्धि होती है।

ब्रह्मयज्ञ करने से जान की वृद्धि होती है। ब्रह्मयज्ञ करने वाला मनुष्य जाग्रत-महर्षिणों का अनृगी और कृत्तज हो जाता है।

1. संवार्तन्दन के बाद को प्रतिदिन वेद-पुराणादिका पदन-पाठन करना चाहिए। यद्यपि आज के व्यस्ततम समय में मनुष्य के पास समयाभाव होता है तो पाठकों को सुविधा के लिए प्रत्येक व्रत का आदि मन्त्र दिया जा रहा है।

ऋग्वेद - हरि: ऋ अभिमोले पुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्विदम्। होतारं रलथातमम्॥।

ऋजुवेद - ऋ इवे त्वसं त्वा वायवस्था देवो व: सविता प्राप्यसु व्रेष्टस्तमाय कर्मण आप्यायच्य मध्या

इन्द्राय भागं प्रजावतिरनमीवा अवक्ष्मा मा वस्तेन ईशान मायास श्रुति अर्धमृ गोपियो स्यात

वहीर्षकमानस्य पशूं पाहि।

सृजूवेद - ऋ अन्त आयाहि वीतवे गुणो हन्यदातविन्योता सत्सु बहिष्च।}
अथवं - ऊँ शं नो देवीर्भविष्य आपो भवन्तु पीयो। शंपोभविष्यवत्तुनः।
निरखतम् - समामावः समामातः।
छन्दः - मयरसवधननसिनिमतम्।
निघण्डु - गौः ग्या
ज्ञीतिम् - पञ्चसंवतसरम्।
शिश्ना - अथ शिक्षा प्रवश्यामि।
व्याकरणम् - वृहिरदेव।
कल्पसूत्रम् - अथ तोशधिकारः।
गृहसूत्रम् - अथातो गृहश्चत्तिपादानां कर्म।
न्यायशरीरम् - प्रमाणप्रमेयसंसागय वधर्य दुःधन सिद्धान्तवयव - तर्क निर्णयाव।
ज्ञरितसंहोऽववाभमाचलजातिनि ग्रजस्थानानात तत्तजानानिः।
वैशेषिकदर्शनम् - अथातो धर्म व्याक्रणायः। यतोभुदय निःश्रेयससिद्धः स धर्म।
योगदर्शनम् - अथ योगानुशासनम्।
सारस्वतदर्शनम् - अथ त्रिविंधुः।
भारदर्शनम् - अथातो धर्मजिज्ञासा। धार्मको धर्मः।
जैनदर्शनम् - अथातो धर्मजिज्ञासा, चोदना लक्षणोऽश्च धर्मः।
अथातो धर्मजिज्ञासा, जनमात्स्य वतः। शाख्योवित्वाः ततु समन्वयात।
समूहि - मुनेकार्यायमातिस्थः।
प्रतिपूर्वसंस्थान्यायमिदं वचनमृर्कुन्तः।
गाम् - तपः।
भारतम् - नारायणं नमः।
पुराणम् - जन्मात्स्य यतोआयादि तरंशार्यविश्वभिः।
तेने ब्रह्म हुदार य आदिवेषये मुहाति यस्यूः।
धाराना स्वेत सोदा निश्चकुहं सत्यं परं धीमहिः।

3.4 बोध प्रश्न
1. पंच महायज्ञ के कितने प्रकार है।
   क. 2   ख. 3   ग. 4   घ. 5
2. ब्रह्म यज्ञ का अर्थ क्या है।
   क. आत्मज्ञान की प्रेरणा ख. ब्रह्म का ज्ञान   ग. परमात्मा का ज्ञान   घ. कोई नहीं
3. भूत यज्ञ की भावना है - प्राणि मात्र तक आत्मियता का विस्तार।
   क. प्राणि मात्र तक आत्मियता का विस्तार।   ख. भूतों का यज्ञ   ग. शान्ति के लिये यज्ञ   घ. प्रेत बाधाओं से शान्ति के लिये यज्ञ।
4. पुरुषार्थ के कितने प्रकार है।
   क. 3   ख. 4   ग. 5   घ. 6
5. तर्पण में वर्जित है -
   क. तांत्रिक पात्र   ख. मिथिला तथा लोहे का पात्र   ग. कौस्त्हा का पात्र   घ. पीतल का पात्र।

तन्त्रम् -

आचारमूला जातिः स्थादाचारः शाखमूलकः।
बैद्याक्षे शाखमूलै बैवः साधकमूलकः॥
साधकः क्रिया:भूल: क्रियापि फलमूलिका।
फलमूल: सुखं देशि सुखमान्दमूलकः॥।

यदि समयाभाव हो तो 108 बार गायत्री का जप करें।

देवयज्ञ

अपने इष्टदेव की उपासना के लिये परब्रह्म परमात्मा के निमित्त अभि में किये उच्चन को देव यज्ञ कहते है।

यत्रवेदायुष्य यद्रासिः यज्ञुहोसि ददासि यतः।
तत्तपवसिः कीनितं तत्कुश्च मदर्पणम्।।गीता 9.2॥।

भगवान् के इस वचन से सिद्ध होता है कि परब्रह्म परमात्मा ही समस्त यज्ञों के आश्रयभूत है। नित्य और नैतिकिक - भेदसे देवता दो भागों में विभक्त है, उनमें रुद्रगण, वसुगण और इत्यदी नित्य देवता कहे जाते हैं, और ग्राममेवता, बनवदेवता, तथा गृहदेवता आदि नैतिकिक देवता कहे जाते है। दोनों तरह के ही देवता इस यज्ञ से तृप्त होते हैं। जिन देवताओं की कृपा से संसार के समस्त कार्यकलाप की भलीभाँति उत्तमति और रक्षा होती है, उन देवताओं से उक्त्रृण होने के लिये देवयज्ञ करना परमाचरक है।

उत्तराखण्ड मुक्ति विश्वविद्यालय 37
कर्मकाण्ड एवं मुहूर्त ज्ञान

देवयज्ञ से नित्य और नैमित्तिक देवता तुम्हें होते हैं।

भूतयज्ञ
कृपिया, कीट पतंग और पशु प्रीति आदि की सेवा को "भूतयज्ञ" करते हैं। इंद्रदेवता सृष्टि के किसी भी अंग की उपेक्षा कभी नहीं की जा सकती, क्योंकि सृष्टि के सिर्फ एक ही अंग की सहायता से समस्त अंगों की सहायता समझी जाती है, अतः 'भूतयज्ञ' भी परम धर्म है।

प्रत्येक प्राणी अपने सुख के लिए अनेक जीवों को प्रतिदिन कलश देता है, क्योंकि ऐसा हुए विना क्षणमात्र भी शारीर यात्रा नहीं चल सकती।

प्रत्येक मनुष्य के निःश्रास-प्रश्रास, भोजन-प्राशन, विहार-सन्न्यास आदि में अग्रणित जीवों की हिंसा होती है, निरामिष भोजन करने वाले लोगों के भोजन के समय भी अग्रणित जीवों का प्राण-विनोग होता है। अतः जीवों से उम्रह होने के लिए भूतयज्ञ करना आवश्यक है। भूतयज्ञ से कृपिया, कीट, पतंग-पशु प्रीति आदि की तुषिका होती है।

पितृ यज्ञ
अर्थात् नित्य पिताओं की तथा परतोलकामी नैमित्तिक पिताओं की पिण्डप्रदानादि से किये जानेवाले सेवारूप यज्ञ को "पितृयज्ञ" कहते समार्थप्रवर्तक माता-पिता की कृपा से असमार्थ से निवृत्त होकर मनुष्य ज्ञान की गृहांत करता है, फिर धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष आदि सभी पदार्थों को प्राप्त कर मुक्त हो जाता है। ऐसे द्यालु पिताओं की तुषिका के लिए, उनके समान के लिए, अपनी कृतज्ञता के प्रदर्शन तथा उनसे उनके लिए पितृयज्ञ करना नित्यता आवश्यक है।

पितृयज्ञ से समस्त लोकों की तुषिका और पिताओं की तुषिका की अभिवृद्धि होती है।

मनुमित्यज्ञ
शुद्धी से अत्यत पीडित मनुष्य के घर आ जाने पर उसकी भोजनादि से की जानेवाली सेवारूप यज्ञ को "मनुमित्यज्ञ" कहते हैं। अतिथियाँ के घर आ जाने पर वह चाहे किसी जाति या किसी भी सम्प्रदाय का हो, उसे पूज्य समझ कर उसकी समुचित पूजा कर उसे अनादि देना चाहिए।

प्राप्तिमार्ग से मनुष्य अपने शरीरात्मा के सुख से अपने को सुखी समझता है, फिर पुत्र, कन्या, मित्रादि, को सुखी देखकर सुखी होता है। तदनत्तर स्वेदशाश्वासियों को सुखी देखकर सुखी होता है। इसके बाद पूर्ण ज्ञान प्राप्त करने पर वह समस्त लोकमूह को सुखी देखकर सुखी होता है। परन्तु वर्तमान समय में एक मनुष्य समस्त प्राणियों की सेवा नहीं कर सकता, इसलिए यथाशक्तिः अन्नदान प्राणियों की सेवा नहीं कर सकता, इसलिए यथाशक्तिः अन्नदान द्वारा मनुष्यमात्र की सेवा करना ही "मनुमित्यज्ञ" कहा जाता है।
आयोजन है। पंच को इनकाल कर होता है कि कोई विशालकाय आयोजन होना २६/६.२ एवं ६.३ अूg299ेह ूgदठभुितूg2दभमृितपुराणोूg26अफलूg2अअाूg200ूgद9भयथूgदठद देविवूgदठ0मनुूg2द्षिपतृमां। नहूg2्् करते िवूg2द्णु बोल - चाल तूg22्वदिशूgदठ0यूg््2 नमः पमाूgदठ0ूgद9भमने ूgदठभी पुराणपुूg्22षोूgदठ6माय एवं मुहूg2भ्ूgदठ6ूgदठ0 सोना, चाँदी, ताँबा, काँसा, उूgद9भ तराखूgद9् ड मुूgदठ9 त िवूg2द2 विवूg299ालय कमूgदठ0काूgद9् ड अूgदठठत और जल लेकर संकूg208प करूgद6भ। यूgदठ8 अिूgद8दनहोूg2अ् इस कथन का पाूg2अ् िपतरूg््2 के तपूgदठ0ण मूgद6भ ूg2अअशूg2दभत माना गया है। िमूg280ी तथा लोहे का पाूg2अ् िपतरूg््2 के तपूgदठ0ण मूgद6भ है। यश और ूg2दभवगाूgदठ0िद कूg2्6 होती है।। आयोजन - इसके बाद तौंबे के पात्र में जल और चावल डालकर विकुशको पूर्वाग्र रखकर उस पात्र को दायें हाथ में लेकर बायें हाथ से डककर नीचे लिखा मन्त्र पढ़कर देव-ऋषियों का आवाहन करें। वैदिक धर्म में गृहस्त को पंच महायुज करने के लिए बताया गया है, परंतु आज अधिकांश गृहस्त यज्ञ नहीं करते; अतः उनके जीवन में आध्यात्मिक कष्ट की भामार रहती है। देव, ऋषि, पितार, समाज और अतिशय के तत्त्वों ने पंच महायुज बताया गया है। बलवेश की ५ आहुतियों को तत्वसंदर्भों में पंच महायुज की संजा दी है। इस कथन का स्पष्टकरण देते हुए युगऋषि ने वाक्य-२६.२.६/ एवं ६.३ में लिखा हैं बलवेश - की पाँच आहुतियों को ‘पंच महायुज’ क्यों कहा गया है? बोलचाल - की भाषा में किसी श्याद के साथ महा शब्द लगा देने से उसका अर्थ बढ़ाये व बढ़ा हो जाता है। ज़्ज़ शब्द से भी सामूहिक अर्थगत वा बोध निकाला जाता है, फिर महा शब्द लगा देने का अर्थ यह होता है कि कोई विशालकाय आयोजन होना चाहिए प्राय: १०० कुण्डि, २५ कुण्डि जज्ज आयोजनों को महायुज की उपाधि से विभूषित किया जाता है। फिर आहार में से छोटे छोटे - पांच प्रार्थ निकालकर आहुतियों दे देने मात्र की दो मिनट में सम्पन्न हो जाने वाली क्रिया को महायुज नाम क्यों दिया गया? इतना ही नहीं, हर आहुति को महायुज की संजा दी गई ऐसा क्यों? यदि बलवेश महायुज नाम दिया जाता है, तो कम से कम उससे इतना बोध तो होता है कि पाँच आहुतियों वाला कोई बड़ा आयोजन है। पंच महायुज नाम देने से तो यह अर्थ निकलता है कि अलगअलग - पाँच महायुज का कोई समिलित आयोजन हो रहा होगा। इसका तात्पर्य किसी अत्यधिक विशालकाय धर्मानुष्ठान जैसी न्यूनता होने जैसा ही कुछ निकलता है। इतने छोटे कृत्य का नाम इतना बड़ा क्यों रखा गया?
यह वस्तुतः एक आध्यात्मिक का विषय है। नामकरण की यह विसंगत भूत क्रियाओं ने कैसे कर डाली, यह बात अनन्य एवं जैसी लगती है। वस्तुस्थिति का पर्यावरण करने से तथ्य समान आ जाते हैं और प्रकट होता है कि यहाँ न कोई भूत हुई है और न कोई विसंगति है। अन्तर इतना ही है कि क्रृत्य के स्थान पर तथ्य को प्रमुखता दी गई है। दुर्भ के स्थान पर रहस्य कोप्रकर्म - कोध्यन - में रखा गया है। साधारणतया दुर्भ को, क्रृत्य को प्रमुखता देते हुए नामकरण किया जाता है, किन्तु बल्कि वैद्य की पाँच आहुति के पीछे जो प्रतिपादन जुड़े हुए हैं, उन पाँचों को एक स्वतंत्र यज्ञ नहींमहायज्ञ - माना गया है। स्पष्टकरण की दृष्टि से हर आहुति को एकएक - स्वतंत्र नाम भी दे दिया गया है। पाँच आहुतियों कि जिन पाँच यज्ञों का नाम दिया गया है, उनमें शास्त्रीय मतभेद पाया जाता है। इन मतभेदों के मध्य अधिकांश की सहमति को ध्यान में रखा जाय, तो इनके नाम 1. ब्रह्म यज्ञ 2. देव यज्ञ 3. कृष्ण यज्ञ 4. नर यज्ञ 5. भूत यज्ञ ही प्रमुख रूप से रह जाते हैं। मोटी मान्यता वह है कि जिस देवता के नाम पर आहुति दी जाती है, वह उसे मिलती है, फलतः वह प्रसन्न होकर यज्ञकारों को सुखसात्ति - के लिए अभी यज्ञ प्रवर्धन प्रदान करते हैं। यहाँ देवता शक्ति का तात्पर्य समझने में भूत होती रहती है। देवता किसी अदृश्य व्यक्ति जैसी सत्ता को माना जाता है, यह वस्तुतः बात नहीं है। देवों का तात्पर्य किन्हीं भाव शक्तियों से है, जो चेतना तर्कों की तरह इस संसार में एवं प्राणियों के अन्तराल में संयोग रहती है। साधारणतया वे प्रसाद पदों रहती हैं और प्रमुख सत्ताओं से, सप्रभुवानों से और सप्रभृतियों से रहित दिखाई पड़ता है, इस प्रसन्नि को जागृति में परिवर्तन करने वाले प्रयासों को देवगर्तन कहा जाता है। अनेकानेक धर्मानुशासन, योगागमन - , तपस्वित्त - , मंदिरागमन इन देव प्रवृत्तियों को प्रक्रिया - सम्प्रवृत्ति बनाने के लिए ही किये जाते हैं। जो प्रौढ़ के माध्यम से प्रेणप्रयोजन - तक पहुँच जाते हैं, उन्हीं की देवपूजा सार्थक होती है। पंच महायोगों में जिन देव, देव, ऋषि आदि का उल्लेख है, उनके निमित्त आहुति देने का अर्थ इन्हें अदृश्य व्यक्ति मानकर भोजन कानन नहीं, वरन् यह है कि इन शब्दों के पीछे जिन देव वृत्तियों का - सप्रभृतियों कासंकेत - है, उनके अभिवर्धन के लिए अंशदान करने की तपत्ता अपनाई जाय।
1. ब्रह्म यज्ञ का अर्थव्रित्त - यज्ञ आत्मज्ञन की प्रेरणा। ईश्वर और जीव के बीच चलने वाली पारस्परिक आदान-प्रदान - प्रक्रिया है।
2. देव यज्ञ का उदेश्य पघु में मनुष्य तक पहुँचाने वाले प्रगति क्रम को आगे बढ़ाना। देवत्व के अनुरूप गुणकर्म - का कारक विकसित। पवित्रता और उद्दार्थ का अधिकाधिक संबंधन।
3. ऋषि यज्ञ का तात्पर्य है पिछड़ो - को उठाने में संतन कर्मार्थ जीवननीति। सदाशयों - संबंधन की तपश्याँ। पूर्व पुर्ण- ऋषियों के आदरों को आत्मसातु करना।
कर्मकाण्ड एवं मुहूर्त ज्ञान

4. नर यज्ञ की प्रगति है मानवीय गरिमा के अनुरूप वातावरण एवं समाजव्यवस्था - का निर्माण। मानवीय गरिमा का संरचना नीति और व्यवस्था का परिपालन, नर में नारायण का उत्पादन। विश्व मानव का श्रेयसाधन।

5. पूरा यज्ञ की भावना है प्राणी मात्र तक आत्मीयता का विस्तार - अन्याय जीवधारियों के प्रति संदेशबन्ध पूर्ण व्यवहार। वृक्ष- बनसपत्तियों तक के विकास का प्रयास।

इन पाँचों प्रवृत्तियों में व्यक्ति और समाज की सर्वोपरिवर्तन ग्राह्यता, पवित्रता और सुन्मवस्था के निर्देश युक्त हैं। जीवनरूपी और समाज व्यवस्था में इन सिद्धांतों का जिस अनुपात में समावेश होता जाएगा, उसी क्रम से सुखद परस्परस्थितियां का निर्माण निर्धारित होता चला जाएगा। बीज छोटा होता है, किन्तु उसका फलतत्त्व विशाल वृक्ष बनकर सामने आता है। चिन्तारी छोटी होती है, अनुकूल अवसर मिलने पर बही दावानल का रूप धारण कर लेती है। गणित के सूत्र छोटे से होते हैं, पर उसे संततत्त्वों सरल होते हैं। अपने उपर स्थान दिखाने का अवसर मिलता है, चमकी शिक्षक उपर चला जाता है।

इन पाँचों प्रवृत्तियों का निर्देश व्यवहार - साधन।

5. भूत यज्ञ की भावना है क्षुरुण का तबाही का विस्तार - अन्याय जीवधारियों के प्रति संरचना नीति का प्रयास।

इन पाँचों प्रवृत्तियों में व्यक्ति और समाज की सर्वोपरिवर्तन ग्राह्यता, पवित्रता और सुन्मवस्था के निर्देश युक्त हैं। जीवनरूपी और समाज व्यवस्था में इन सिद्धांतों का जिस अनुपात में समावेश होता जाएगा, उसी क्रम से सुखद परस्परस्थितियां का निर्माण निर्धारित होता चला जाएगा। बीज छोटा होता है, किन्तु उसका फलतत्त्व विशाल वृक्ष बनकर सामने आता है। चिन्तारी छोटी होती है, अनुकूल अवसर मिलने पर बही दावानल का रूप धारण कर लेती है। गणित के सूत्र छोटे से होते हैं, पर उसे संततत्त्वों सरल होते हैं। अपने उपर स्थान दिखाने का अवसर मिलता है, चमकी शिक्षक उपर चला जाता है।

इन पाँचों प्रवृत्तियों का निर्देश व्यवहार - साधन।

3.5 सारांश -

इस इकाई का अध्ययन करने के बाद आप कर्मकाण्ड में उद्देश्य पंचमहायज्ञ से अवगत हो जायेंगे। सनातन परम्परा के आचार्यों ने गृहस्थ जीवन सुखमय एवं उत्तरोत्तर विकासशील हो इसके
लिये पंचमहायज्ञ का विधान बताया है | जिस गृहस्थ के द्वारा उसके दैनिक जीवन में पंचमहायज्ञ कर्म किया जाता है, उसका सर्वोच्च ही कल्याण होता है | ऐसा पूर्वचार्यों ने प्रतिपादित किया है | हमारे प्राचीन ऋषि मुनियों ने दैनिक जीवन में कृत्यों जिन कर्मों का शास्त्र में उल्लेख किया है | उसे मानव यदि अपने जीवन में अपने जीवन में अपना ले तो उसका सर्वोच्च विकास हो सकेगा | अत: इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप प्रामाणिक नित्यकर्मविधि का विविधता अध्ययन करेंगे।

### 3.6 शब्दावली

| पंचमहायज्ञ | पंचमहायज्ञ से तात्पर्य पाँच प्रकार के यज्ञों से है। यथा – ब्रह्म यज्ञ, देव यज्ञ, भूत यज्ञ, आदि। |
| सर्वोच्च | सर्वोच्च |
| यज्ञार्थ | यज्ञ करने वाला |
| दृष्टीकोश | चलन करने वाला |
| दैनिक | प्रतिदिन |

### 3.7 बोध प्रश्नों के उत्तर –

1. घ
2. क
3. क
4. ख
5. ख

### 3.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

| ग्रन्थ नाम | प्रकाशन |
|नित्यकर्म पूजा प्रकाश | गीताप्रेस गोरखपुर |
| भारतीय संस्कृति के आधारभुत तत्त्व – चौखंड | चौखंड प्रकाशन |
| कर्मकाण्ड प्रतीप – चौखंड प्रकाशन |

### 3.9 निवन्धात्मक प्रश्न

1- पंच महायज्ञ से आप क्या समझते हैं? विस्तार से वर्णन कीजिये?
2- गृहस्थों के पंच महायज्ञ कौन – कौन है? व्यावहारिक रूप में उनका क्या महत्व है, स्पष्ट कीजिये

उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय
इकाई – 4  वेदों का संक्षिप्त परिचय

इकाई की संरचना

4.1  प्रस्तावना
4.2  उद्देश्य
4.3  वेदों का परिचय एवं अपौरुषेयवाद
        वेद की परिभाषा, स्वरूप एवं महत्त्व
4.4  बोध प्रश्न
4.5  सारांश
4.6  शब्दावली
4.7  बोध प्रश्नों के उत्तर
4.8  सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
4.9  निजन्यात्मक प्रश्न
4.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई सी(ए) कर्मकाण्ड के प्रथम भाग के प्रथम खण्ड का चतुर्थ अध्याय वेदों का संक्षिप्त परिचय से समन्वित है। इस इकाई में आप वेद समन्वित जानकारी प्राप्त करेंगे।

"विद" का अर्थ है: जानना, जाना शब्द संस्कृत भाषा के "विद" धातु से बना है। वेद हिन्दू धर्म के प्राचीन पवित्र ग्रंथों का नाम है, इससे वैदिक संस्कृत प्रचलित हुई। ऐसी मान्यता है कि इनके मंत्रों को परमेश्वर ने प्राचीन ऋषियों को अप्रत्यक्ष रूप से सुनाया था। इसलिए वेदों का श्रद्धा भी कहा जाता है। वेद प्राचीन भारत के वैदिककाल की वाचिक परम्परा की अनुपम कृति है जो पीढ़ी दर पीढ़ी पिछले चार-पाँच हज़ार वर्ष से चली आ रही है। वेद ही हिन्दू धर्म के सब्रच्छ और सवौपर धर्मग्रन्थ हैं। वेद के मंत्र भाषा को सहित कहते हैं।

इस इकाई में वेद समन्वित विषयों का सम्बन्ध अध्ययन करेंगे।

4.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पराभूत आप बता सकते हैं कि –
1. वेद क्या है तथा उनके कितने प्रकार है?
2. वेद के क्या महत्व है और इसे अपौरुषेय क्यों कहा जाता है?
3. उपवेद किसे कहते है?
4. वेद के कितने विभाग है तथा वेद ईव वरीय देव है या मानव निमित?
5. उपवेद किसे कहते है?

4.3 वेदवािय- परिचय एवं अपौरुषेयवाद

'सनातन धर्म' एवं 'भारतीय संस्कृति' का मूल आधार स्तम्भ विद्वान का अतिक्रमण और सर्वप्रथम वाचिक 'वेद' माना गया है। मानव जाति के लोकिक (सांसारिक) तथा पारमार्थिक अभ्युदय-हेतु प्राकृतिक होने से वेद को अनादिएं निरन्य कहा गया है। अति प्राचीनकालिन महा तपा, पुंपुष्पुम्ज ऋषियों के पवित्रम मन्त्र क्रम वेद के दर्शन हुए थे, अति: उसका नाम 'वेद' प्राप्त हुआ। वेद का स्वरूप 'सत-चित-आनन्द' होने से व्रह्म को वेद का परम्परावाची शब्द कहा गया है। इसीलिए वेद लोकिक एवं अलोकिक ज्ञान का साधन है। तेनेव्रह्म, इत्यादि 'वेद' या अविकलयीको- तत्त्वात्य यह कि अल्प के उपर भारत में आदि कवि व्रह्म के हदय में वेद का प्राकृतिक हुआ।

• सुप्रसिद्ध वेदभाष्यकार महान पण्डित पायंलालाधिकारी अपने वेदभाष्य में लिखते हैं कि 'इत्तप्रायत्वनिपतितार्थयोगित-कम्पुक्तम् यो ग्रन्थों वेदविवेदायत्स वेद:'
• निरूपत कहते है कि विविधता जानकारी विद्वान भवनतुष्क
• 'अविकलयीको-' नामक ग्रन्थ में कहा गया है कि— वेदों नाम वेदते ज्ञापने धर्मकारकामोक्ष नेमनेति भुतप्यथा चतुर्वेंद्राठ्ञानन्धों-प्रान्नविविषो॥
• 'कामवलीय नीति' भी कहती है - 'आत्मानमनिमिच्छा।' 'स्वतं बैद स बैदवित्॥' कहने का तात्पर्य यह है कि आत्मजन का ही पर्याय बैद है।

• रूति भगवती बतलाती है कि 'अनन्त वै बैदा॥' बैद का अर्थ है ज्ञान। ज्ञान अनन्त है, अतः भी अनन्त हैं। तथापि मुण्डकोपनिषद की मान्यता है बैद कि बैद चार हैं - 'ऋतुबैद यजुबैद :\\n\\n.:सामवैद उषयवैद इन बैदों के चार उषयवैद इस प्रकार हैं—

आयुवैद धनुवैद गान्धर्ववैद पत्तुनुरिचः। स्थापन्यवैददयपमपवैदचतुरुविचः।\\n
उपवैदों के कर्त्ताओं में
1. आयुवैद के कर्त्ता धनु-तात्त्विक,
2. धनुवैद के कर्त्ता विषामित,
3. गान्धर्ववैद के कर्त्ता नानु भूषण और
4. स्थापन्यवैद के कर्त्ता विचरक है।

मनुसृती में बैद ही श्रुति
मनुसृती कहती है - 'श्रुतिसतु बैदो विजेयः।' 'आदिद्रष्ट्वामर्म्याध्यापं ब्रह्मादिभः। सर्वः सत्यविधा:।
श्रुत्यनी सा श्रुति॥।' वेदकालीन महात्मा शतुर्षु कृणों ने समाधि में जो महाज्ञान प्राप्त किया और जिसे जगत के आध्यात्मिक अनुपुरुष के लिये प्रकट भी किया, उस महाज्ञान को 'श्रुति' कहते हैं।

श्रुति के दो विभाग हैं-
1. वैदिक और
2. तात्त्विक - 'श्रुतियश्व वैदिका वैदिकी तात्त्विकी च।'

तन्त्र मुख्य रूप से तीन प्रकार के माने गये है -
1. महानवाणिण्यानः,
2. नान्दपावित्रात्त्विक और-
3. कृतारण्वित्नाः।

बैद के दो विभाग हैं-\\n1. मन्त्र विभाग और
2. ब्राह्मण विभाग - 'बैदो हि मन्त्रब्राह्मणयेंद्र द्विविधः।'

बैद के मन्त्र विभाग का संहिता भी कहते हैं। संहितापरिवर्तन को 'आर्यवर्ष' एवं संहितापरिवर्तन भाषा को 'ब्राह्मणग्रन्थ' कहते हैं। बैदों के ब्राह्मणविभाग में 'आर्यवर्ष' और 'उपनिषद'- का भी समावेश है। ब्राह्मणग्रन्थ में 'आर्यवर्ष' और 'उपनिषद'- का भी समावेश है। ब्राह्मणग्रन्थों की संख्या 13 है, जैसे ऋवैद के 2, यजुवैद के 2, सामवैद के 8 और अर्थवैद के 1।

मुख्य ब्राह्मणग्रन्थ पाँच है -
1. ऐतरेय ब्राह्मण,
2. तैतरेय ब्राह्मण,
3. तत्वकार ब्राह्मण,
4. शातपथ ब्राह्मण और
5. ताण्डय ब्राह्मण।

उपनिषदों की संख्या 108 हैं, परन्तु मुख्य 12 माने गये हैं, जैसे-
1. ईश,
2. केन,
3. कठ,
4. प्रश्न,
5. मुण्डक,
6. माण्डक,
7. तैत्तरीय,
8. ऐतरेय,
9. छान्दोग,
10. बृहदारण्यक,
11. कौषीतिक और
12. श्रेष्ठात्मराम।

वेद ईश्वरीय है या मानवनिमित्त -

वेद पौणीय (ईश्वरप्रीति) है या अपौणीय (मानवनिमित्त) वेद का स्वरूप क्या है? इस महत्त्वपूर्ण प्रश्न का स्पष्ट उत्तर अग्रेंद में इस प्रकार है-‘वेद’ परमेश्वर के मुख से निकला हुआ ‘परावाक’ है, वह ‘अनादि’ एवं ‘नित्य’ कहा गया है। वह अपौणीय ही है। इस विषय में मुन्नूति कहती है कि अति प्राचीन काल के ऋषियों ने उल्लक तपस्या द्वारा अपने तप पूर्त हुदय में ‘परावाक’ वेदवालमय का साक्षात्कार किया था, अत: अपौणीय ऋषि कहलाये -‘रूप्यो मन्द्र्फ़ार।'

बृहदारण्यकोपिनषद में उल्लेख है - 'अस्त महतो भूतम्य निश्चितमतेश्वरवेदवेदः' जयुवेदः सामवेदस्ववागिन्द्रस: अर्थात् उन महान परमेश्वर के द्वारा -सृष्टि गाक्तृत होने के साथ ही(अग्रेंद, जयुवेदः, सामवेदः और अथवेदः निखास: की तरह सहज ही बाहर प्रकट हुए) तात्त्विक यह है कि परमात्मा का निखास ही वेद है। इसके विषय में वेद के महाप्रतिव सायणाचायर अपने वेदांत में लिखते हैं -

‘वस्त्र निःशिष्टविद्या में वेदा यो वेदेभ्यो शिखलं जगत्निमित्तु तमां वहने विद्वानतीर्थ महेश्वरम्। सारांश यह कि वेद परमेश्वर का निखास है, अत: परमेश्वर द्वारा ही निर्मित है। वेद से ही समस्त जगत का निर्माण हुआ है। इत्यतिक वेद को अपौणीय कहा गया है। सायणाचार्य के इन विचारों का समर्थन पाश्चात्य वेद विद्वान प्रो 0 विलस्न, प्रो 0 मैक्समूल आदि ने अपने पुस्तकों में किया है। प्रो 0 विलसन लिखते हैं कि ‘सायणाचार्य का वेद विषयक ज्ञान अति विशाल और अति गहन है, जिसकी समक्षता का दावा कोई भी यूरोपीय विद्वान नहीं कर सकता।'
प्रो0 मैसूर लिखते हैं कि 'यदि मुझे सायणाचार्यार्थित बृहद वेदभाष्य पढ़ने को नहीं मिलता तो में वेदांगों के दुर्भाग्य किले में जाने वर्तमान नहीं रहता। इसी प्रकार यह पाठांत्रिक, वेद विद्वान वेदांग, बेदकी, राध, ग्रामसन, तुडविंग, ग्रिकिण, कीथी तथा विंटरनित्त आदि ने सायणाचार्य के वेद व्याख्याता का ही प्रतीकांक किया है।

निरूक्तकार 'परवाकार' भाषाशाख के आध्यात्मिक माने गये हैं। उन्होंने अपने महाप्रसन्न वेदभाष्य में स्पष्ट लिखा है कि 'देव अनाडि, नित्य तथा अपीलेत ही है'।(ईश्वराणित) उनका कहना है कि 'देव का अर्थ समझने चाहने के बाद वेदांत करना पृथ्वी की तरह पीठ पर बोझा दोनों ही है; क्योंकि अर्थालापनर्त शब्द नहीं दे सकता। जिसे (ज्ञान) प्रकाश (मन) वेदांत हुआ है-मनों का अर्थ-, उसी का तौलिक एवं परंतुकिण कल्याण होता है। ऐसे वेदत्थान का मार्ग दर्शक निरूक्त है।

जयमी के देव विद्वान प्रो0 मैसूर कहते हैं कि 'विश्व का प्राचीनतम वाचमक वेद ही है, जो देविक एवं आध्यात्मिक व्याख्याता को कायमब भाषा में अबुल दीनी से प्रकट करने वाला कल्याणदर्शक है। देव विद्वान है।' निरूक्तकार - का निर्माण किया है (वेदवाणी) संदेह परमेश्वर ने ही पाराकाल वाणी में स्पष्ट कहा गया है- 'आन्य परमेश्वर वाणी वस्ममुरु है।' अर्थात इसमें से सवर्णजात उत्तम हुआ, ऐसी अनाडि वेदपूर विवाहारी का निर्माण जगन्निमाता ने सन्तक्रयाकारी- ऋषि वेद मनों के कर्त्ता नहीं अभिपु द्रष्टा ही थे - 'राधो मन्द्रार।' निरूक्तकार ने भी कहा है-वेद मनों के साधारण करने पर साधारण को ऋषि कहा जाता है - 'ऋषि दर्शनार।' इससे स्पष्ट होता है कि 'वेद का कर्तुल्य अय किसी के पास नहीं होने से वेद ईश्वराणित ही है, अपीलेत ही है।

भारतीय दर्शन शाख के मतानुसार शूष्क को माना गया है। वेद ने शब्द ही माना है, अति वेद अपीलेत है यह निश्चित होता है। निरूक्तकार कहते हैं कि 'दिनाजपुरावा नियतवाचो युष्ट, ऋषि वेद मनों के कर्त्ता नहीं अभिपु द्रष्टा ही थे - 'ऋषि दर्शनार।' इससे स्पष्ट होता है कि वेद का कर्तुल्य अय किसी के पास नहीं होने से वेद ईश्वराणित ही है, अपीलेत ही है।

ब्रह्मानुसार वेद के अर्थ नित्य है। उसका अनुक्रम नित्य है और उसकी उच्चारणपद्धति भी नित्य है-, इसीलिये वेद के अर्थ नित्य है। ऐसी वेदवाणी का निर्माण स्वयं परमेश्वर ने ही किया है।

शब्द की चार अवस्थाएं मानी गयी हैं-  
1. परा,  
2. प्रस्थनी,  
3. मध्यमा और  
4. वैखरी।

ऋ्रवेद-में इनके विषय में इस प्रकार कहा गया है -  
चतवारि वाक परिमति पदनि तानि विद्विन्धनाय ये मनीषिणः। गुहा त्रिणि निषिद्धा नेड्यन्त तुरियं वाचो मुनि वदन्तिना। अर्थात वाणी के चार रूप होने से उन्हें व्रजजीव ही जानते हैं। वाणी के दोन रूप गुहा हैं, ऋषिय रूप शब्दमय वेद के रूप में लोगों में प्रचारित होता है।

सूक्ष्मास्तिशुष्कज्ञान को परावाक कहते हैं। उसे ही वेद कहा गया है। इस वेदवाणी का साधारण महा तपस्वी ऋषियों को होने से इसे 'पश्यन्त्रिीवाक' कहते हैं। ज्ञानस्वरूप वेद का आविष्कार शब्दमय है।
इस वाणी का स्थूल स्वरूप ही 'मध्यमावक' है। वेदवाणी के ये तीनों स्वरूप अत्यन्त रहस्यमय हैं।

वचीव 'वचीवरवक' ही सामान्य लोगों की बोलचाल की है। गातस्थ्र ब्राह्मण तथा मण्डक्योपनिषद में कहा गया है कि वेद मनो के प्रत्येक पद में, शब्द के प्रत्येक अक्षर में एक प्रकार का अत्युत सामर्थ्य भरा हुआ है। इस प्रकार की वेद वाणी स्वयं परस्पर द्वारा ही निर्मित है, यह निरंजन हैः

शिव पुराण में आया है कि ॐ के 'अ' कार, 'उ' कार, 'म' कार और सूत्रमनद; इनमें से

1. क्रवेद,
2. यजुवेद,
3. सामवेद तथा
4. अर्थवेद नि से ही निर्मित हुआ। -(ॐ) सूत हुए। समस्त वाह्य ओकार: 'ओकारं विद्युत्मू' तो ईशरूप ही हैं।

श्रीमद भगवद्गीता में भी ऐसा ही उल्लेख हैवर्य सर्वभिन्न प्रातं सूते मणिगणना इत्य-

श्रीमद भगवदगीता में तो स्पष्ट कहा गया है। ग्रहमार्गवर्य वेदङ्गशिल्पी हैं- वेदो नारायणसाकात्।

अर्था वेद भगवान ने जिन कार्यों को करने की आज्ञा दी है वह धर्म है और उससे विपरीत करना अथवा है। वेद नारायण धर्म मूल है, ऐसा श्रीरं मूल है।

श्रीमद भगवदगीता में ऐसा भी वर्णित है। श्रीमद दया तितिक्षा च : सत्य : विया गाय वेदात तप -

ऋषवेद होमसूत अर्थात वेद ब्राह्मण (सदाचारी भी), दुधा, गाय, वेद, तप, सत्य, दम, प्रम, श्रद्धा, दया, सहनशीलता और ज्ञ- ये श्रीरं के स्वरूप हैं।

मनुस्मृति वेद को धर्म का मूल बताते हुए कहती है वेदो उखिलो धर्ममूल स्मृतिशील। तत्तदि मूलण -

आचारक्षे साधनामात्यनुसृतिव च। अर्थात समस्त वेद एवं वेदतं मनु, पराशर, याजवल्क्य आदि -

की स्मृति, शील, आचार, साधु ये सभी धर्मों के मूल हैं।- के आत्मा का संतोष - (धर्मिक) वाजवल्क्यस्मृति में भी कहा गया है। स्मृति भूमिका विधान सभ्यता च चाराचार्यात : सभ्यता - 

कामो धर्ममूलिमदं शतम्। आचार - (धर्मिक) ये पाँच धर्म के मूल हैं। इसीलिए - काम (धर्मविरुद्ध) भारतीय संस्कृति में वेद सर्वश्रेष्ठ स्थान पर है। वेद का प्रामाण्य सिद्ध किया जाता है।

वेद के प्रकार -

ऋषवेद - वेदों में सर्वप्रथम ऋषवेद का निर्माण हुआ। यह पद्धतमक है। यजुवेद ग्रहमय है और सामवेद गीतात्मक है। ऋषवेद में मण्डल 10 हैं, 1028 सूत हैं और 11 हजार मन्त्र हैं। इसमें 5 शाखायें हैं - शाखात्क, वास्कल, अध्याय, शाखायन, मंडकायन। ऋषवेद के दशम मण्डल में औषधिय सूत है। इसके प्राणों अर्थशास्त्र ऋषिय है। इसमें औषधियों की संख्या 125 के लगभग निर्दिष्ट है। जो कि 107 स्थानों पर पायी जाती है। औषधिय में सोम का विश्वास वर्ण है। ऋषवेद में च्वाक्रक्ष्म को पुनः बुध करने का कथानक भी प्रदूः है और औषधियों से मनो का नाश करना भी
समावेश है। इसमें चतुर विकित्स, पूर्व विकित्स, सौर विकित्स, मानस विकित्स एवं हवन द्वारा
विकित्स का समावेश है।

सामवेद : चार वेदों में सामवेद का नाम तीसरे क्रम में आता है। प्रारंभिक के एक मन्त्र में सामवेद से
भी पहले सामवेद का नाम आने से कुछ विवाद विद्युतों के एक के बाद एक रचना न मानकर प्रतीक का
स्वतंत्र रचना मानते हैं। सामवेद में गेव छूटों की अधिकता है जिनका गान यज्ञों के समय होता था।
1824 मन्त्रों के इस वेद में 75 मन्त्रों को छोड़कर शेष सब मन्त्र क्रियावेद से ही संकलित हैं। इस वेद को
संगीत शाखा का मूल माना। इसमें संगीत, वायु विद्युत, सौर विद्युत, मानस विद्युत एवं हवन के लिये गाया है।

यजुवेद : इसमें यज्ञ की असल प्रक्रिया के लिये गद्य मन्त्र हैं, जहां वेद मुख्यतः क्षरायों के लिये होता
है। यजुवेद के दो भाग हैं---
1. कृणि : वैश्वतिक प्रायोगिक का सम्पन्न कृणि से है। कृणि की चार शाखाएँ है।
2. शुक्ल : यज्ञविद्युत कृणि का सम्पन्न शुक्लसे है। शुक्ल की दो शाखाएँ है। इसमें 40 अरूण हैं।

अथवेद : इसमें ज्ञान, चतुरंत्रा, आरोग्य, यज्ञ के लिये मन्त्र हैं, जहां वेद मुख्यतः व्याप्तियों के
लिये होता है। इसमें 20 काव्य हैं। अथवेद में आठ खण्ड आते हैं जिनमें भेषज वेद एवं धातु वेद ये
दो नाम पूज्य है। वेद की मानव समस्या के लगभग सबसे पुराने लिखित दस्तावेज हैं। वेद ही धर्म
में सर्वोच्च और सर्वोषत मध्यग-थः। सामान्य भाषा में वेद का अर्थ है "ज्ञानज्ञान : वस्तुतः "
रूपी-मन के अज्ञान-वह प्रकाश है जो मनुष्य अन्धकार को नष्ट कर देता है वेदों को इतिहास का।
ऐसा सोत कहा गया है जो पूर्वपीढ़िक ज्ञानवेद शाखा संक्रमण के दिन। ज्ञान का अथाह भंडार है-
शाख से संचित है अथवा इस एक मन्त्र शाखा में ही सभी प्रकाश का ज्ञान समावेश है। इस भाषा में परमसत्ता
कृया जिन्हें अवधारण उपर्युद्ध कहा गया है, उन्हें मनों के गुढ़ रहस्यों को ज्ञान कर, समझ कर, मनन कर
उनकी अनुप्रमित कर उस ज्ञान को जिन ग्रंथों में संकलित कर संसार के समक्ष प्रस्तुत किया। इस प्रकार,
"वेदकहलाये।" एक ऐसे भी मान्यता है कि इन मनों को परमार्थने प्रार्थना कृतियों को प्रास्तन्त्य
रूप से सुनाया जाता है वेदों को शृद्धिभी कहा जाता है। इस जगत, जीवन एवं परमपिता
परमार्थने इस सभी का वास्तविक ज्ञान "वेद" में ही प्राप्त होता है।

बोध प्रश्न

1. वेद शाखा किस धातु से बना है?
   क. बाह्य विद्युत, ग. भू, घ. दृष्टा

2. समस्त वैदिक धर्म कितने भागों में विभक्त है?

उत्तराखण्ड मुक्ति विश्वविद्यालय
क. 3  ख. 4  ग. 5  घ. 6
3. वेद शब्द में कौन सा प्रत्यय है?
क. गर  ख. घञ्च  ग. यु  घ. कोई नहीं
4. वेदों की संख्या कितनी है?
क. 3  ख. 4  ग. 5  घ. 6
5. आर्य समाज की स्थापना किसने की थी?
क. राजा राम मोहन राय  ख. महिषोद्वार  ग. िववेकानन्द  घ. रामकृत्ति परमहंस

वेद क्या हैं?
वेद भारतीय संस्कृति के बै ग्रन्थ हैं, जिनमें ज्योतिष, गणित, विज्ञान, धर्म, औषधि, प्रकृति, खगोलशास्त्र आदि लगभग सभी विषयों से समबद्ध ज्ञान का भंडार भरा पड़ा है। वेद हमारी भारतीय संस्कृति की रीढ़ है। इनमें अनंत से समन्वित उपाय तथा जो इच्छा हो उसके अनुसार उसे प्राप्त करने के उपाय संग्रहीत है। लेकिन जिस प्रकार किसी भी कार्य में मेहनत लगती है, उसी प्रकार इन रन रूपी वेदों का श्रममुद्दित अध्ययन करके ही इनमें संकलित ज्ञान को मनुष्य प्राप्त कर सकता है।

वेद मंथों का संकलन और वेद गीत संथाय ऐसी मात्रा है कि वेद प्रारंभ में एक ही था और उसे पढने के लिए सुविधानुसार चार भागों में विभाजन किया गया! ऐसा श्रीमद्भागवत में उल्लिखित एक श्रोक्त द्वारा ही स्पष्ट होता है! इन वेदों में हजारों मन और रचनाएं हैं जो एक ही समय में समन्वित: नहीं रची गयी होंगी और न ही एक अर्थ द्वारा! इनकी रचना अनंत समय-समय पर ऋषियों द्वारा होती रही और वे एकत्रित होते गए।

शतपथ ब्राह्मण के श्रोक्त के अनुसार अर्थि, वायु और सूया ने तपस्या की और ऊज्ज्वल, यजुर्वेद, याज्ञवल्क्य और अथवावेद ओर प्राप्त किया।

प्रथम तीन वेदों को अर्थि, वायु और सूया से जोड़ा गया है। इन तीनों नामों के ऋषियों से इनका समन्वय संस्कृति द्वारा गया है, क्योंकि इसका कारण यह है कि अर्थि उस अंधकार को समाप्त करती है जो अज्ञान का अंधेरा है। इस कारण यह ज्ञान का प्रतीक मन गया है। वायु: चालायमान है। उसका कम चलना (भवन) है। इसका तात्पर्य है कि कम अनुभव कार्य करना। इसलिए यह कम से समन्वित है। सूया सबसे तेजयुक्त है जिसे सभी भ्रम करते हैं। नतमस्तक होकर उसे पूजते हैं। इसलिए कहा गया है कि वह पुरजनार अर्थवन्य उपासना के योग्य है। एक ग्रन्थ के अनुसार ब्रम्हाजी के चार मुखों से चारों वेदों की उत्पत्ति हुई।

१. ऊज्ज्वल
ऊज्ज्वल सबसे पहला वेद है। इसमें धर्ती की भौगोलिक स्थिति, देवताओं के आवाहन के मन्त्र है।
इस वेद में 1028 ऊज्ज्वल (मंत्र) और 10 मंडल (अध्याय) है। ऊज्ज्वल की ऋषियों में देवताओं की प्रार्थना, स्तुतियाँ और देवतीक में उनकी स्थिति का वर्णन है।


2. यजुवेद

यजुवेद में यज्ञ की विधियाँ और यज्ञों में प्रयोग किए जाने वाले मंत्र हैं। यज्ञ के अलावा तत्त्वज्ञान का वर्णन है। इस वेद की दो शाखाएं हैं शुक्ल और कृष्ण। 40 अध्यायों में 1975 मंत्र हैं।

3. सामवेद

साम अर्थात रूपायण और संगीत। सौभाग्य और उपासना। इस वेद में समावेद की अचारों (मंत्रों) का संगीतमय रूप है। इसमें मूलतः संगीत की उपासना है। इसमें 1875 मंत्र हैं।

4. अथवेद

इस वेद में रहस्यमय विद्याओं के मंत्र हैं, जैसे जादू, चमत्कार, आयुर्वेद आदि। यह वेद सबसे बड़ा है, इसमें 20 अध्यायों में 5687 मंत्र हैं।

वेद प्राचीन भारत में रचित साहित्य हैं जो हिन्दुओं के प्राचीनतम और आधारभूत धर्मग्रन्थ भी हैं।

भारतीय संस्कृति में सनातन धर्म के मूल और सब से प्राचीन ग्रन्थ हैं जिन्हें ईश्वर की वाणी समझा जाता है। वे आदि को अग्रदौत (इससे कोई व्यक्ति न कर सकता हो, यानि ईश्वर कृत) माना जाता है तथा इन्हें देवताओं का रचना माना जाता है। इन्हें सृजनात्मक भी कहते हैं जिसका अर्थ है ‘सुना हुआ’। अन्य हिन्दू ग्रन्थों को स्मृति कहते हैं यानि मनुष्यों की बुद्धि या स्मृति पर आधारित। ये विश्व के उपासना धारियों में हैं जिनके निश्चित उपासना अर्थ विदित यानि ज्ञान के संग हैं।

अथवेद के असल मंत्र को संभवता कहते हैं। वैदिक संगीत के अंतराल के काल के बारे में इन्हें इस रूप में जाना जाता है। इस वेद का उपनिष्ट को विभाजन इस प्रकार है:

ऋग्वेद - इसमें देवताओं का आह्मन करने के लिये मंत्र हैं।

सामवेद - इसमें यज्ञ के लिये संगीतमय मंत्र हैं।

यजुवेद - इसमें यज्ञ की अपस्रक्रिया के लिये गद्य मंत्र हैं।

अथवेद - इसमें जादू, चमत्कार, आरोहा, यज्ञ के लिये मंत्र हैं।

वेद के असल मंत्र भाग को संभता कहते हैं। वैदिक साहित्य के अनुसार उस पर लिखे ब्रह्मी शब्दों के कई उद्धिष्ठ, आर्यक तथा उपवेद आदि भी आते जिनका विरचन नीचे दिया गया है। इनकी भाषा संस्कृत है जिसे अपनी अलग पहचान के अनुसार वैदिक संस्कृत कहा जाता है - इन संस्कृत शब्दों के प्रयोग पर अर्थ कलान्तर में बदल गए या तुच्छ या वृद्ध हो गए माने जाते हैं। ऐतिहासिक रूप से प्राचीन भारत और हिन्दू-आर्य जाति के बारे में इनको एक अच्छा संदर्भ माना जाता है। संस्कृत भाषा के प्राचीन रूप को लेकर भी इनका साहित्यिक महत्त्व बना हुआ है।

वेदों को समझना प्राचीन काल में भारतीय और बाद में विश्व भर में एक विवाद का विषय रहा है। प्राचीन काल में, भारत में ही, इसी विवेचना के अंतर के कारण कई मत बन गए थे। मध्ययुग में भी इसके भाषाएँ (अनुवाद और व्याख्या) को लेकर कई विवाद, उत्सव शुरु हुए। कई लोग इसमें वर्णित चरित्रों को पूर्व और मूर्त रूपक आरंभिक समझते हैं जबकि दायानु दस्तबद्ध संस्थान सन्दिग्ध अन्य कईथौं का मत है कि इनमें वर्णित चरित्र (जैसे अमिन, ईंद्र आदि) के एकमात्र ईश्वर के ही रूप और नाम हैं। इनके अनुसार
देव शाब्द का अर्थ है ईश्वर की शक्ति (और नाम) ना कि मूर्ति-पूजनीय आराध्य रूप। मध्यकाल में रूढ़िक व्याख्याओं में साधन का रूप भाषा बहुत मान्य है। गृहीत कार्त्ते के जैनियों, व्यास इवादि ऋषियों ने वेदों का अनुच्छेद जाना जाता है। यूरोप के विश्वास के बारे में मत हिन्द-आर्य जाति के इतिहास की विज्ञान से प्रेषित रही है। ईरान और भारत में आर्य शाब्द के अर्थ में बोधी प्रभुता पाई जाती है। जहाँ वे ईरान में ईरानी जाति का श्रेष्ठ खिल वहीं भारत में वे कुशल, विश्वास और संपूर्ण पुलक को जताता है। अध्वर्यवाद सदी उपरंतु यूरोपीयों के बाद और अपनियों में रूचि आने के बाद भी इनके अर्थ पर विश्वास में असहमत बनी रही है। गृहीत कार्त्ते से भारत में वेदों के अध्ययन और व्याख्या की परम्परा रही है। हिन्दू धर्म अनुसार आर्ययुग में प्राणात्मिक से लेकर जैनियों तक के ऋषि मुनियों ने शाब्दों के रूप में इन्हें को माना है और इनके आधार पर अपने अनुयायों का निर्माण भी किया है। व्यास, रामानुज आदि को प्राचीन कार्त्ते के विश्वास की रचना कहते हैं। वेदों के विविध होने वाले सात ऋषियों के ध्यान में आने के बाद इनकी व्याख्या करने की परम्परा रही है। इसी के संस्कृत रूप में आर्यमण, अन्यथा, उपनियों, इतिहास आदि महाग्राह्य वेदों का व्याख्यान स्वरूप चेताए। गृहीत कार्त्ते और मध्ययुग में शाब्द पहले इसी व्याख्या और अर्थातक के कारण हैं। मुख्य विषय - देव, अमुन, दृढ़, विष्णु, भीम, सत्तवी इवादि जैसे शाब्दों को लेकर उपासना और विज्ञान वेदों के कारण है। जीव, धर्म, प्रकृति इन तीन अनादि नित्य सर्व्षों का निज स्वरूप का अश्वर्त में वेद केवल वेद से ही उपलब्ध होता है। ऋषिदेव: कोटी कणाद "तद्वन्दनात्मादाहस्य प्राणात्मण्य" और "बुधपूर्व वाच्यकृतिववेदि" कहकर वेद को दर्शन और विज्ञान भी स्रोत माना है। हिन्दू धर्म अनुसार सबसे प्राचीन नियमविधाता महार्षि मनु ने कहा वेदों खिलो धर्ममूलम् - खिलरत्हिति वेद अथोतू मूल संहिता रूप वेद धर्ममार्ग का आधार है।

न केवल धार्मिक किन्तु ऐतिहासिक दृष्टि से भी वेदों का असाधारण महत्व है। वैदिक युग के आयों की संस्कृति और स्वतंत्र जानने का एक साधन है। मानव-जाति और विश्राम: आयों ने अपने शीशाव में धर्म और समाज का किंस प्रकार विकास किया इसका ज्ञान वेदों से मिलता है। विश्राम के अनुसार से इसके प्राचीनतम गोरु पुलक नहीं है। आर्य-भाषाओं का मूलस्वरूप निर्माण करने में वैदिक भाषा अत्यधिक सहायक सिद्ध हुई है। यूरोप के कई विश्वासों ने संस्कृति और आर्यमणों और जाति के बारे में जानने के लिए वेदों का अध्ययन किया है। इसके मूलधार जैसे विश्वासों को अनुसार आयों के बाद संस्कृति भाषा और यूरोपीय शाब्दों और व्याख्यान का विश्वण किया था। इसके अनुसार लैटिन, ग्रीक, जर्मन आदि संस्कृत कई यूरोपीय, फारसी और संस्कृत का मूल एक रहा होगा।

इस सिद्धांत के प्रमाण लिए कई शाब्दों का उल्लेख किया जाता है।

इसी प्रकार विष्णु, माता, भाई, पारी इवादि जैसे शाब्दों के लिए भी समान शाब्द मिलते हैं। लेकिन कई शाब्दों के बिलकुल मेल नहीं खाने जैसे कारणों से इस सिद्धांत को संपूर्ण मान्यता नहीं मिली है। सिद्ध धार्मिक सबूत के विनाश का एक कारण आर्य जाति का आक्रमण माना जाता है। लगभग इसी
ब्राह्मण के समय 1900 ईसापूर्व में यूनान और ईरान में एक नई मानव जाति के आगमन के चिंता मेलते हैं। लेकिन पक्ष में प्रमाणों के कमी की वजह से ये नहीं सिद्ध हो पाया है कि वे वास्तव में एक ही मूल से निकली मानव जाति के समूह थे या नहीं।

वैदिक बाइबिल और विभाजन

ब्राह्मण काल में वेद चार माने जाते हैं। बन्द इन चारों को मिलाकर एक ही 'वेद ग्रंथ' समझा जाता था।

एक एवं पुरा वेदसर्वाय: प्रणव : - महाभारत

बाद में वेद को पढ़ना बहुत कठिन प्रतित होने लगा, इसलिए उसी एक वेद के तीन या चार विभाग किए गए। तब उनको 'वेदन्त' अथवा 'चतुर्वेद' कहते लगे।

वेद ने तीन अपरयुग के पूर्व वेद के उपयोग को गत उस एक वेद के चार विभाग कर दिये और इन चारों विभागों की शिक्षा चार शिष्यों को दी। ये ही चार विभाग क्रेवेद, यजुवेद, सामवेद और अथवेद के नाम से प्रसिद्ध हैं। पैत, वैषाण्य, जैमिनी और सुमन नामक चार शिष्यों की क्रमशः ऋवेद, यजुवेद, सामवेद और अथवेद की शिक्षा दी। इन चार शिष्यों ने शाक्त आदि अपने भिन्न-भिन्न शिष्यों को पढ़ाया। इन शिष्यों के द्वारा अपने-अपने अधीन वेदों के प्रचार और संरक्षण के कारण वे शाखाएँ उनके नाम से प्रसिद्ध हैं। वेदों को तीन भागों में वांटा जा सकता है - ज्ञानकाण्ड, उपासनाकाण्ड और कर्मकाण्ड।

वेदन्ती

विश्व में शब्द-प्रयोग की तीन शैलियाँ होती हैं, जो पद्ध (कविता), गद्ध और गान-सूत्र से प्रसिद्ध हैं। पद्ध में अक्ष-संख्या तथा पाद एवं विराम का निक्षित नियम होता है। अतः निक्षित अक्ष-संख्या तथा पाद एवं विराम वाले वेद-मन्त्रों की संख्या 'ऋक्ष' है। यह मन्त्रों में छन्द के नियमानुसार अक्ष-संख्या तथा पाद एवं विराम क्रियान्त्य है। ये मन्त्रों में 'यजुः' कहलाते हैं और ये मन्त्र गनात्मक हैं, जिन मन्त्रों में 'साम' कहलाते हैं, इन तीन प्रकार की शब्द-प्रकाशन-शैलियों के आधार पर ही तीन अथवा एक लोक में वेद के भिन्न 'त्रयी' शब्द का भी व्यवहार किया जाता है। वेदों के मंत्रों के 'पद्ध', 'गद्ध' और 'गान' ऐसे तीन विभाग होते हैं। हर एक भाषा के प्रथम में पद्ध, गद्ध और गान ऐसे तीन भाग होते हैं। ऐसे ही ये वैदिक बायबिल के तीन भाग हैं।

१- वेद का पद्ध भाग (ऋवेद, अथवेद)
इनको 'वेदनयी' कहते हैं, अर्थात् ये वेद के तीन विभाग हैं। ऋवेद, यजुवेद और सामवेद यह 'यजु' विद्या है। इसका भाव यह है कि ऋवेद पदासंग्रह है, यजुवेद गद्यसंग्रह है और सामवेद गानसंग्रह है।

इस ऋवेद में अथवंसेद सममिलत है, ऐसा समझना चाहिए। इसका कारण यह है कि अथवंसेद भी पदासंग्रह है।

यजुवेद गद्यसंग्रह है, अतः इस यजुवेद में जो ऋवेद के छंदोबूज मंूग हूआ, उनको भी यजुवेद पढ़ने के समय गद्य जैसा ही पढ़ा जाता है।

पूह वेद का गत्नय 9 मूलक वैद्यक शृंग है। वेद के 9 भागों में अनेक शाखाएं बतायी गई हैं। यथा ऋवेद कूंग 21, यजुवेद कूंग 101, सामवेद कूंग 1001, अथवंसेद कूंग 91 इस 9कार 1131 शाखाएं हैं। परन्तु 12 शाखाएं ही मूल ग्रन्थों में उपलब्ध हैं। वेद की प्रत्येक शाखा की वैदिक शब्द राशि चार भागों में उपलब्ध है। 1. संहिता 2. ब्राह्मण 3. आरण्यक 4. उपनिषद्। इसमें संहिता को ही वेद माना जाता है। शेष वेद के अनेक शाखाएं (नीचे विवरण दिया गया है) ।

वेद के 4 भेद हैं- ऋवेद, यजुवेद, सामवेद एवं अथवंसेद। प्रथम वेद की अनेक शाखाएं बतायी गयी हैं। यथा ऋवेद की 21, यजुवेद की 101, सामवेद की 1001, अथवंसेद की 91 इस प्रकार 1131 शाखाएं हैं। परन्तु 12 शाखाएं ही मूल ग्रन्थों में उपलब्ध हैं। वेद की प्रत्येक शाखा की वैदिक शब्द राशि चार भागों में उपलब्ध है।

वेद के 9 भेद हैं- कृष्ण यजुवेद और शुश्रुत यजुवेद। कृष्ण यजुवेद का संकलन महिषासुर वेद व्यास ने किया है। इसका दूसरा नाम तैतिरिय संहिता भी है। इसमें मंत्र और ब्राह्मण भाग मिश्रित हैं। शुश्रुत यजुवेद - इसे सूभृत्व ने वाजवल्कय को उपदेश के रूप में दिया था। इसमें 15 शाखाएं थीं परन्तु वर्तमान में माध्यमिन को जिसे वाजसनेयी भी कहते हैं प्राप्त हैं। इसमें 40 अध्याय, 303 अनुवाद एवं 1975 मंत्र हैं। अनंत चालीसवां अध्याय ईशावासयोगिनिद है।

सामवेद

यह गेय ग्रन्थ है। इसमें गान विद्या का भण्डार है, यह भारतीय संगीत का मूल है। ऋचाओं के गान
को ही साम कहते हैं। इसकी 1001 शाखाएं थीं। परन्तु आजकल तीन ही प्रचलित हैं - कोशुमीय, जीम्मीय और रागपरमीय। इसके पूरी तरह से उत्तरार्थिक में बांटा गया है। पूर्वार्थिक में चार काण्ड हैं - आमेर काण्ड, ऐंड्र काण्ड, परमान काण्ड और आरण्य काण्ड। चारों काण्डों में कुल 640 मंत्र हैं। फिर महानामन्यार्थिक के 10 मंत्र हैं। इस प्रकार पूरीर्थिक में कुल 650 मंत्र हैं। छ: प्रपाठक हैं।

उत्तरार्थिक को 21 अंशों में बांटा गया। नौ प्रपाठक हैं। इसमें कुल 1225 मंत्र हैं। इस प्रकार सामवेद में कुल 1875 मंत्र हैं। इसमें अधिकतम मंत्र त्रुङ्कु में लिए गए हैं। इस उपासना का प्रवर्तक भी कहा जा सकता है।

अथवेद

इसमें गणित, विज्ञान, आयुर्वेद, समाज शास्त्र, कृषि विज्ञान, आदि अनेक विषय वर्णित हैं। कुछ लोग इसमें मन्त्र-तंत्र भी खोजते हैं। यह वेद जहां शाक्ति जान का उपदेश करता है, वहीं मोक्ष का उपाय भी बताता है। इसे श्रेष्ठ बता भी कहते हैं। इसमें पुख़ुरुप में अध्यर्थ और आंगिस्थ अखिलों के मंत्र होते हैं। इसे प्रत्येक काण्ड में कई-कई सूत्र हैं। इसे वेद में कुल 5977 मंत्र हैं। इसकी आजकल दो शाखाएं मोक्षिक एवं पिप्पलाद हैं। अथवेद का विश्वास चारों वेदों का ज्ञात होता है। इस में त्रुङ्कु का कार्य है, सामवेद का उपासना सामग्री करता है, ऐयुर्वेद का अध्ययन देव:कोटिकर्म का वित्ता करता है तथा अथवेद का ब्रह्म पूरे यज्ञ कर्म पर नियंत्रण रखता है।

चार उपवेद

1. स्थायत्ववेद इसमें स्थायत्वकला के विषय में जिसे बास्तु शास्त्र या बास्तुकला भी कहा जाता है। इसके अन्तर्गत आता है।
2. भौतिकवेद
3. गणितवेद
4. आयुर्वेद

वैदिक साहित्य के चार भाग

उपर वर्णित प्रत्येक वेद के चार भाग होते हैं। पहले भाग (संहिता) के अलावा हरेक में टीका अथवा भाष्य के तीन स्तर होते हैं। वे है -

- संहिता (मन्त्र भाग)
- प्रायोगिक- (ग्रह में कर्मकाण्ड की विवेचना)
- आरण्यक (कर्मकाण्ड के पीछे के उदेश्य की विवेचना)
- उपनिषद (परमेश्वर, परमात्मा-ब्रह्म और आत्मा के स्वभाव और सम्बन्ध का बहुत ही दार्शनिक और ज्ञानपूर्वक वर्णन)

वेद की संहिताओं में मंड़क्ष्टों में खड़ी तथा आड़ी रेखाओं लगाकर उनके उच्च, मध्यम, या मन्द
वेदों का विभाजन
आधुनिक विचारधारा के अनुसार चार वेदों की शब्द-राशि के विस्तार में तीन दृष्टियों द्वारा जाती है:

• याजिक,
• प्रायोगिक और
• साहित्यिक दृष्टि

याजिक दृष्टि
इसके अनुसार वेदों की शब्द-राशि का अनुशासन ही वेद के शब्दों का मुख्य उपयोग मान गया है। सूर्य के आरम्भ से ही यजुर्वेद में साधारणतया मन्त्रोच्चारण की शैली, मन्त्रांक एवं कर्म-विविधि में विविधता रही है। इस विविधता के कारण ही वेदों की शाखाओं का विस्तार हुआ है। यथा- कृष्णेद की २९ शाखा, यजुर्वेद की १०० शाखा, सामवेद की १००० शाखा और अथव्याशिक के ९ शाखा। इस प्रकार कुल १,२३१ शाखाएँ है। इस संख्या का उत्तरेख महर्षि पतन्त्रों ने अपने महाभाष्य में भी किया है।

उपयुक्त १,२३१ शाखाओं में से वर्तमान में केवल ४२ शाखाएँ ही मूल ग्रन्थों में उपलब्ध हैं:-

1. कृष्णेद की २९ शाखाओं में से केवल २ शाखाओं के ही ग्रन्थ प्राप्त हैं-
   1. शाक्तशाखा और-
   2. शाक्तवाणी शाखा।

2. यजुर्वेद में कृष्णयजुर्वेद की १०० शाखाओं में से केवल ४ शाखाओं के ग्रन्थ ही प्राप्त हैं-
   1. तैत्रियशाखा-,
   2. मैत्रियशाखा,
3. कठशाखा और-
4. कपिलशाखा-

3. शुक्लयजुरीसंहिता की १५ शाखाओं में से केवल २ शाखाओं के ग्रन्थ ही प्राप्त है-
   1. माध्यन्दिनीयशाखा और-
   2. काण्वशाखा।
4. सामवेद की १,००० शाखाओं में से केवल २ शाखाओं के ही ग्रन्थ प्राप्त है-
   1. कौथुमशाखा और-
   2. जैमिनीयशाखा।
5. अथवेद की ९ शाखाओं में से केवल २ शाखाओं के ही ग्रन्थ प्राप्त है-
   1. शौनकशाखा और-
   2. पैतर्यशाखा।

उपयुक्त १२ शाखाओं में से केवल ६ शाखाओं की अध्ययनशीली प्राप्त- हेशाकल- , तत्तत्त्वात्, माध्यदिनी, काण्व, कौथुम तथा शौनक शाखा। यह कहना भी अनुयुक्त नहीं होगा कि अन्य शाखाओं के कुछ और भी ग्रन्थ उपलब्ध हैं, किन्तु उनसे शाखा का पूरा परिचय नहीं मिल सकता एवं बहतसी शाखाओं के तो- नाम भी उपलब्ध नहीं है।

प्रायोगिक दृष्टि

इसके अनुसार प्रत्येक शाखा के दो भाग बताये गये है।
1. मन्त्र भाग रूप से- यज्ञ में साक्षात्-प्रयोग आती है।
2. ग्रन्थ भाग(आज्ञाययोग शब्द) जिसमें विकर्ताओं को, आरुणिक एवं स्तुति द्वारा यज्ञ करने की प्रवृत्ति उत्पन्न कराना, यज्ञार्थ करने की पद्धति बताना, उसकी उपपति और विवेचन के साथ उसके रहस्य का निर्देश करना है।

साहित्यिक दृष्टि

इसके अनुसार प्रत्येक शाखा की वैदिक शब्द-रशि का वर्गीकरण-
1. सहितान, ग्रन्थ, आरुणिक और
4. उपनिषद इन चार भागों में है।

बेद के अंग, उपांग एवं उपवेद

बेदों के सर्वांगीय अनुसीरण अनुसार के लिये शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निर्मल, छन्द और ज्योतिष- इन ६ अंगों के ग्रन्थ हैं। प्रतिद्वदूत, अनुपद, छन्दोमात्रा (प्रातिशाख्य), धर्मशाखा, न्याय तथा वैशेषिक- ये ६ उपांग ग्रन्थ भी उपलब्ध हैं। आयुर्वेद, धनुवेद, गान्धर्ववेद तथा स्थापत्यवेद- ये क्रमश: चारों बेदों के उपवेद काल्याण ने बतलाये हैं।
अलंकारमयी भाषा के बदले उनके वचन आसान लग्दा भगे। उूरूभ तराखूरूठ मुूठ त िवूरूगालय अअाचीन (1860) राजा राममोहन राय का सूअहवू्् सदी मूगठ मुग़ल बादशाह औरंगज़ेब के भाई िवदेशी /ऊ्55यास ने सतारा और वैिदक सािहूरूभय पर बहूरूठत अूरूठययन िकया। संिहताओं के अनुवाद मूगठ को लेकर बने इस िसूभांत मूगठ ऐितहािसक तूरूअय और काल िनधाूररण को िहूरूदी मूगठ एवम् िजूरूामूधूरूभूगू् मूगठ ूअअकािशत ऋूरूदवेद के सायण भाूद्द्य के ूअअकाशन को अथवूरवेद का चार िजूरूामूधूरूभू भाषा पूरवार के सन् १८७७ तहत और इनमूगठ विणूरूठत ूअरूकू् कू््2 को अलग चुनौती देकर कई ऐसे मत ूअअकट हूरूभए जो आज भी धािमूरक मत कहलाते इूरू9र के ूअभवूरूभू2 भाषागत ूिूरूभ से यही काल इन ूअ0ंथूरू्2 कूू्6 संिहता का मान िलया जाता है। शूरूोूरू2 कूू्6 वेदूरू्2 का िज़ूरूभ8 िकया है। कई बार कृूरूण - जैसा िक उपर िलखा है, अलग अथूरू भ मूगठ ूअठूरूभ समाज वेदूरू्2 के कई शूरूोूरू2 का समझना उत्तरा सरल नहूरू् रहा है। इसकी वजह से इनमें वर्णन भ्रोूकों को अलग-अलग अर्थ में व्यक्ति किया गया है। सबसे अधिक विवाद-वार्ता ईश्वर के स्न्हूरूभ, यानी एकमात्र या अनेक देवों के सदृश को लेकर हुआ है। यूरूपे के संस्कृत विब्दानों के व्याख्या भी हिन्द-आर्य जाति के सिद्धांत से प्रेरित रही है। प्राचीन काल में ही इनकी सता को चुनौती देकर कई ऐसे मत प्रकट हुए जो आज भी धार्मिक मत कहलाते हैं लेकिन कई रूपों में भिन्न हैं। इनका मुख्य अन्तर नीचे स्पष्ट किया गया है।

जैन - इनको मूर्ति पूजा के प्रचर्च माना जाता है। ये अहिंसा के मार्ग पर जोर देते हैं पर वेदों
को श्रेष्ठ नहीं मानते।

- बौद्ध - इस मत में महात्मा बुद्ध के प्रवर्तित ध्यान और तुषार को दृश्य का कारण बताया है। वे लोग ध्यान के महत्त्व को ये तो मानते हैं पर ईश्वर की सत्ता से नास्तिक हैं।

- शैव - वे लोग मूर्ति भवन के रूप दर्शन को समझने वाले। सनातन (यानि वैदिक) धर्म के मानने वाले दर्शन को एकमात्र ईश्वर का कल्याणकारी रूप मानते हैं, लेकिन शैव लोग रंगक देव के रूप जिसमें नदी बैल, जटा, बांधव इत्यादि हैं को विश्व का कारण मानते (हैं)।

- वैष्णव - विष्णु और उनके अवतारों को ईश्वर मानने वाले। बौद्ध मत विष्णु को एक ईश्वर का ही वो नाम बताते हैं जिसके अनुसार सर्व फल हुआ ईश्वर विष्णु कहलाता है।

- सिख - मुख्यतः उपनिषदों एवं मुस्लिम प्रथाओं पर ब्रह्म रखने वाले। इनका विश्वास एकमात्र ईश्वर में तो है, लेकिन वे लोग ईश्वर की वाणी नहीं समझते हैं।

यज्ञ

यज्ञ के वर्तमान रूप के महत्त्व को लेकर कई विद्वानों, मर्मों और भाषकारों में विवाद भाषा है। यज्ञ में आग के प्रयोग की प्राचीन पारसी पूजन विधि के इतना समान होना और हवन की अत्यधिक महता के प्रति विद्वानों में रूचि रही है।

देवता

देव शाखा का लेकर ही कई विद्वानों में असहमति रही है। कई मर्मों में (जैसे - शैव, वैष्णव और शाक्त) इसे महानमुक्ष के रूप में विश्व शक्ति प्राप्त साक्षर चरित्र मानते हैं और उनका मूर्ति रूप में पूजन करते हैं तो अन्य कई इसे ईश्वर (ब्रह्म, सत्य) के ही नाम मानते हैं। उदार धर्म भक्त अनिश्चित शाखा का अर्थ आग न समझने वाले अर्थ, प्रामाण्य यानि परमेश्वर समझते हैं। देवता शाखा का अर्थ दिव्य, यानि परमेश्वर (निराकार, ब्रह्म) की राशि से पूर्ण माना जाता है - जैसे पृथ्वी आदि। इसी मर्म में महादेव, देवता के अधिष्ठात्र होने के कारण ईश्वर को कहते हैं। इसी तरह सर्वजन व्यापक ईश्वर विष्णु और तत्त्व होने के कारण उसका कहलाता है। इस प्रकार ब्रह्म, विष्णु और महादेव किसी चरित्र के नाम नहीं बलिका ईश्वर के ही नाम हैं। इसी प्रकार गणेश (गणपति), ग्राजपति, देवी, बुद्ध, भक्त इवादि परमेश्वर के ही नाम हैं। ऐसे लोग मूर्तिपूजा के विरुद्ध हैं और ईश्वर को एकमात्र सत्य, सर्वोपरि समझते हैं।

अश्वमेध

अश्वमेध से हिसा और बलि का विचार आता है। यह कई व्यक्तियों की भी आश्रम निमंत्रण लगता है। क्योंकि कई स्थानीय गुडुडवादी हिंसा (और मांस भक्ति) से परहेज करते रहे हैं। कई मर्मों का मानना है कि मेघ शाखा में अधर्म का भी प्रयोग हुआ है जिसका अर्थ है अहिंसा। अन्य: मेघ का भी अर्थ कुछ और रहा होगा। इसी प्रकार अश्व शाखा का अर्थ घोड़ा न रहकर शक्ति रहा होगा। श्रीराम शाखा आचार्य कृत भाषाओं के अनुसार अश्व शाखा का अर्थ शक्ति, गो शाखा का अर्थ पोषण है। इससे
4.4 सारांश -

इस इकाई का अध्ययन करने के बाद आप सर्वविद्या का मूल वेद को समझ सकेंगे। वेदों में समस्त ज्ञानशील का भूमिकामूल है। वेद एवं उपवेद सर्वविद्यकल्याणार्थ मानवों के लिये ज्ञात में प्रतिपाद्य है। इसके मूल परम्परा एवं महत्व को आप इस इकाई के माध्यम से समझ पाएंगे। वेदों में प्रतिपाद्य अनेक विषयों का वर्णन इस इकाई में किया गया है। जिसका अध्ययन कर आप ततसम्बन्धित ज्ञान प्राप्त करने में समर्थ हो सकेंगे।

4.5 शब्दावली

वेद – विद्वंभसे ज्ञानयोग वेद शब्द की उत्पत्ति हुई है।
उपवेद – वेदस्य समीप उपवेदम्। प्रत्येक वेदों के उपवेद है।
सर्वविद्यामूल – सर्वविद्यामूल वेद को कहा गया है, जिससे समस्त ज्ञान एवं विज्ञान का उद्धव होता है।
शुद्धतावादी – जो शुद्धता को मानता हो।
सर्वविद्यकल्याण – सभी लोगों के लिये कल्याण
उदाहरणार्थ – उदाहरण के लिये।
उपवेद – वेद के समीप
अनुदात – स्वर का भेद
अश्च – घोड़ा

4.6 बोध प्रश्नों के उत्तर –

1. ख
2. क
3. ख
4. ख
5. ख

4.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
4.8 निबन्धात्मक प्रश्न
1- वेद शब्द से क्या तात्पर्य है। विस्तार से वर्णन कीजिये?
2- वेद के प्रकारों का विस्तार से वर्णन कीजिये।
इकाई – 5 पुराणों का परिचय

इकाई की रूपरेखा

5.1 प्रस्तावना
5.2 उद्देश्य
5.3 पुराण परिचय
पुराणों के प्रकार एवं महत्व
5.4 अभ्यास प्रश्न
5.4 सारांश
5.5 शब्दावली
5.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
5.7 सन्दर्भ प्रमाण सूची
5.8 निबंधात्मक प्रश्न
5.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई प्रथम खण्ड के पचंम इकाई ‘‘पुराणों का परिचय’’ नामक शीर्षक से उद्धृत है। इससे पूर्व की इकाईयों में अपने वेदों का अध्ययन कर लिया है। सनातन परम्परा में पुराणों की संख्या 18 है। वस्तुतः पुराण धर्मसम्बन्धित आध्यात्मिक प्रणाली है, जिसमें कि विभिन्न कालकालिनों में भगवान की अनेक कथाओं का वर्णन किया गया है। पुरा न्य पुराणम्। पुरा का अर्थ होता है – अतीत तथा अन्त संयुक्त होता है कहना। अतीत का वर्णन जिसमें कहा गया हो उसे पुराण कहते हैं। कर्मकाण्ड जगत में जब आप वेदों का अध्ययन करते हैं, तो पाते हैं कि उसमें जगत के समस्त ज्ञान राशि समाहित है। वेद से हार कोई रोशन ज्ञान नहीं है। वर्तमान कालिक हैं यह दृष्टिगोचर नहीं हो पाता है, क्योंकि इसका कारण है कि मूल रूप से वेद का ज्ञान अब किशिंग लोगों के पास रह गया है। पुराण वेद एवं उपनिषद के परार्थ पुराण का बोध लेने वाला एक वृहत ज्ञान राशि का भूमिका है। इस इकाई के अध्ययन के परचात आप पुराण एवं पुराण से जुड़े अनेक विषयों का अध्ययन करें। आशा हो कि पाठक इस इकाई का अध्ययन करके इसके महत्वपूर्ण आदर्श समझ पाएँ।

5.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के परचात आप जान पाएँ कि –
1. पुराण किसे कहते है।
2. पुराण के कितने प्रकार है।
3. वेद एवं उपनिषद के परचात पुराण एक विशाल ज्ञान राशि का भूमिका है।
4. पुराण का महत्व क्या है।
5. पुराण धर्म का आध्यात्मिक प्रणाली है।

5.3 पुराण परिचय

पुराण सनातन परम्परा के धर्मसम्बन्धित आध्यात्मिक धर्मसम्बन्धित आध्यात्मिक प्रणाली है जिसमें स्वामी मुनि से लेकर वर्तमान प्रचलित मन्त्रतंत्र तक का वर्णन, सृष्टि-तत्त्व, लघु, प्राचीन रूपों, मुनियों और राजाओं के वृत्तान्त आदि निहित है। वेदों के परचात जगत में धर्म संस्थापनाध्यात्मिक महर्षि वेदव्यास जी के द्वारा अप्सरा पुराणों की रचना की गई है। भागवतमहापुराण में उद्धृत है –
अटारश पुराणपु व्यासेषु वचनदंपू जो स्मृति विभाग में आते हैं। भारतीय जीवन-धारा में जिन ग्रन्थों का महत्वपूर्ण स्थान है उनमें पुराण भक्ति-श्रद्धाओं के रूप में अत्यन्त महत्वपूर्ण माने जाते हैं। अटारश पुराणों में अलग-अलग देवी-देवताओं को केन्द्र मानकर पाप और पुण्य, धर्म और अधर्म, ज्ञान, और अज्ञान की गाथाएँ कही गई हैं। कुछ
पुराणों में सृष्टि के आरम्भ से अन्त तक का विवरण किया गया है। इनमें हिन्दू देवी-देवताओं का और पौराणिक मिथकों का बहुत अच्छा वर्णण है।

कर्मकाण्ड एवं मुहूर्त ज्ञान

पुराणों में वैदिक काल से चले आते हुए सृष्टि आदि संबंधी विचारों, प्राचीन राजाओं और ऋषियों के पर्यावरण पृथ्वी तथा कहानियों आदि के संग्रह के साथ साथ कलिपित कथाओं की विचित्रता और रोचक वर्णों द्वारा सांप्रदायिक या साधारण उपदेश भी मिलते हैं। पुराण उस प्रकार प्रमाण ग्रंथ नहीं हैं जिस प्रकार शृंखला, स्मृति आदि हैं।

पुराणों में विष्णु, ब्राह्मण, मृदु और भावनात्मक ऐतिहासिक कुंज—राजाओं की वंशावली आदि के साथ साथ कथा और भिन्नता के बहुत मूलभूत हैं और इनमें परमपर कहीं कहीं विरोध भी है। पुराण की ओर ऐतिहासिकों ने इंग्रजी शेष रूप से ध्यान दिया है और वे इन वंशावलियों की क्ष्यानी में लगे हैं।

शास्त्रविद्या एवं महिमा

पुराण वैदिक, भूतकाल और भविष्यकाल का देखा हुआ युग है जिसमें बहुत ही सुन्दर भूमि से लिखा गया है जिसमें धर्म में आपत्ति रहने वाले लोग धर्म प्राप्त मानते हैं और जो लोग बुद्धिजीवित होते हैं वह इसे विज्ञान के रूप में देखते हैं जिसको उदारता द्वारा आयु समझ सकते हैं पुराण में ९४ मनुष्य के बारे में वर्णित गया है तथा ही उसका आयु समझ सकते हैं, कौन से युग में कितने लोग आपको आकाश मंडल था वह बताता गया है उस समय कौन-२ से देवता हुए वह बताता गया है, पुराण में युग का आयु मूलभूत और पुनरुत्थान के साथ साथ अंत तक का आयु मूलभूत है और आने वाले युग के काल तक करने से रोकते हैं। पुराण वैदिक वेदों का विभाजन कर उसमें तुलकित है। पुराण वैदिक से विभाजित है।

विष्णुवस्तु

प्राचीनात्मक से पुराण देवताओं, ऋषियों, मनुष्यों - सभी का मार्ग ज्ञान करते रहे हैं। पुराण मनुष्य को धर्म एवं नीति के अनुसार जीवन ज्ञान व्यतीत करने की शिक्षा देते हैं। पुराण मनुष्य के कार्य और विलक्षण का उन्हें दुल्हन बनने से रोककर हैं। पुराण वस्तुतः वैदिक का विस्तार है। वेद बहुत ही जटिल तथा शुद्ध भाषा-शैली में लिखे गए हैं। वेदवास जी ने पुराणों की रचना और पुनर्चना की। कहा जाता है,
"पूर्णात्म पुराण" किसका अर्थ है, जो वेदों का पूरक हो, अर्थात् पुराण (जो वेदों की टीका है)। वेदों की जटिल भाषा में कहीं गई बातें को पुराणों में सरल भाषा में समझाया गया है। पुराण-सहित्य में अवतारवाद को प्रतिष्ठित किया गया है। निर्गुण निराकार की सत्य को मानते हुए सगुण साकार की उपासना करना इन ग्रंथों का विषय है। पुराणों में अलग-अलग देवी-देवताओं को केंद्र में रखकर पाप-पुण्य, धर्म-अधर्म और कर्म-अकर्म की कहानियाँ हैं। प्रेम, भक्ति, ध्यान, सेवा, सहनशीलता ऐसे मानवीय गुण हैं, जिनके अभाव में उनके समाज की कल्पना नहीं की जा सकती। पुराणों में देवी-देवताओं के अनेक स्वरूपों को लेकर एक विस्तृत विवरण मिलता है। पुराणों में सत्य को प्रतिष्ठित में दुर्भर का विस्तृत विचरण पुराणकारों ने किया है। पुराणकारों ने देवताओं की दृष्टि-वृत्तियाँ का व्यापक विवरण किया है लेकिन मूल उदेश्य सद्भावना का विकास और सत्य की प्रतिष्ठा ही है।

अष्टरह पुराण

पुराणों की संख्या अष्टरह हैं। विष्णु पुराण के अनुसार उनके नाम हैं—विष्णु, पद्म, ब्रह्म, शिव, भगवत, नारद, मर्केडेय, अमित, ब्रह्मवेदत, सिंह, वाराह, सकंद, वामन, कूमर्म, मस्कर्म, गुड़, ब्रह्मांड और भविष्य।

1. ब्रह्म पुराण
2. पद्म पुराण
3. विष्णु पुराण
4. शिव पुराण -- (वायु पुराण)
5. भगवत पुराण -- (देवीभागवत पुराण)
6. नारद पुराण
7. मर्केडेय पुराण
8. अमित पुराण
9. भविष्य पुराण
10. ब्रह्म वेदत पुराण
11. सिंह पुराण
12. वाराह पुराण
13. सकंद पुराण
14. वामन पुराण
15. कूमर्म पुराण
16. मस्कर्म पुराण
17. गुड़ पुराण
18. ब्रह्मांड पुराण
पुराणों में एक विचित्रता यह है कि प्रत्येक पुराण में अन्याही पुराणों के नाम और उनकी श्रृंखला संडता है। नाम और श्रृंखला संडता प्रचंड: सबकी मिलती है, कहाँ - कहाँ भेद है। जैसे कूम रूहुन में अभि के स्थान में बायुपुराण, महाकेश्वर में श्रीकृष्ण रूहुन और श्रीवीरेन्द्र में श्रीवैद्य भागवत के स्थान में नृसिंहपुराण।

पुराण के स्थान से आजकल दो पुराण शोधते हैं—एक भ्रूमभगवत, दूसरा देवीभगवत। कौन वास्तव में पुराण है इसपर झगड़ा रहा है। रामायण स्वस्मी ने 'दुर्जूनमुखचपेटिका' में सिद्ध किया है कि भ्रूमभगवत भी पुराण है इसपर काशीनाथ भट्ट ने 'दुर्जूनमुखमहाचपेटिका' तथा एक और पंडित ने 'दुर्जूनमुखपदुका' देवीभगवत के पक्ष में लिखी थी।

प्रमुख पुराणों का परिचय

पुराणों में सबसे पुराना विश्ववैद्यनाथ और रामदेश नहीं है। पुराण के पाँचो लक्षण भी उसपर ठीक ठीक घटते हैं। उसमें सृष्टि की उत्पत्ति और लय, मन्त्रयंत्र, भरतादिक खंड, वैदिक ऋषियों के गाथाओं, चंद्रवंश आदि का वर्णन है। कल्याण के राजाओं में मधुके मेर्या में उसपर ठीक ठीक है। इसमें सृष्टि के उपदेश और सृष्टि की दीर्घकालीन संस्कृति का वर्णन है। इसमें सृष्टि के उपदेश और सृष्टि की दीर्घकालीन संस्कृति का वर्णन है।

कृष्ण-लीलाओं का भी वर्णन है पर विलुप्त उस रूप में नहीं जिस रूप में भगवान में है।

कुछ लोगों का कहना है कि वायुपुराण ही शिवपुराण है क्योंकि आजकल जो शिवपुराण नामक पुराण या उपपुराण है उसका श्रृंखला २४,००० नहीं है, केवल ७,००० ही है। वायुपुराण के चार पाद हैं जिनमें सृष्टि की उत्पत्ति, कल्याण की उपदेश, सूर्यवंश, चंद्रवंश आदि का वर्णन है। कल्याण के राजाओं में मधुके मेर्या में उसपर ठीक ठीक है। इसमें सृष्टि के उपदेश और सृष्टि की दीर्घकालीन संस्कृति का वर्णन है।

लीलाओं का भी वर्णन है पर विलुप्त उस रूप में नहीं जिस रूप में भगवान में है।

महाभारत के भीतर तो जीवों के एकता, भक्ति का महत्व, सृष्टिलीला, बुद्धि और अपनी माता के प्रति बौद्ध भावानुसार ध्यान विशेष वंशावली, राज्यवर्त और ऋषिवंशावली, अवश्य जिसमें रूपवंश की भी प्रसंग है, ध्रुव, वेण, पृथु, प्रह्लाद इत्यादि की कथा, समुद्रमण आदि आक्रमण विषय हैं। पर सबसे बड़ा दशमंतु कंद है जिसमें कृष्ण की लीला का विश्वसन से वर्णन है। इसी स्कंद के आधार पर शृंगार और भक्तिसंस्कार में पूर्ण भृणचरित संबंधी संस्कृत और भाषा के अनेक ग्रंथ बने हैं। एकलाट कंद में यादों के नाम और बाहरें में क्षिति के राजचित्र का वर्णन है।

भागवत की लेखनशैली और पुराणों से भिन्न है। इसकी भाषा पाठ्यपुराण और साहित्य संबंधी चचमत्करों से भरी हुई है, इससे इसकी रचना कुछ पीछे की मानी जाती है।

उत्तराखण्ड मुक्ति विश्वविद्यालय

कर्मकाण्ड एवं मुहूर्त ज्ञान

BAKK – 101
अनिपुराण एक विलक्षण पुराण है जिसमें राजवंशावलियों तथा संबंध कथाओं के अतिरिक्त धर्मशास्त्र, राजनीति, राज-धर्म, प्रजा-धर्म, आयुर्वेद, व्याकरण, रस, अलंकार, राष्ट्र-विद्या आदि अनेक विषय हैं। इसमें तत्त्वविद्या का भी विस्तृत प्रकरण है। कलि के राजाओं की बंशावती विक्रम तक आई है, अवतार प्रसंग भी है। इसी प्रकार और पुराणों में भी कथाएँ हैं।

अध्याय प्रश्न

1. पुरा नवं में पुरा का अर्थ है -
   क. अवधी ख. प्राचीन ग. नवीन घ. कोई नहीं
2. पुराणों की कुल संख्या है।
   क. 13 ख. 16 ग. 17 घ. 18
3. सबसे बड़ा पुराण है -
   क. मार्कदेवान पुराण ख. नासवतर पुराण ग. लिङ्ग पुराण घ. स्कन्द पुराण
4. उपपुराण का अर्थ है -
   क. महापुराण ख. पुराण के समीप ग. स्कन्द पुराण घ. कोई नहीं
5. आचार्य का अर्थ होता है -
   क. कथा ख. खंडी ग. कविता घ. विवरण

बिष्णुपुराण के अतिरिक्त और पुराण जो आजकल मिलते हैं उनके विषय में संदेह होता है कि वे असल पुराणों के न मिलने पर थोड़े से न बनाए गए हों। कई एक पुराण तो मत मतांतरों और संप्रदायों के राज्यों से भी हैं। कई देवताओं की प्राकृतता स्थापित करता है, कई किसी देवता की प्राकृति स्थापित करता है, कई किसी की। नासवतर पुराण का जो परिचय मत्स्यपुराण में दिया गया है उसके अनुसार उसमें रथंतर रथ और बहुत अवतार की कथा होनी चाहिए। जो नासवतर आजकल मिलता है उसमें यह कथा नहीं है। कृष्ण के वृंदावन के राजस्व से जिन भक्तों की कृपा नहीं हुई थी उनके लिए गोलों में सदा होने वाले रास का उसमें वर्णन है। आजकल के वह बहुत उम्मीदवार बुजुर्ग माहात्म्यों के आगे के कई सौ वर्ष पीछे का है क्योंकि इसमें 'जुलाहा' जाति की उपस्थिति का भी उल्लेख है- 'प्लक्ष्ळत् कुल्चक्षपित्तत् जोता जातिर्वृत्ति' है (१०, १२१)। नासवतर पुराण में तीर्थों और उनके माहात्म्य का वर्णन भव्य अदिक हैं, अन्तंत वासुदेव और पुष्पोम (जगन्नाथ) माहात्म्य तथा उन्होंने से ऐसे तीर्थों के माहात्म्य लिखे गए हैं जो प्राचीन नहीं कहे जा सकते। 'पुष्पोमप्रसाद' से अवश्य जगन्नाथ जी के विशाल मंदिर की ओर राह ही इसारा है जिसे गांगेय मंड वेरा के रिजा चोड़ाना (सन् १०७७ ई) ने बनवाया था। मत्स्यपुराण में दिये हुए एक आजकल दक्षिण के पश्चिम पुराण में भी पूरे नहीं मिलते हैं। वैष्णव संप्रदायों के द्वारा इसमें बहुत सी बातें हैं। जैसे, पाण्डित्य,
मायावदनिता, तामसशाखा, पुराणवर्णनियादि। वैशेषिक, न्याय, सांख्य और चार्कित तामस शाखा कहा गया है और यह भी बताया गया है कि देवों के विनाश के लिये बुद्ध रूपी विषु ने असत् बौद्ध शाखा कहा। इसी प्रकार मस्त, कौम्, लिंग, शिव, सकंद और अथि तामस पुराण कहे गए हैं। संसार यह कि अधिकांश पुराणों का वर्तमान रूप हजार वर्ष के भीतर बना है। सबके सब पुराण सांप्रदायिक है, इसमें भी कोई संदेह नहीं है। कई पुराण (जैसे, विषु) बहुत कुछ अपने प्राचीन रूप में मिलते हैं पर उनमें भी सांप्रदायिकों का बहुत सी बातें बढ़ा दी हैं।

पुराणों का काल एवं रचयिता

यद्यपि आजीवन जो पुराण मिलते हैं उनमें से अधिकतर पीछे से बने हुए या प्रकटिक विषयों से भरे हुए हैं तथापि पुराण बहुत प्राचीन काल से प्रचलित थे। वृहदार्थक ओर शतपथ ब्राह्मण में लिखा है कि गीती लकड़ी से जैसे धूआं अलग अलग निकलता है वैसे ही महान्यूत्त में निःशास्त्र से अवेद, वयुक्त सामवेद, अर्धवंशिक, इतिहास, पुराणविद्या, उपनिषद, श्लोक, सुत्र, व्याख्यान और अनुवाद बने हुए। छांदों उपनिषदों में भी लिखा है कि इतिहास पुराण वेदों में पंचांग बने हैं। अथवा प्राचीन काल में वेदों के साथ पुराण भी प्रचलित थे जो यह आदि के अवसरों पर कहे जाते थे। कई बातें जो पुराण केली गई हैं, वेदों में भी हैं। जैसे, पहले असत था और कुछ नहीं था यह सर्ग या सृजितस्वरूपों के निःशास्त्र से भरे हैं। वेदांत संग्राम, उवसी पुराणविद्या परा इतिहास है। महाभारत के आदि पवेद में (१ । २३३) भी अनेक आदि के नाम और कुछ विषय निम्नकर कहा गया है कि इनके तीर्थ संहिताओं द्वारा पुराण में कहे गए हैं। इससे कहा जा सकता है कि महाभारत के रचनाकाल में भी पुराण थे। मनुमृत में भी लिखा है कि पितृकायों में वेद, धर्मशाखा, इतिहास, पुराण आदि सुनाने चाहिए।

अब प्राप्त यह होता है कि पुराण हैं जिनके नाम उपनिषदों के अंतर्गत रेवा माहा कहा गया है। इसके आगे की बात का पता लगा है। उससे कहा जा सकता है कि महाभारत के रचनाकाल में भी पुराण थे। इससे कहा जा सकता है कि महाभारत के रचनाकाल में भी पुराण थे। मनुमृत में भी लिखा है कि पितृकायों में वेद, धर्मशाखा, इतिहास, पुराण आदि सुनाने चाहिए।

अब प्राप्त यह होता है कि पुराण हैं जिनके नाम उपनिषदों के अंतर्गत रेवा का संहिता का संकलन किया था। पर उससे कहा जा सकता है कि उसके तीर्थ संहिताओं के नाम से भरे हुए छह पुराणसंहिताओं का संकलन किया था। जिन तीर्थ संहिताओं के नाम के हाथ में दी लोमहर्षण के छह शब्दों—वसुमति, अभिनव, मित्राकर्म, शास्त्रायान, अकृतलक्ष्य और सावणी। इनमें से अकृत-ग्राह, सावणी और शास्त्रायान ने लोमहर्षण के पहले हुए पुराणसंहिताओं के आधार पर और एक संहिता बनाई। वेदांत ने जिस प्रकार मंगों का संग्रहकर उन का संहिताओं में विभाग किया उसी प्रकार पुराण के नाम से चले आते हुए दूसरा का संग्रह कर पुराणसंहिता का संकलन किया। उसी एक संहिता को लेकर सूत के चेलों के तीन और संहिताओं बनाई। इन्हीं संहिताओं के आधार पर अठारह पुराण बने होंगे। मस्त, विष्णु, ब्रह्मांड आदि सब पुराणों में ब्रह्मपुराण पहला कहा गया है। पर जो ब्रह्मपुराण आजकल प्रचलित है वह कैसा है यह पहले कहा जा चुका है। जो कुछ हो, यह तो ऊपर लिखे
प्रमाण से सिद्ध है कि अटार पुराण बदन्यास के बनाने नहीं है। जो पुराण आजकल मिलते हैं उनमें विण्पुरण और व्याख्यापुरण की रचना औरं औरं से प्राचीन ज्ञान पहुँची है। विण्पुरण में 'भविष्य राजवंश' के अंतर्गत पुराण के राजाओं तक का उल्लेख है इससे वह प्रकरण इसी की छठी शताब्दी के पहले का नहीं हो सकता। जाने के आगे जो पाली राम है वहाँ के हिंदुओं के पास व्याख्यापुरण मिला है। इन हिंदुओं के पूर्व इसी की पाँचवी शताब्दी में भारतवर्ष में पूर्व के दीर्घों में जाकर बसे थे।

बालीवाले व्याख्यापुरण में 'भविष्य राजवंश प्रकरण' नहीं है। उसमें जनमेजय के प्रेत अधिशीमकृथ्ण तक का नाम पाया जाता है। यह बात ध्यान देने की है। इससे प्रकट होता है कि पुराणों में जो भविष्य राजवंश है वह पीछे से जोड़ा हुआ है। यहाँ पर व्याख्यापुरण की जो प्राचीन प्रतियों मिलती है देखना चाहिए कि उनमें भूत और वर्तमानकलिक क्रिया का प्रयोग कहाँ तक है।

'भविष्यराजवंश वर्णन' के पूर्व उनमें 'श्रेोक' मिलते हैं— तत्स्य पुत्रः शतानीको बलवान सत्यविक्रमः।

धर्मधेराः जातः पुपुरणः।

अधिशीमकृथ्ण धर्मांत्या साप्तांतयं महायसः।

यसिम भ्रातंतयं महायसः।

पुपुरणे वै नानां निम्नस्तिः।

वै निम्नस्तिः यत्।

अधिशीमकृथ्ण के पुरस्त 'वानः व्याकुलवन है। इसी क्रान्ति के पुराण का एक बीरवान युद्ध मिला हुआ।

पुराण संहिताओं से अटार पुराण बहुत प्राचीन काल में ही बन गए थे इसका पता लगता है।

आपस्तवंशमृसूत्र(२ । २४ । ५) में भविष्यपुरण का प्रमाण इस प्रकार उद्धृत है— आभूत संप्रदाय के विधिसम्प्रदाय

पुराण को प्राचीन राजवंश नूतन नहीं मिलते हैं। वह भूत के राजवंश के निकटस्थ का नहीं हो सकता।

पुराण और प्राचीन राजवंश के निकटस्थ का नहीं हो सकता। पुराण के समय में भूत और वर्तमानकलिक क्रिया का प्रयोग कहाँ तक है—

भूमिका

पुराण और प्राचीन राजवंश के निकटस्थ का नहीं हो सकता। पुराण के समय में भूत और वर्तमानकलिक क्रिया का प्रयोग कहाँ तक है।

पुराण और प्राचीन राजवंश के निकटस्थ का नहीं हो सकता।
पुराण की रचना वैदिक काल के काफी बाद की है, जैसे इतिहास के अन्तर्गत रखे जाते हैं। पुराणों में सृष्टि के आरम्भ से अन्त तक का विवरण दिया गया है। पुराणों का मनुष्य के भूत, भविष्य, वर्तमान का दर्पण भी कहा जा सकता है। इस परिपथ में मनुष्य अपने प्राप्तवेद युग का चेहरा देख सकता है। इस परिपथ में अपने प्राप्तवेद युग का अंतिम कुल मानव संवार सकता है और भविष्य को उज्ज्वल बना सकता है। अत्यधिक उद्योग को अपना अभिरंजन वह अपना वर्तमान संवार सकता है और भविष्य को उज्ज्वल बना सकता है। 

पुराण महिमा

पुराण शब्द 'पुर' एवं 'अन' शब्दों की संधि से निकली है, जिसका शाब्दिक अर्थ - 'पुराना' अथवा 'प्राचीन' होता है 'पुरा' शब्द का अर्थ है अनगम एवं अतीत।

'अन' शब्द का अर्थ होता है - कहना या बतलाना अथवा जो पुरातन अथवा अतीत के तथ्यों, सिद्धांतों, शिखरों, नीतियों, लोक कथा, धर्म, साहित्य का विवरण प्रस्तुत करता है। माना जाता है कि सृष्टि के रचनकार ब्रह्माजी ने सम्प्रभु जिस प्राचीनतम धर्मशास्त्र की रचना की, उसे पुराण के नाम से जाना जाता है। हिंदु धर्म, मूर्ति रचनाओं के अभिरंजन से और नीति के 

पुराण को मनु के भूत अथवा अनागत एवं अतीत है। पुराण अपने जानसूची किरणों से मानव न के मन का अंधकार दूर करने के सत्य के प्रकाश का ज्ञान देते हैं। सनातनकाल से ही जगत पुराणों की शिक्षा और नीति पर ही आधारित है। प्राचीनकाल से पुराण देवताओं, त्रिभुवन, मनुष्यों - सभी का मार्गदर्शन करते हैं। पुराण मनुष्य को धर्म एवं नीति के अनुसार जीवन व्यतीत करने की शिक्षा देते हैं। पुराण मनुष्य के कर्म का धक्कापूर्वक कर उन्हें दुःख करने से रोकते हैं। पुराण वस्तुतः वेदों का विस्तृत भाषाभाव है। पुराण देवताओं के अनेक युगों को लेकर एक विश्वसनीय कथा बनाता है। पुराणों के अतीत-प्राप्तवेद के साथ-साथ मनुष्य के जीवन की अंतिमता का प्रदर्शन करता है। पुराण साहित्य में अवतारित कर दिया गया है। 

पुराण निराकार श्री रामचरितमानस के सत्य का साक्षी है। पुराणों तथा पुराण-साहित्य में अवतारित कुछ पुराणों का विवरण है। पुराणों में अतिप्राचीन देवों-देवताओं के उपरोक्त राम-पुराण, धर्म-अध्ययन और सूत्र-अध्ययन के लिए निर्देशक हैं। प्रेम, धर्म, धार्मिक धार्मिक धार्मिक धार्मिक धार्मिक धार्मिक धार्मिक धार्मिक धार्मिक धार्मिक धार्मिक धार्मिक धार्मिक धार्मिक धार्मिक धार्मिक धार्मिक धार्मिक धार्मिक धार्मिक धार्मिक धार्मिक धार्मिक धार्मिक धार्मिक धार्मिक धार्मिक धार्मिक धार्मिक धार्मिक धार्मिक धार्मिक धार्मिक धार्मिक
पुराणों की संख्या
18 पुराणों को इस प्रकार भी समझ सकते हैं -

विष्णु पुराण ब्रह्म पुराण शिव पुराण
भागवत पुराण ब्रह्माण्ड पुराण लिङ्ग पुराण
नारद पुराण ब्रह्म वेवर पुराण स्कन्द पुराण
गंगा पुराण मारकण्डे पुराण अग्नि पुराण
पद्म पुराण भविष्य पुराण मत्स्य पुराण
वराह पुराण वामन पुराण कूर्म पुराण

यह सूची विष्णु पुराण पर आधारित है। मत्स्य पुराण की सूची में शिव पुराण के स्थान पर बायु पुराण है।

पुराणों में श्रोक संख्या
संसार की रचना करते समय ब्रह्मा ने एक ही पुराण की रचना की थी। जिसमें एक अरब श्रोक थे। यह पुराण बहुत ही विशाल और कठिन था। पुराणों का ज्ञान और उपदेश देवताओं के अलावा साधारण जनों को भी सरल ढंग से मिले ये सोचकर महर्षि वेद व्यास ने पुराण को अठारह भागों में बांट दिया था। इन पुराणों में श्रोकों की संख्या चार लाख है। महर्षि वेदव्यास द्वारा रचे गये अठारह पुराणों और उनके श्रोकों की संख्या इस प्रकार है।

सुखसागर के अनुसार
पुराण श्रोकों की संख्या
ब्रह्मपुराण दस हजार
पद्मपुराण पचपन हजार
विष्णुपुराण तेहस हजार
शिवपुराण चौबीस हजार
श्रीमद्भागवतपुराण अठार हजार
नारदपुराण पच्चिस हजार
रामकण्डेपुराण नौ हजार
अभिपुराण पन्नह हजार
विष्णुपुराण पाँच सौ
पुराणों की संख्या अठारह क्यों?

- अणिमा, लतिमा, प्रासिं, प्राकाम्य, महिमा, सिंहि, ईश्वर्य वा विश्वरूप, सर्वकामसाधारण, सर्वज्ञत, दूरश्रवण, सृंदिः, पराकायण्वेश, वाकसिद्धि, कत्पवृक्ष्यत, सहारकण्ासाध्य, भावना, अभावता, सर्वनाथ य जि - अभारह सिद्धियाँ मानी जाती हैं।
- सांख्य दर्शन में पुरुष, प्रकृति, मन, पांच महाभूत , पृथ्वी, जल, वायु, अथ और आकाश (, पांच ज्ञात्रत्र कान, लघु, चक्षु, नासिका और जिज्ञा) और पांच कर्मक्री वा) और, पांच, पाद, पायु और उपपायु हैं। ये अठारह तत्त्व वर्णित (।
- छः वेदांग, चार वेद, मिमांसा, न्यायशास्त्र, पूरण, धर्मशास्त्र, अर्थशास्त्र, आयुर्वेद, धनुर्वेद और गंधर्व वेद ये अठारह प्रकार की विद्याएँ मानी जाती हैं।
- एक संवत्सर, पांच क्रतुएँ और बारह महीने - ये सब मिलकर काल के अठारह भेदों को - बताते हैं।
- श्रीमद्भगवतगीता के अध्यायों की संख्या भी अठारह है।
- श्रीमद्भगवतगीता में कुल भ्रोक्तों की संख्या अठारह सौ है।
- श्रीराम, कात्यायनी, काओली, नागा, कुपालें, लक्ष्मी, सरस्वती, गायत्री, छिन्नमस्त, षोडसी, त्रिपुरभैरवी, नृपावती, चालामुखी, मातंगी, पार्वती, सिंहदाट, भगवती, जगद्मा के ये अठारह स्वरूप माने जाते हैं।
- श्रीजिज्ञ, शिव, ब्रह्मा, इन्द्र आदि देवताओं के अंश से प्रकट हुई भगवती दुर्गा अठारह भुजाओं से सुषांभित हैं।

उप पुराण
महार्ष वेदशास्त्र ने अठारह पुराणों के अतिरिक्त कुछ उप-पुराणों की भी लचना की है। उप-पुराणों को पुराणों का ही सारसूप कहा जा सकता है। उप-पुराण इस प्रकार हैं:
5.4 सारांश -

इस इकाई के अध्ययन करने के पश्चात् आप पुराणों के आधारभूत तथ्यों को जान लेंगे। पुराण हमारे अंतिम का धरोहर है, जो हमारी विरासत को आशय रूप में प्रकट करता है। इसमें सृष्टि की उत्पत्ति – विनाश, भगवान के विभिन्न रूप का अवतार वर्णन, धर्मसंस्थापना अनेकों आदि प्राप्त होता है। आशा है आप इकाई के अध्ययन के पश्चात् पुराण एवं उससे जुड़े कई विषयों का ज्ञान प्राप्त करनें में सक्षम होंगे।

5.5 शब्दावली

पुराण – पुरा नवं पुराणम्
उपपुराण – पुराण के समीप
संस्थापना – स्थापना के साथ
उत्पत्ति - प्राकृत्य,
लघ – विनाश
कर्मकाण्ड एवं मुहूर्त ज्ञान

धर्मसंस्थापनार्थ – धर्म की स्थापना के लिये
पुरातन – पुराना
जनसाधारण – आम लोग
देवीकृपा – देवताओं की कृपा

5.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर –

1. ख
2. घ
3. घ
4. ख
5. क

5.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

<table>
<thead>
<tr>
<th>ग्रन्थ नाम</th>
<th>प्रकाशन</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>नित्यकर्म पूजाप्रकाश</td>
<td>गीताप्रेस गोरखपुर</td>
</tr>
<tr>
<td>भारतीय संस्कृति के आधारभूत तत्त्व – चौखंड्प्रकाशन</td>
<td></td>
</tr>
<tr>
<td>कर्मकाण्ड प्रदीप –</td>
<td>चौखंड्प्रकाशन</td>
</tr>
</tbody>
</table>

5.8 निवन्धात्मक प्रश्न

1- पुराण किसे कहते हैं ? विस्तार से उसका वर्णन कीजिये।
2- पुराणों के विभिन्न प्रकार हैं। विस्तृत वर्णन कीजिये।
खण्ड – 2
पंचांग परिचय एवं मुहूर्त ज्ञान
इकाई – 1 तिथि, बार, नक्षत्र, योग एवं करण विचार

इकाई की संरचना

1.1 प्रस्तावना
1.2 उद्देश्य
1.3 तिथि, बार, नक्षत्र, योग एवं करण का वर्णन
   1.3.1 तिथियों का परिचय
   1.3.2 नक्षत्रों का परिचय
   1.3.3 बारों का परिचय
   1.3.4 योगों का परिचय
   1.3.5 करण परिचय
1.4 तिथि, बार, नक्षत्र, योग एवं करण का वैशिष्ट्य
   1.4.1 प्रतिपदा इत्यादि तिथियों का निर्णय
   1.4.2 नक्षत्रों का वैशिष्ट्य
1.5 सारांश
1.6 पारंपरिक शब्दावली
1.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
1.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
1.9 सहायक पाठ्यसामग्री
1.10 निबन्धात्मक प्रश्न
1.1 प्रस्तावना

इस इकाई में तिथि, वार, नक्षत्र, योग एवं करण विचार संबंधी प्रविधियों का अध्ययन आप करने जा रहे हैं। इससे पूर्व की प्रविधियों का अध्ययन आपने कर लिया होगा। प्रत्येक दिन तिथि, वार, नक्षत्र, योग एवं करण प्रायः वृष्टी-पृथ्वी होता है। विना इसके विचार किये यह दिन शुभ है या अशुभ है इसका विचार आप नहीं कर सकते हैं। अतः ये तिथि, वार, नक्षत्र एवं कुंभ क्षत्र होते हैं इसका ज्ञान आपको इस इकाई के अध्ययन से हो जायेगा।

तिथि, वार, नक्षत्र, योग एवं करण विचार के अभाव में किसी ग्रह, किसी मुहूर्त, किसी उत्सव एवं किसी पवन का ज्ञान किसी भी व्यक्ति को नहीं हो सकता है। क्योंकि कोई भी ग्रह करते हैं तो उसका आधार तिथि, वार, नक्षत्र, योग एवं करण ही होता है, साधारण रूप से एकादशी का विचार करना हो तो आपको यह कौन सी तिथि है? महीने में कितनी बार आती है? इत्यादि-इत्यादि बिना जाने आप एकादशी का विचार नहीं कर सकते हैं। इसी प्रकार वार का ग्रह, जैसे मंगलवार या शुभ या अशुभ होता है तो यह ज्ञान आवश्यक होगा कि मंगलवार कब आता है? इसमें किसका पूजन करना चाहिए?

आदि-आदि:

इस इकाई के अध्ययन से आप तिथि, वार, नक्षत्र, योग एवं करण इयादि के विचार करने की विधि का सम्बन्ध ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं। इससे तिथि, वार, नक्षत्र, योग एवं करण आदि विशय के अज्ञात संबंधी दोषों का निकाल हो सकता है सामान्य में महत्त्वपूर्ण योगदान दे सकते हैं। आपके तत्संबंधी ज्ञान के कारण श्रथार्थियों एवं महिलाओं का यह ज्ञान संशोधित एवं सच्चिदांत भो सकता है। इसके अतिरिक्त आप अन्य योगदान कर सकते हैं, जैसे - कल्यंबुचन विधि के अनुपालन का साधन प्रायश्चित करना, भारत वर्ष के गीतक के अपहृति में सहायता होगा, सामाजिक सहभागिता का विकास, इस विषय को वर्तमान समस्याओं के समाधान हेतु उपयोगी बनाना आदि।

1.2 उद्देश्य-

अब तिथि, वार, नक्षत्र, योग एवं करण विचार की आवश्यकता को आप समझ रहे होंगे। इसका उद्देश्य भी इस प्रकार आप ज्ञान सकते हैं।

1. कर्मकाण्ड को लोकोपकारक बनाना।
2. ग्रह, पर्व, उत्सवों के निर्देशयांश शास्त्रीय विधि का प्रतिपादन।
3. कर्मकाण्ड में व्यास अन्धविश्वास एवं भ्रान्तियों को दूर करना।
4. प्राचीन विद्या की रक्षा करना।
5. लोगों के कार्यक्षमता का विकास करना।
6. समाज में व्यापक कृषि नियम को दूर करना।

1.3 तिथि, वार, नक्षत्र, योग एवं करण का परिचय -

इसमें तिथि, वार, नक्षत्र, योग एवं करण का परिचय आपको कराये जाएगे क्योकि बिना इसके परिचय के तिथि, वार, नक्षत्र, योग एवं करण का आधारभूत ज्ञान नहीं हो सकेगा। आधारभूत ज्ञान हो जाने पर किसी भी विषय के महत्त्व एवं उपयोगिता को आसानी से समझा जा सकता है।

1.3.1 तिथियों का परिचय

तिथि क्या है? इस पर विचार करते हुये आचार्य ने कहा है एक-चन्द्रकलावृद्धिक्षयान्तरावृचिं: काल: तिथि:। अर्थात् चन्द्रमा के एक-एक कला वृद्धि के अवस्थिति काल को तिथि कहा जाता है। तिथियों को दो प्रकारों में वा बांटा गया है जिन्हें शुक्ल तिथि एवं कृष्णा तिथि के रूप में जाना जाता है। चन्द्रमा के एक-एक कला की वृद्धि के अवस्थिति काल को शुक्ल तिथि एवं चन्द्रमा के क्षयावृचिं: काल को कृष्णा तिथि कहते हैं।

चन्द्रमा के एक कला वृद्धि या एक कला श्रावण के काल को प्रतिपदा तिथि कहते हैं। चन्द्रमा के दो कला वृद्धि या दो कला श्रावण के काल श्री तिथि कहते हैं। चन्द्रमा के तीन कला वृद्धि या श्रावण के काल को त्रृतीय तिथि कहते हैं। चन्द्रमा के चार कला वृद्धि या श्रावण के काल को चतुर्थि तिथि कहते हैं। चन्द्रमा के पांच कला वृद्धि या श्रावण के काल को पंचमी तिथि कहते हैं। चन्द्रमा के चौ या रत्न कला वृद्धि या श्रावण के काल को चतुर्थि तिथि कहते हैं। चन्द्रमा के एकादशी या रत्न कला वृद्धि या श्रावण के काल को एकादशी तिथि कहते हैं। चन्द्रमा के दशमी या रत्न कला वृद्धि या श्रावण के काल को दशमी तिथि कहते हैं। चन्द्रमा के एकादशी या रत्न कला वृद्धि या श्रावण के काल को एकादशी तिथि कहते हैं। चन्द्रमा के दशमी या रत्न कला वृद्धि या श्रावण के काल को दशमी तिथि कहते हैं। चन्द्रमा के एकादशी या रत्न कला वृद्धि या श्रावण के काल को एकादशी तिथि कहते हैं। चन्द्रमा के दशमी या रत्न कला वृद्धि या श्रावण के काल को दशमी तिथि कहते हैं। चन्द्रमा के एकादशी या रत्न कला वृद्धि या श्रावण के काल को एकादशी तिथि कहते हैं। चन्द्रमा के दशमी या रत्न कला वृद्धि या श्रावण के काल को दशमी तिथि कहते हैं। चन्द्रमा के एकादशी या रत्न कला वृद्धि या श्रावण के काल को एकादशी तिथि कहते हैं। चन्द्रमा के दशमी या रत्न कला वृद्धि या श्रावण के काल को दशमी तिथि कहते हैं। चन्द्रमा के एकादशी या रत्न कला वृद्धि या श्रावण के काल को एकादशी तिथि कहते हैं। चन्द्रमा के दशमी या रत्न कला वृद्धि या श्रावण के काल को दशमी तिथि कहते हैं। चन्द्रमा के एकादशी या रत्न कला वृद्धि या श्रावण के काल को एकादशी तिथि कहते हैं। चन्द्रमा के दशमी या रत्न कला वृद्धि या श्रावण के काल को दशमी तिथि कहते हैं। चन्द्रमा के एकादशी या रत्न कला वृद्धि या श्रावण के काल को एकादशी तिथि कहते हैं। चन्द्रमा के दशमी या रत्न कला वृद्धि या श्रावण के काल को दशमी तिथि कहते हैं। चन्द्रमा के एकादशी या रत्न कला वृद्धि या श्रावण के काल को एकादशी तिथि कहते हैं। चन्द्रमा के दशमी या रत्न कला वृद्धि या श्रावण के काल को दशमी तिथि कहते हैं। चन्द्रमा के एकादशी या रत्न कला वृद्धि या श्रावण के काल को एकादशी तिथि कहते हैं। चन्द्रमा के दशमी या रत्न कला वृद्धि या श्रावण के काल को दशमी तिथि कहते हैं।
पश्चिमनाडिका सम्पूर्ण इति विजेयः। अर्धतु सूर्यदय से आरम्भ कर साठ नाडी तक जो तिथि भोग करती है उसे पूर्ण तिथि कहते हैं। अतो अन्या खण्डा यानी इसके अतिरिक्त अन्य सभी प्रकार की तिथियों को खण्डा कहा जाता है। तिथियों के लक्षण का प्रतिपादन करते हुये बतलाया गया है कि खण्डों दर्प्तथा हिसा तिथियतिथि लक्षणमू अर्थात् खण्ड, दर्प एवं हिसा तिथियों के तीन लक्षण बतलाये गये हैं। इनकी व्याख्या करते हुये कहा गया- खण्डों साम्यं अर्थात् तिथियों में जो साम्यता पाई जाती है उसे खण्ड के अनर्गत रखा गया है। साम्यता का अर्थ सामान्यता से है जैसे प्रतिपद, द्वितीया, तृतीया इत्यादि। दर्प वृंदि: यानी तिथियों में वृंदि जो होती है उसे दर्प में रखा गया है जैसे प्रतिपद, द्वितीया, तृतीया, इत्यादि। हिसा क्षयः अर्थात् तिथियों का क्षय हो जाना जैसे प्रतिपद, द्वितीया इत्यादि। यहाँ द्वितीया की हानि हो गयी है। इससे दूसरे बाले में द्वितीया तिथि की वृंदि हो गयी है। इस प्रकार से खण्ड दर्प एवं हिसा इन तीन प्रकार की तिथियों को बराबर अनुभूत करते है।

इस प्रकार में आपने प्रतिपदा से पूर्णिमा तक की तिथियों का ज्ञान क्या है? इसको आपने जाना।

आशा है आपको तिथियों का सामान्य ज्ञान हो गया होगा।

अभ्यास प्रश्न:

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अभ्यस्तित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अभ्यस्तित प्रश्न बहुविकल्पीय है। प्रश्नों में दिये गये चार विकल्प में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है।

<table>
<thead>
<tr>
<th>प्रश्न</th>
<th>तिथियों को कितने प्रकारों में बांटा गया है?</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>क- 2, ख- 3, ग- 4, घ- 5।</td>
<td></td>
</tr>
</tbody>
</table>

<table>
<thead>
<tr>
<th>प्रश्न 2</th>
<th>चन्द्रमा के एक-एक कला वृंदि को कहा जाता है?</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>क- शुक्ल, ख- कृष्ण, ग- पीत , घ- हरित।</td>
<td></td>
</tr>
</tbody>
</table>

<table>
<thead>
<tr>
<th>प्रश्न 3</th>
<th>चन्द्रमा के एक - एक कला हास को कहा गया है?</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>क- शुक्ल, ख- कृष्ण, ग- पीत , घ- हरित।</td>
<td></td>
</tr>
</tbody>
</table>

<table>
<thead>
<tr>
<th>प्रश्न 4</th>
<th>प्रतिपदा में कितने कला की वृंदि या क्षय होता है?</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>क- एक, ख- दो, ग- तीन, घ- आठ।</td>
<td></td>
</tr>
</tbody>
</table>

<table>
<thead>
<tr>
<th>प्रश्न 5</th>
<th>द्वितीया में कितने कला की वृंदि या क्षय होता है?</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>क- एक, ख- दो, ग- तीन, घ- आठ।</td>
<td></td>
</tr>
</tbody>
</table>

<table>
<thead>
<tr>
<th>प्रश्न 6</th>
<th>तृतीया में कितने कला की वृंदि या क्षय होता है?</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>क- एक, ख- दो, ग- तीन, घ- आठ।</td>
<td></td>
</tr>
</tbody>
</table>
प्रश्न 7- चतुर्थी में कितने कला की वृद्धि या क्षय होता है?
क- चार, ख- तीन, ग- दो, घ- एक।
प्रश्न 8- पंचमी में कितने कला की वृद्धि या क्षय होता है?
क- एक, ख- दो, ग- तीन, घ- पाँच।
प्रश्न 9- खर्च तिथि का लक्षण क्या है?
क- साम्यता, ख- वृद्धि, ग- क्षय , घ- अनिश्चित।
प्रश्न 10- दर्प तिथि का लक्षण क्या है?
क- साम्यता, ख- वृद्धि, ग- क्षय , घ- अनिश्चित।
प्रश्न 11- हिसा तिथि का लक्षण क्या है?
क- साम्यता, ख- वृद्धि, ग- क्षय , घ- अनिश्चित।

1.3.2 नक्षत्रों का परिचय-

यज्ञोत्सव ज्ञान का मुख्य आधार नक्षत्र हैं। जिस भी काल खूलन में व्यक्ति का जन्म होता है उस समय कोई न कोई नक्षत्र अवश्य होती है। इन नक्षत्रों के आधार पर ही राशि नाम का निर्धारण किया जाता है। प्रायः नक्षत्र के चार पाद बतलाये गये हैं। जिस पाद में जातक का जन्म होता है उस पाद में निश्चित वर्ण का आधार मानकर राशि नाम का निर्धारण किया जाता है। अभिज्ञ सहित कुल नक्षत्रों की संख्या अनेकाधिक मानी जाती है। अभिज्ञ को छोड़कर कुल नक्षत्रों की संख्या सत्ताइस बतलायी गयी है।

अथिनी, भरणी, कृतिका, रोहिणी, मुगशिरा, आर्री, पुंवरसु, पुष्य, आश्त्रिया, मधा, पूर्वा फाल्तुगी, उत्तरा फाल्तुगी, देशा, चित्त्रा, स्वाती, विशाखा, अनुरुधा, ज्योत्रिष, मूल, पूर्वाष्ठ्या, उत्तराष्ठ्या, श्रवण, धनिष्ठा, शापभिषा, पूर्वभाद्रपद, उत्तरभाद्रपद एवं रेवती के नाम से जाना जाता है।

अब नक्षत्रों के बारे में अब आप जान गये होगे। इन नक्षत्रों के आधार पर वर्णों का निर्धारण कर किस प्रकार नक्षत्र नाम का निर्धारण किया जाता है इसके बारे में जानना अति आवश्यक है। इसलिये अग्रिम जानकारी दी जा रही है इसे ध्यान पूर्वक समझना चाहिए।

अथिनी नक्षत्र के चारों पादों को चू, चे, चो, ला के रूप में जाना जाता है। भरणी नक्षत्र के चारों पादों को ली, लू, ले, लो के रूप में जाना जाता है। कृतिका नक्षत्र के चारों पादों को अ, ई, उ, ए के रूप में जाना जाता है। रोहिणी नक्षत्र के चारों पादों को ओ, वा, वी, वू के रूप में जाना जाता है। मुगशिरा नक्षत्र के चारों पादों को वे, वो, का, की के रूप में जाना जाता है। आर्री नक्षत्र के चारों पादों को कू, घ, ड., छ के रूप में जाना जाता है। पुंवरसु के चारों पादों को के, को, हा, ही के रूप में
जाना जाता है। पूर्व नक्षत्र के चारो पादों को हूं, हे, हो, डा के रूप में जाना जाता है। आश्विन नक्षत्र के चारो पादों को डी, डू, डे, डो के रूप में जाना जाता है। मध्य नक्षत्र के चारो पादों को मा, मी, मूं, मे के रूप में जाना जाता है। पूर्वी फाल्गुनी नक्षत्र के चारो पादों को मो, टा, टी, टू के रूप में जाना जाता है। उत्तर फाल्गुनी नक्षत्र के चारो पादों को दे, टो, पा, धी के रूप में जाना जाता है। हंस नक्षत्र के चारो पादों को पूं, प, पा, पी के रूप में जाना जाता है। चिवा नक्षत्र के चारो पादों को पे, पो, रा, री के रूप में जाना जाता है। स्वाती नक्षत्र के चारो पादों को रूं, रे, रो, टा के रूप में जाना जाता है। विशाखा नक्षत्र के चारो पादों को ती, तू, ते, तो के रूप में जाना जाता है। अनुराधा नक्षत्र के चारो पादों को ना, नी, नूं, ने के रूप में जाना जाता है। ज्येष्ठ नक्षत्र के चारो पादों को नो, या, यी, यू के रूप में जाना जाता है। मूर्ति नक्षत्र के चारो पादों को ये, यो, भा, भी के रूप में जाना जाता है। पूर्व वायुध नक्षत्र के चारो पादों को भूं, ध, फ, ढ के रूप में जाना जाता है। उत्तरायणा नक्षत्र के चारो पादों को भी, बा, जा, जी के रूप में जाना जाता है। श्रवण नक्षत्र के चारो पादों को खी, खूं, खे, खो के रूप में जाना जाता है। धनिष्ठ नक्षत्र के चारो पादों को गा, गी, गूं, गे के रूप में जाना जाता है। शतघन नक्षत्र के चारो पादों को सा, सा, सौ, सू के रूप में जाना जाता है। पूर्ववायुध नक्षत्र के चारो पादों को से, सो, दा, दी के रूप में जाना जाता है। उत्तरायणा नक्षत्र के चारो पादों को दूं, थ, यं के रूप में जाना जाता है। संवाती नक्षत्र के चारो पादों को दे, धो, चा, ची के रूप में जाना जाता है।

इन पादों का निर्धारण भयात् एवं भभोग के आधार पर होता है। भ का अर्थ नक्षत्र होता है। यात् का गत हूं होता है यानी जितनी घटी नक्षत्र गत हो गयी उसे भयात् के रूप में एवं जितनी घटी नक्षत्र स्थिति भोग करेगी उसे भभोग के रूप में जाना जाता है। इसके निर्धारण हेतु बतलाया गया है कि—

गतश्र नहीं खरशेषु शुद्ध, सूयंदवादिष्ठ भवेदु युक्ता।
भयात् संता भवोत् तस्य, निजशक्ति नादी सहितो भभोगः।।

इसका अर्थ यह है कि गत नक्षत्र को साठ में से घटाकर सूयंदवादिष्ठ को जोड़ देने से भयात् संता हो जाती है। और वर्तमान नक्षत्र में उस घटाये हुए नक्षत्र को संयोजन देने से भभोग संता हो जाती है। इसके आधार पर यह नक्षत्र भयात् का निर्धारण हो जाता है। इसे अपने नक्षत्रों के नाम एवं पाद भेद की दृष्टि से उनके वर्णालयों को जाना। इसके ज्ञाता ज्ञाता आपके साधारण हो तथा आसानी से आप राशि का निर्धारण भी करने में समर्थ हो सकेंगे।

अभ्यास प्रश्न-

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अथोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अथोलिखित प्रश्न बहु
कम्बक्षण एवं महूत्त्व ज्ञान

उपरोक्त प्रश्नों में दिए गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है।

प्रश्न 1- अभिज्ञता नक्षत्र को छोड़कर कुल नक्षत्रों की संख्या कितनी है?
   क- 27, ख- 28, ग- 29, घ- 30।

प्रश्न 2- इन नक्षत्रों में से किसको चे वर्ण वाली नक्षत्र के रूप में जाना जाता है?
   क- रेवती को, ख- अिूनी को, ग- आश्रव्या को , घ- हस्त को।

प्रश्न 3- लू वर्ण वाली नक्षत्र किस से कहा गया है?
   क- भरणी को, ख- कृिूका को, ग- रोिहणी को, घ- मूल को।

प्रश्न 4- अ वर्ण किस नक्षत्र में आता है?
   क- अिूनी, ख- भरणी, ग- कृिूका, घ- रोिहणी।

प्रश्न 5- ओ वर्ण किस नक्षत्र में आता है?
   क- अिूनी, ख- भरणी, ग- कृिूका, घ- रोिहणी।

प्रश्न 6- ला वर्ण किस नक्षत्र में आता है?
   क- अिूनी, ख- भरणी, ग- कृिूका, घ- रोिहणी।

प्रश्न 7- ली वर्ण किस नक्षत्र में आता है?
   क- अिूनी, ख- भरणी, ग- कृिूका, घ- रोिहणी।

प्रश्न 8- ए वर्ण किस नक्षत्र में आता है?
   क- अिूनी, ख- भरणी, ग- कृिूका, घ- रोिहणी।

प्रश्न 9- मा वर्ण किस नक्षत्र में आता है?
   क- अिूनी, ख- भरणी, ग- कृिूका, घ- मणा।

प्रश्न 10- खी वर्ण किस नक्षत्र में आता है?
   क- अिूनी, ख- भरणी, ग- श्रवण, घ- रोिहणी।

1.3.3 वारों का परिचय-

आप सभी जानते हैं कि एक वर्ष में बारह महीनों होते हैं। एक महीने में तीस या इकक्षित दिन होते हैं फरवरी मास को छोड़कर। सात दिनों का एक समय होता है जिन्हें क्रमशः सूर्यवार, सोमवार, भीमवार, बुधवार, बूहस्पतिवार, शुक्रवार एवं शनिवार के रूप में जाना जाता है। ज्योतिष में इन सात वारों के नामों को प्रहों से जोड़कर मुख्य प्रह के रूप में सूर्यवार को रवि, सोमवार को चन्द्र, भीमवार को मंगल, बुधवार को बुध, बूहस्पतिवार को गुरू, शुक्रवार को
शुक्र एवं शानिवार को शनि के रूप में जाना जाता है। सूर्य का वर्ण लाल, चन्द्रमा यानी सोम का वर्ण सफेद, भूम का वर्ण लाल, बुध का वर्ण हरा, गुरु का वर्ण पीला, शुक्र का वर्ण सफेद एवं शनि का वर्ण काला बतलाया गया है। जिस व्यक्ति का जो ग्रह अशुभ फल दाता होता है उस व्यक्ति के लिये उससे संबंधित ग्रहों वाते दिवसों में संबंधित वर्णों से पूजन या उनके दान का विधान किया गया है।

वारों के वैकल्पिक नाम इस प्रकार प्राप्त होते हैं:
- रविवार- भानु, सूर्य, चन्द्र, भास्कर, दिवाकर, सत्य, प्रभाकर, तप, दिवेश, दिनेश, अर्क, दिवामण, चण्डा, वृषभ सादी।
- सोमवार- चन्द्र, विघु, हनु, निवाकर, शीतांशु, हिमराम, जडांशु, मृगांक, शाशांक, हीरपाल इत्यादि।
- भूमवार- कुज, भूमितनय, आर, भीमवृक्ष एवं अगरक इत्यादि।
- बुधवार- भूष्म, वितु, ज्य, मृगांकजमा, कुमारशोधन, दत्तापु इत्यादि।
- गुरुवार- बुधस्मति, इज्य, जीव, सुरेत्त, सुरपूर्व, चिरिचिरिषिक्षितनय, वाक्पति इत्यादि।
- शुक्रवार- उषा, आस्मुचित, कवि, भृगु, भार्गव, अत्यनु इत्यादि।
- शनिवार- मन्द, शानेश्वर, रवितनय, रोद, अर्क, सोर, पंगु, शानि इत्यादि।

अभ्यास प्रश्न-

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अथोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अथोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है।

प्रश्न 1- सत्यिना किसका नाम है?
   क- सूर्य का, ख- चन्द्र का, ग- मंगल का, घ- बुध का।

प्रश्न 2- तपन किसका नाम है?
   क- सूर्य का, ख- चन्द्र का, ग- मंगल का, घ- बुध का।

प्रश्न 3- निशाचर किसका नाम है?
   क- सूर्य का, ख- चन्द्र का, ग- मंगल का, घ- बुध का।

प्रश्न 4- मृगांक किसका नाम है?
   क- सूर्य का, ख- चन्द्र का, ग- मंगल का, घ- बुध का।

प्रश्न 5- तारापु िकसका नाम है?
   क- सूर्य का, ख- चन्द्र का, ग- मंगल का, घ- बुध का।

प्रश्न 6- वितु किसका नाम है?
क- सूर्य का, ख- चंद्र का, ग- मंगल का, घ- बुध का।
प्रश्न 7 जीव किसका नाम है?
क- सूर्य का, ख- गुरु का, ग- मंगल का, घ- बुध का।
प्रश्न 8- वाक्पति किसका नाम है?
क- गुरु का, ख- चंद्र का, ग- मंगल का, घ- बुध का।
प्रश्न 9- उशना किसका नाम है?
क- सूर्य का, ख- चंद्र का, ग- मंगल का, घ- बुध का।
प्रश्न 10- मन्द किसका नाम है?
क- सूर्य का, ख- चंद्र का, ग- मंगल का, घ- शनि का।

1.3.4 योगों का परिचय

कुल सताइस योग होते हैं, जिन्हें क्रमशः विस्कृम, प्रीति, आयुमान, सौभाय, शोभन, अतिगण्ड, सुकर्म, धूति, शूल, गण्ड, वृद्धि, ध्वुन, व्याघ्रत, हर्षण, वज्र, सिवि, व्यतिपात, वरीयान, परिच, शिव, सिध्द, साधः, शुभ, शुक्ति, ब्रह्म, ऐद्वृत्तियत। इन योगों का प्रयोग संकल्पना के अवसर पर किया जाता है तथा शृणुप्रेम विचार में भी इनका महत्त्व है। जनम कुण्डली में योग का फल जानने हेतु इन्हीं योगों का अयोग देखने को मिलता है।

इसके अलावा आनदादि योगों का प्रयोग भी देखने को मिलता है, जिसका अयोग बन तथा गुण के आधार पर लिखा रहता है। इन योगों की संख्या अध्याय कला बतलायी गयी है। इसका वर्णन इस प्रकार किया गया है:

आनन्दादाः: कालण्डश धूपो ध्वा शीम्यो ध्वांकंतेऽक्रमेन।
श्रीवससायो वयस्तिकु मुद्रक्ष छत्र मित्र मानसं पवालम्बिः।
उत्सामुत्तु तिलकाणसिद्धि शुभो अमृताखो मुसलो गद्धश।
मातंगरखश्चमुशिध्याः: प्रवर्धनाना: फलदा: सर्वमाम।।
अर्थात् इन योगों के नाम इस प्रकार है- 1 आनंद, 2 कालण्ड, 3 धूप, 4 धाता, 5 सीम्य, 6 ध्वांक, 7 केतु, 8 श्रीवस्त, 9 वज्र, 10 मुद्र, 11 छत्र, 12 मित्र, 13 मानस, 14 पति, 15 लुभ, 16 उद्यात, 17 गुरु, 18 काण, 19 सिवि, 20 शुभ, 21 अमृत, 22 मुश्लाल, 23 गदा, 24 मातंग, 25 रक्त, 26 चर, 27 मुश्लिर और 28 प्रवर्धनाम है। ये सभी योग अपने नाम के अनुसार फल देने वाले होते है।
इन योगों के परिचय का निथम बतलाते हुए कहा गया है कि- दामांडकं गृहान्तदी सापाघीम् कराहुः।
किसी भी कार्य के आरम्भ में इन योगों का विचार करना चाहिए। शुभ योगों के होने पर उसमें आरम्भ शुभदायक तथा अशुभ योगों में कार्य का आरम्भ अशुभदायक होता है। अशुभ योगों में कार्यरत आवश्यक होता है तो उसके परिणाम का विचार कर आवश्यक उपचार की त्रस्त कर कार्यरत किया जा सकता है जिसका विचार इस प्रकार है।

ध्वांक्रेत्रं व्रजं मुद्रें चेपरुदायः वज्नं वेदत: पदलुम्बे गदे अश्वः।
धुरे कारण मीले भुवेन्द्रे हि रक्षोभुम्वृतत्वातिलिङ्ग सवेः॥

अर्थात् 6 ध्वांक, 9 वज्र और 10 मुद्र योगों में आदि की पांच घटी, 14 पद्म और 15 लुम्ब योगों में आदि की चार घटी, 23 गद योग में आदि की सात घटी, 3 धुरे योग में आदि की 1 घटी, 18 काण योग में दो-घटी, 22 मुशल में दो-घटी, 25 रक्ष, 17 मृत्यु और 16 उपराते एवं 2 काल योगों की समस्त घटियां शुभ कर्म में त्याग्य हैं।

इसके अलावा यह भी ज्ञात है कि सूयश जिस नक्षत्र पर हो, उस नक्षत्र से वर्तमान चन्द्र नक्षत्र चौथा, नवं, छठा, दसवां, तेरहवां, और बीसवां हो तो रवियोग होता है। यह उस काल के समस्त दोषों को नष्ट करने वाला बतलाया गया है। वर्तमान यह भी असंबोधित है कि सूयश जिस नक्षत्र पर हो, उस नक्षत्र से वर्तमान चन्द्र नक्षत्र, नवां, छठा, दसवां, तेरहवां, और बीसवां हो तो रवियोग होता है। उस काल के समस्त दोषों को नष्ट करने वाला बतलाया गया है।

सूयशभावेदाग्यमन्त्रादिनिधिद्विश्वकामयस्यम्।
चन्द्रेण रवियोगाः स्यूद्वशर्मप्रमाणाः॥

इस प्रकार आप योगों की जानकारी प्राप्त कर सकते हैं। अब इस पर कुछ अभ्यास प्रश्न दिये जा रहे हैं जिसके आप आसानी से हल कर सकते हैं।

अभ्यास प्रश्न- उपरोक्त विषयों को अध्याय अभ्योतितित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अभ्योतितित प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन
आपको करना है-
प्रश्न 1:- कुल विषकंभादि योगों की संख्या कितनी बतलायी गयी है?
   क- 26, ख- 27, ग- 28, घ- 29।
प्रश्न 2:- कुल आनंददि योगों की संख्या कितनी बतलायी गयी है?
   क- 26, ख- 27, ग- 28, घ- 29।
प्रश्न 3:- रविवार को आनंददि योगों का विचार किस नक्षत्र से किया गया है?
   क- अच्छी, ख- मृगशिला, ग- आश्शेष, घ- हस्त।
प्रश्न 4:- सोमवार को आनंददि योगों का विचार किस नक्षत्र से किया गया है?
   क- अच्छी, ख- मृगशिला, ग- आश्शेष, घ- हस्त।
प्रश्न 5:- मंगलवार को आनंददि योगों का विचार किस नक्षत्र से किया गया है?
   क- अच्छी, ख- मृगशिला, ग- आश्शेष, घ- हस्त।
प्रश्न 6:- बुधवार को आनंददि योगों का विचार किस नक्षत्र से किया गया है?
   क- अच्छी, ख- मृगशिला, ग- आश्शेष, घ- हस्त।
प्रश्न 7:- गुंडवार को आनंददि योगों का विचार किस नक्षत्र से किया गया है?
   क- अनुराधा, ख- उत्तराश्रिता, ग- आश्शेष, घ- हस्त।
प्रश्न 8:- शुक्लवार को आनंददि योगों का विचार किस नक्षत्र से किया गया है?
   क- उत्तराश्रिता, ख- मृगशिला, ग- आश्शेष, घ- हस्त।
प्रश्न 9:- श्वािंक्ष योग में कायारभ में आदि की कितनी घड़ी त्याज्य है?
   क- 5, ख- 10, ग- 15, घ- 20।
प्रश्न 10:- मुहूर्त योग में कायारभ में आदि की कितनी घड़ी त्याज्य है?
   क- 5, ख- 10, ग- 15, घ- 20।
प्रश्न 11:- पद्य योग में कायारभ में आदि की कितनी घड़ी त्याज्य है?
   क- 5, ख- 10, ग- 4, घ- 20।

1.3.5 करण परिचय-
एक तिथि में दो करण होते हैं। करण चार एवं स्थिर दो प्रकार के होते हैं। चार करण सात होते हैं जिन्हें बब, बालब, कोलब, तैतिल, गर, व्रिषज, विषि के नाम से जाना जाता है। इनका प्रारम्भ शुक्ल प्रतिपदा के उत्तरार्द्ध से होता है। ओर एक मास में इनकी आठ आवृतियां होती हैं। शाकुक, चतुष्पद, नाग तथा किन्नुन वे चार स्थिर करण हैं। इनका प्रारम्भ कृष्णपक्ष की चतुर्दशी के उत्तरार्द्ध से होता
है। अर्थात् चुदार्शी के उत्तरार्द्ध में शाकुनी, अमावास्या के पूर्वार्द्ध में चतुष्पद, उत्तरार्द्ध में नाग तथा शुक्लपक्ष की प्रतियोगि के पूर्वार्द्ध में किस्मत करण सदा नियत रहते हैं। इसकी रिति संज्ञा है।

इसमें जहां - जहां विष्ट शाब्द आया है, उससे उस तिथि के निर्देश भाग को भद्रा कहते हैं। जैसे शुक्ल पक्ष में चार, यार्थ और कृष्णपक्ष में तीन, दश तिथियों के उत्तरार्द्ध में भद्रा रहती है। और शुक्लपक्ष में आठ, पन्द्रह कृष्णपक्ष में सात, चौदह तिथियों के पूर्वार्द्ध में भद्रा रहती है।

भद्रा के ज्ञान हेतु तिथियों का मान जानना आवश्यक है। जैसे दिया गया कि कृष्णपक्ष के उत्तरार्द्ध में भद्रा रहती है तो उत्तरार्द्ध का प्रारंभ कब होगा? इसका सम्पूर्ण काल कितना रहेगा? इन सारी चीजों को जानना आवश्यक है, अन्यथा इसके अभाव में भद्रा का निर्धारण नहीं हो सकेगा। जैसे द्वितीया तिथि का घटी मान 14.4 दिया गया है। इस मान को 60.00 में से घटाने पर 45.56 शेष बचेगा। इस मान को तृतीया के घटी मान 12.31 में जोड़ने से दूर्तीया का भोग काल 58.27 हो जाता है। इस भोग काल का आधा 29.13.30 आयेगा। इस मान को द्वितीया के मान घटी 14.4 में जोड़ने पर दूर्तीया का उत्तरार्द्ध 43.17 के बाद प्रारंभ होगा। उसी समय से भद्रा प्रारंभ होकर तृतीया की समाप्ति पर्यंत रहेगी। इसी प्रकार अन्य सभी भद्राओं को समझना चाहिये। अब आप करण का सामान्य परिचय जान गए हों। आवश्यकतानुसार विष्ट करण का साधन भी आराम से कर सकते है। बस कितना अभ्यास की जरूरत है। अब इस आधार पर कुछ अभ्यास प्रश्न दिये जा रहे हैं जो इस प्रकार हैं-

### अभ्यास प्रश्न

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिख्त प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिख्त प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्न में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है।

- **प्रश्न 1:** एक तिथि में कितने करण होते हैं?
  - क-एक, ख- दो, ग- तीन, घ- चार।

- **प्रश्न 2:** करण कितने करण के होते हैं?
  - क- एक, ख- दो, ग- तीन, घ- चार।

- **प्रश्न 3:** कितने चर करण होते हैं?
  - क-एक, ख- दो, ग- पांच, घ- सात।

- **प्रश्न 4:** कितने स्थार करण होते हैं?
  - क- एक, ख- दो, ग- तीन, घ- चार।

- **प्रश्न 5:** बालव कौन सा करण है?

उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय 87
क-चर, ख-स्थिर, ग-द्रिस्वभाव, घ-मिश्रित।

प्रश्न 6-कोलब कोन सा करण हैं?
क-चर, ख-स्थिर, ग-द्रिस्वभाव, घ-मिश्रित।

प्रश्न 7-बणिज कोन सा करण है?
क-चर, ख-स्थिर, ग-द्रिस्वभाव, घ-मिश्रित।

प्रश्न 8-शकुनी कोन सा करण है?
क-चर, ख-स्थिर, ग-द्रिस्वभाव, घ-मिश्रित।

प्रश्न 9-चतुष्पद कोन सा करण है?
क-चर, ख-स्थिर, ग-द्रिस्वभाव, घ-मिश्रित।

प्रश्न 10-नाग कोन सा करण है?
क-चर, ख-स्थिर, ग-द्रिस्वभाव, घ-मिश्रित।

प्रश्न 11-किस्मुन कोन सा करण है?
क-चर, ख-स्थिर, ग-द्रिस्वभाव, घ-मिश्रित।

1.4 तिथि, वार, नक्षत्र, योग एवं करण का वैशिष्ट्य-

इसमें तिथि, वार, नक्षत्र, योग एवं करण के विशेषताओं पर आपका ध्यान आकृत कराया जायेगा।

इन तिथि, वार, नक्षत्र, योग एवं करणों के संबंध बतलायी जाने वाली अधोलिखत बातें संबंधित विषय के ज्ञान को प्रोत्साहित कराया गया है।

1.4.1 प्रतिपदा इत्यादि तिथियों का निर्णय-

प्रतिपदुः पंचमी चैव उपोषया पूर्वसंयुता इस जाबािल के वचन के रूप में उद्धृत मदन रतन की पंक्ति के अनुसार प्रतिपदा एवं पंचमी पूर्व तिथि से संयुक्त हो तो उपवास योग होती है। लेकिन कहीं-कहीं प्रश्न पक्ष की प्रतिपदा तिथि को अपरांत व्यापिनी स्वीकार करने के लिये कहा गया है तथा पर संयुता यानी बाद वाली तिथि यानी द्वितीया से विन्द्र प्रतिपदा को उपवास में स्वीकार का विषय किया गया है। अपरांत व्यापिनी तिथि के अभाव में साया व्यापिनी तिथि को भी प्रहण किया जा सकता है। परन्तु उपवास प्रातः काल से ही होगा, दिन के मध्य भाग से नहीं इसका विचार करना चाहिए।

द्वितीया तिथि का निर्णय करते हुये बतलाया गया है कि-
एकादशी चढ़ी द्वितीया च चतुर्दशी।
त्रयोदशी अमावास्या उपोषया स्वः पराशिर्ता:॥

उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय

88
रमणीय एवं अमावस्या पर तिथि से आश्रित हो तो उपवास योग्य होती है।

तृतीया तिथि का निर्णय करते हुए बतलाया गया है कि रम्भा ब्रत में तृतीया तिथि पूर्वविद्या ग्रहण की जाती है। अन्य सभी ब्रतों में तृतीया तिथि पर विद्या स्वीकार की जाती है। इसका उपन करते हुए ब्रह्मवैरण पुराण में कहा गया है कि-

रम्भाख्यां वर्जित्य तु तृतीयां ठीकृतमात्रा।
अवेषु सर्वकार्येषु गणयुक्ता प्रास्यते॥

gण युक्ता का अर्थ चतुर्थी से युक्त का है। स्त्रने पुराण में तो कहा गया है कि-

कलकार्यापि वा यत्र द्वितीया संप्रदृश्यते।
सा तृतीया न कर्त्त्वा कर्त्त्वा गण संयुता॥

अर्थात तृतीया किंचित् मात्र भी द्वितीया से संयुक्त हो तो उस तृतीया को उपवास नहीं होगा। चतुर्थी से संयुक्त तृतीया ही करना चाहिये।

चतुर्थी तिथि का निर्णय करते हुए बतलाया गया है कि-

चतुर्थी गणनाथस्य मातृविद्या प्रास्यते।
मध्यान्त्यापिनी सा तु परतश्वेतपे हनिः।

गणेश भगवान के लिए की जाने वाली चतुर्थी को मातृ विद्या यानी तृतीया तिथि से बेज होने पर स्वीकार करना चाहिये। क्योंकि इस ब्रत का कर्मकाल चतुर्थी में चतुर्थी को देखकर अर्थ का दान करना है। गणपति कर्त्त्व नामक पृथ्वी में लिखा गया है कि विनायक ब्रत में मध्यान्त्य कालीन चतुर्थी का विचार करना चाहिये। इससे अतिरिक्त अन्यत्र पंचमी विद्या स्वीकार की गयी है।

एकादशी तथा षू मातृविद्या चतुर्थिकाः।
उपोष्या: परमुक्ता: परा: पूविण संयुता॥।

इस श्रोक को कहते हुये वुद्ध वसिष्ठ ने कहा है कि एकादशी, षू, अमावस्या, एवं चतुर्थी पर नक्श्त्र से संयुक्त हो तो उपोष्य होती है।

पंचमी का निर्णय करते हुये कहा है कि-

श्रावणं पंचमी शुक्लां संरक्षो नागपंचमी।
तात परिव्ययं पंचथुन्तरस्य सहित हिता:।

मदन रत्न में उदाहरण बच्चों के अनुसार नागपंचमी को छोड़कर अन्य सारी पंचमियां चतुर्थी सहित शुभ मानी गयी है। आचार्य जातानि ने कहा है कि पंचमी उपवास में पूर्व विद्या एवं अन्य कायों में पर विद्या स्वीकार करनी चाहिये। यह भी बचन मिलता है कि पंचमी को कृष्ण पक्ष में पूर्वविद्या तथा शुक्लपक्ष में परविद्या स्वीकार करना चाहिये।

उत्तराखण्ड मुंनत विश्वविद्यालय 89
कर्मकाण्ड एवं मुहूर्त ज्ञान

पश्चिम निर्णय करते हुये सा च षणमुच्योतिति वाक्य के अनुसार मुनि का मतलब समस्त बतलाया गया है।
अर्थात् पश्चि के विन्द्र स्वीकार की जानी चाहिए लेकिन स्कन्द पत्र में पूर्वविद्वा स्वीकार किया गया है।
इसका मतलब स्कन्द पत्र का छोड़कर अन्य पश्चि के पत्र पर विन्द्र स्वीकार किये जाते हैं।
शिवरहस्य नामक ग्रन्थ का बचन है कि-

नागविद्वा च या पश्चि शिवविद्वा च समस्ती।

दशम्येकाण्डशी विन्द्र नोपोष्य: स्यू: कदाचन:।।

अर्थात् नागविद्वा यानी पंचमी विन्द्र उष्ण, शिवविद्वा यानी अष्टमी विन्द्र समस्ती, दशमी विन्द्र एकादशी में उपवास नहीं करना चाहिए।
समस्ती का निर्णय करते हुये ब्रह्मवेत्ता पुराण में कहा गया है कि

समस्ती नाहिमी युक्ता न समस्ता युताद्यामी।

अर्थात् समस्ती युता अष्टमी एवं अष्टमी युता समस्ती नहीं करना चाहिए। स्कन्द पुराण में कहा गया है कि-

पश्चिमेकाण्डशी अमावास्या पूर्वविद्वा नत्थार्मी।

समस्ती पर विद्वा च नोपोष्यं तथिथिपचकथ।

अर्थात् पश्चि, एकादशी, अमावास्या, अष्टमी पूर्वविद्वा एव समस्ती पर विन्द्र नहीं स्वीकार करना चाहिए।
अष्टमी तिथि का निर्णय करते हुये बतलाया गया है कि सा च शुक्लोत्तर कृष्णा पूर्व। यानी शुक्लपक्ष की अष्टमी को उत्तर यानी परविद्वा और कृष्णपक्ष की अष्टमी को पूर्वविद्वा स्वीकार करना चाहिए।
शिवरहस्य महोत्सव में दोनों ही पश्चि की अष्टमी जब नवमी से सुयुक्त हो तो करना चाहिए।
वनवंशीय तिथि का निर्णय करते हुये कहा गया है कि सा अष्टमी विन्द्र आद्रागी। अर्थात् अष्टमी विन्द्र नवमी करना चाहिए।

अष्टम्यानवमी विन्द्र करन्त्या फलकान्तिकिः।

न कुर्यानवमी ताता दशम्यास्या तु कदाचन।।

अर्थात् अष्टमी से नवमी बेध हो तो नवमी करना चाहिए। दशमी बेठ वाली नवमी नहीं करना चाहिए। ब्रह्मवेत्ता में इसे दिशा विन्द्र कहकर समझाया गया है।

dशमी समस्ती च या महावास (युता) अष्टमी से नवमी युता दशमी विन्द्र चाहिए। आचार्य पैठनिस ने कहा है कि-

पंचमी समस्ती च साच दशमी च नयोदशी।

प्रतिपदनवमी चाच दशमी च समस्ती तिथिः।।

उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय
कर्मकाण्ड एवं मुहूर्त ज्ञान

सम्पूर्ण तिथि अर्थातः पूर्ववर्त्ती तिथि स्वीकार करनी चाहिए। दशमी तु प्रकर्तव्य सदुर्ग द्विजसतम ऐसा कहते हुए आचार्य आपस्तम्ब ने बतलाया कि दशमी तिथि दुर्गा यानी नवमी से संयुक्त हो तो प्रायः होती है।

एकादशी तिथि का निर्णय करते हुए बतलाया गया है कि एकादशी द्वारा उभयोपायधिक्ये संरूप परोपक्ष अर्थात् एकादशी एवं द्वारा परतिथि से संयुक्त हो तो उपवास योग्य होती है। स्मृतिकार माधव जी का वचन है कि

एकादशी द्वारा चेतुपथं व्यंजनम्।

तदा पूर्वदिनं त्यावतं स्मार्त्यीयांऽपूर्वं तिथिः।।

सारांशतः यह कहा जा सकता है कि एकादशी एवं द्वारा परदिन से संयुक्त हो तो स्मार्ति के लिये स्वीकार है।

यथा शुम्भ ने द्वारा की उपदेश करते हुए आचार्य माधव ने बतलाया है कि चतुदशी कृष्णपक्ष में परिवर्तन योग्य होता है। शुम्भ ने यथा द्वारा पूर्वविद्या नहीं। क्षणिकायात्मक और परिवर्तन योग्यता के अनुसार यह स्मार्त के लिये स्वीकार है।

वाची युतायां चतुदशी।

शुम्भनम्।।

सारांशतः यह कहा जा सकता है कि एकादशी एवं द्वारा परदिन से संयुक्त हो तो स्मार्ति के लिये स्वीकार है।

अभ्यास प्रश्न-

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिए गए चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है- प्रश्न १-गणुकायात्मक दशमी नहीं?

क- पंचमी, ख- तृत्य, ग- द्वारा, घ- परदिन।
प्रश्न 2- मातृ विद्या का अर्थ कौन सी तिथि है?
   ख- तृतीया, ख- चतुर्थी, ग- पंचमी, घ- षष्ठी।

प्रश्न 3- नाग विद्या क्या है?
   ख- तृतीया, ख- चतुर्थी, ग- पंचमी, घ- षष्ठी।

प्रश्न 4- शिवनिष्ठा का अर्थ है?
   ख- अष्टमी, ख- चतुर्थी, ग- पंचमी, घ- षष्ठी।

प्रश्न 5- दुर्गा तिथि क्या है?
   ख- तृतीया, ख- चतुर्थी, ग- नवमी, घ- षष्ठी।

प्रश्न 6- दिशा विद्या क्या है?
   ख- तृतीया, ख- चतुर्थी, ग- पंचमी, घ- दशमी।

प्रश्न 7- मुनि का मतलब कौन तिथि है?
   ख- तृतीया, ख- चतुर्थी, ग- पंचमी, घ- सप्तमी।

प्रश्न 8- पूर्व विद्या का अर्थ है?
   ख- पूर्व तिथि ख- पश्चिम तिथि, ख- द्विस्वभाव तिथि, घ- मिश्रित।

प्रश्न 9- पर विद्या अर्थ है?
   ख- पूर्व तिथि, ख- पश्चिम तिथि, ख- द्विस्वभाव तिथि, घ- मिश्रित।

प्रश्न 10- समस्मिथि तिथि क्या है?
   ख- पूर्व तिथि ख- पश्चिम तिथि, ख- द्विस्वभाव तिथि, घ- मिश्रित।

1.4.2 नक्षत्रों का वैशिष्ट्य

प्रश्नके के विवच नाम अध्योपलिखित प्रकार से दिये गये है- अध्यानी- नासत्य, दस, आश्यकु, तुरं, वाजि, अध, हवा।
   भरणी- अन्वक, यम, कृतान।
   कृतिका- अमि, बन्हि, अनल, बृहीन, दरह, पावक, हुतभुकु, हुताश।
   रोहिं- धाता, रुहा, क-, विधाता, रुहण, विधि, विरंचि, मृदाप्ति।
   मृगिशरा- शशभृत्, शशी, मृगांक, शशांक, तिहु, हिमाणु, सुधांशु।
   आद्र- रू, शिव, ईश, त्रिनेत्र।
   पुष्मसु- अदिति, आदित्य।
   पप्प- इश्व, गुरु, लिप्न, देवपुरिन्द।

उल्ला।निष्ठा मुक्ति विश्वविद्यालय
आयुष्य- सर्प, उर्ग, भुजग, भुजंग, अहि, भोगी।
मया- पितृ, पिता।
पूर्व फल्गुनी- भग, योनि, भाग्या।
उत्तरा फल्गुनी- अर्यमा।
हस्त- रंव, कर, सूर्य, ब्रह्म, अर्क, तरण, तपन।
विषा- त्वाह्र, त्वाहृ, तहा।
स्वार्त- वायु, वात, अनिल, समीर, पवन, मारत।
विशाखा- शक्रानि, इन्द्रामि, विषामि, द्रिष्य, राधा।
अनुराधा- रत्र।
ज्ञेया- इन्द्र, शान, वासव, आख्यान्त, पुर्णद्र।
मूल- निरक्ति, रस, असम।
पूर्वाशा- जल, नीर, उदक, अम्बु, तोय।
उत्तराशा- विशेष, विशेषदेव।
श्रवण- गोविन्द, विषुं, श्रृंग, करण, श्रवः।
धनिष्ठा- ससु, श्रविषा।
शतरिष्ठा- वन्य, अपांपंति, नीरस्त, जलेश।
पूर्वाभाद्रपद- अजपाद, अजचरण, अजांश्र।
उत्तराभाद्रपद- अहिरुध्या।
रेवति- पूषा, अन्य, पीण।
इस रूप आपने नक्शाओं के विविध नामों को देखा। इसके ज्ञान से किसी भी श्रोक में वर्णित किसी भी उपनाम को उसके मूल नाम से समझ सकेंगे। इस पर कुछ प्रश्न दिये जा रहे हैं जो इस प्रकार हैं-

अभ्यास प्रश्न-

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पी है। प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है- 

प्रश्न 1-वसु किसका नाम है?
क-श्रवण, ख-धनिष्ठा, ग-शतरिष्ठा, घ- पूर्वाभाद्रपद।

प्रश्न 2-वरुण किसका नाम है?
क-श्रवण, ख-प्रहिना, ग-शातिभषा, घ- पूर्वभाद्रपदा।

प्रश्न 3-अजचरण किसका नाम है ?
क-श्रवण, ख-प्रहिना, ग-शातिभषा, घ- पूर्वभाद्रपदा।

प्रश्न 4-गोविन्द किसका नाम है ?
क-श्रवण, ख-प्रहिना, ग-शातिभषा, घ- पूर्वभाद्रपदा।

प्रश्न 5-चिश्रेष्ठ किसका नाम है ?
क-उत्तरायणा, ख-प्रहिना, ग-शातिभषा, घ- पूर्वभाद्रपदा।

प्रश्न 6-जल किसका नाम है ?
क-श्रवण, ख-पूर्वरिषाग्र, ग-शातिभषा, घ- पूर्वभाद्रपदा।

प्रश्न 7-रक्ष किसका नाम है ?
क-श्रवण, ख-प्रहिना, ग-मूल, घ- पूर्वभाद्रपदा।

प्रश्न 8 -वासव किसका नाम है ?
क-श्रवण, ख-प्रहिना, ग-शातिभषा, घ- ज्वेश्या।

प्रश्न 9-मित्र किसका नाम है ?
क-अनुराधा, ख-प्रहिना, ग-शातिभषा, घ- पूर्वभाद्रपदा।

प्रश्न 10-राधा किसका नाम है ?
क-श्रवण, ख-वियाङ्ग, ग-शातिभषा, घ- पूर्वभाद्रपदा।

1.5 सारांश

इस ईकाई में आपने तिथि, वार, नक्षत्र, योग एवं करण के बारे में जाना है। वस्तुतः किसी भी प्रकार ज्योतिषीय ज्ञान या ज्ञान, पर्व एवं उत्सवों के निर्णय हेतु इन बातों का ज्ञान अनिवार्य ही नहीं अपितु अपरिहार्य माना जाता है। तिथियों का संबंध हमारे जीवन के विस्तृत वृत्तांत से है। तिथियों की संख्या पन्तः है जिनका नाम प्रतिपदा, द्वितीया, तृतीया, चतुर्थी, पंचमी, षष्ठी, षष्ठी, अष्टमी, नवमी, दशमी, एकादशी, द्वादशी, अष्टोदशी, चतुदशी, पूर्णिमा या अमावास्या है। ये दोनों तिथियां शुक्ल पक्ष एवं कृष्ण पक्ष की है। शुक्ल पक्ष में प्रतिपदा से लेकर पूर्णिमा तक की तिथियों का नाम आता है। कृष्ण पक्ष में भी यही नाम होते हैं परन्तु पूर्णिमा नहीं होता इसके स्थान पर अमावास्या नाम की तिथि को स्वीकार किया गया है। अमावास्या के लिये पंचांग में 30 संख्या ही गयी होती है। पूर्णिमा के स्थान पर 15 लिखा गया होता है। तिथियों की क्षय एवं वृद्धि होती रहती है।
सूर्यदय के बाद किसी तिथि का प्रारंभ हो तथा दूसरे सूर्यदय के पहले अन्त हो जाय तो उसे क्षय तिथि के नाम से जाना जाता है। तीन इसके विपरीत एक ही तिथि यदि दो सूर्यदय में पाई जाती है उसे तिथि वृद्धि कहते हैं। क्योंकि एक ही तिथि दो दिवसों में हो जाती है। शुक्ल पक्ष में तिथियों की वृद्धि यानी उसमें चन्द्रमा की कलाओं की क्रमशः वृद्धि होती जाती है। यानी प्रतिसप्ताह एक कला, द्वितीया में दो कला, तृतीया में तीन कला, चतुर्थि में चार कला, पंचमी में पांच कला, षष्ठी में छ कला, समां में सात कला, अष्टमी में आठ कला, नवमी में नौ कला इत्यादि की वृद्धि होती है। कृष्ण पक्ष में इसी प्रकार चन्द्रमा की कलाओं में हास पाया जाता है। जैसे प्रतिसप्ताह में एक कला , द्वितीया में दो कला, तृतीया में तीन कला, चतुर्थि में चार कला, पंचमी में पांच कला, षष्ठी में छ कला, समां में सात कला, अष्टमी में आठ कला, नवमी में नौ कला इत्यादि की कमी होती जाती है।

प्रतिदिन कोई न कोई नक्षत्र अवश्य होती है। इन नक्षत्रों के आधार पर ही राशि नाम का निर्धारण किया जाता है। प्रत्येक नक्षत्र के चार पाद बतलाये गये हैं। जिस पाद में जातक का जन्म होता है उस पाद में निशित वर्ण को आधार मानकर राशि नाम का निर्धारण किया जाता है। अभिज्ञता सहित कुल नक्षत्रों की संख्या अठारह मानी जाती है। अभिज्ञता को छोड़कर कुल नक्षत्रों की संख्या सत्राइस बतलायी गयी है। अधिनी, भरणी, कृतिका, रोहिणी, मृगशिरा, आद्रा, पुनर्वसु, पुष्य, आश्वेषा, मध्य, पूर्व फाल्गुनी, उत्तर फाल्गुनी, हस्त, चित्रा, स्वती, विशाखा, अनुराधा, ज्येष्ठा, मूल, पूर्वीशाङ, उत्तराशाङ, श्रवण, धनिष्ठा, शतभीष्ट, पूर्वभाद्रपदा, उत्तरभाद्रपदा एवं रेवति के नाम से जाना जाता है।

दिनों को ही वारों के रूप में जाना जाता है जिन्हें क्रमशः सूर्यवार, सोमवार, भीमवार, चुब्बीवार, पुष्यपतिवार, शुक्रवार एवं शनिवार के रूप में जाना जाता है। व्योमित्र में इन सातों वारों के नामों को ग्रहों से जोड़कर यह यह रूप में सूर्यवार को रवि, सोमवार को चन्द्र, भीमवार को मंगल, चुब्बीवार को बुध, पुष्यपतिवार को गुरु, शुक्रवार को शुक्र एवं शनिवार को शनि के रूप में जाना जाता है। सूर्य का वर्ण लाल, चन्द्रमा यानी सोम का वर्ण सफेद, भूम का वर्ण लाल, बुध का वर्ण हरा, गुरु का वर्ण पीला, शुक्र का वर्ण सफेद एवं शनि का वर्ण काला बतलाया गया है। कुल सातईस योग होते हैं जिन्हें क्रमशः विष्कृतम्, प्रीति, आयुष्यान्, सोभाय, शोभन, अतिगण्ड, सुकृम्म, धृति, शूल, गण्ड, वृद्धि, ध्रुव, व्यापार, हर्ष, वञ्ज, सिद्धि, व्यतिपत, भृजयान, परिपश, शिव, सिद्ध, सावध, शुभ, शुक्ल, ब्रह्म, ऐद्य एवं वेद्यित। इन योगों का प्रयोग संकल्पण के अवसर पर किया
नाग तथा िकंूदभतुूद82न ये चार िूg2दभथर करण है। इनका ूg2अअारूg20भभ कृूg2द्णपूgदठठ कूg2्6 चतुदूgदठ0शी के उूgदठ6राूg29भूg�ठ0 से होता है।

वूg्द8

वूg2द्णु भगवान

उरग-उूgद9भ तराखूgद9् ड मुूgदठ9 त िवूg2द2 विवूg299ालय

1.6 पारिभाषिक शब्दावलीयाँ-

बिभि- भद्रा, शिव - कल्याण, पूर्विभि- पूर्व तिथि से बेच होना, परिभि- बाद वाली तिथि से बेच होना, आवृति- अव्यास, चर- चलायमान, सर्व- सभी, पूर्विभि- पहले का आधा भाग, भूर्वि- दिन के पूर्व का भाग, अपराह्न- दोपहर के बाद का समय, सायकार- सायकाल का समय, उत्तराण- बाद वाला आधा भाग, शंख- देवपूजन में भवि हेतु रखा जाने वाला मुह से बजाया जाने वाला एक प्रकार का बाद या उपोय- उपवास योग्य, गतर्थ- गत नक्षत्र, ख- शून्य, रस- छ, सूयुंदय- सूयं का उदय काल, सूयुंसत- सूयं का अर्ध होने का समय, अर्ण- समुद्र, सम्भव- उत्तम, गण- समूह, तुर- अछ, हस्त- बाह, नाग- सर्प, यम- यमराज, आईं- गीता, शूक्लपश्च- प्रकाश पंक्ति, कृष्णपश्च- अंधकारपश्च, रत्न- लाल, पीत- नीला, कृष्ण- काला, हरा-हरित, ध्वेत- सफेद, भार्गव- होग्रु, अमु- जल, अम्बु- कमल, सं- समा, अन्तर्गय- रेवती, अम्बु- अन्तर्करण वर- बाह, नाग- सर्प, यम- यमराज, आईं- गीता, शूक्लपश्च- प्रकाश पंक्ति, कृष्णपश्च- अंधकारपश्च, रत्न- लाल, पीत- नीला, कृष्ण- काला, हरा-हरित, ध्वेत- सफेद, भार्गव- होग्रु, अमु- जल, अम्बु- कमल, सं- समा, अन्तर्गय- रेवती, अम्बु- अन्तर्करण वर- बाह, नाग- सर्प, यम- यमराज, आईं- गीता, शूक्लपश्च- प्रकाश पंक्ति, कृष्णपश्च- अंधकारपश्च, रत्न- लाल, पीत- नीला, कृष्ण- काला, हरा-हरित, ध्वेत- सफेद, भार्गव- होग्रु, अमु- जल, अम्बु- कमल, सं- समा, अन्तर्गय- रेवती, अम्बु- अन्तर्करण वर- बाह, नाग- सर्प, यम- यमराज, आईं- गीता, शूक्लपश्च- प्रकाश पंक्ति, कृष्णपश्च- अंधकारपश्च, रत्न- लाल, पीत- नीला, कृष्ण- काला, हरा-हरित, ध्वेत- सफेद, भार्गव- होग्रु, अमु- जल, अम्बु- कमल, सं- समा, अन्तर्गय- रेवती, अम्बु- अन्तर्करण वर- बाह, नाग- सर्प, यम- यमराज, आईं- गीता, शूक्लपश्च- प्रकाश पंक्ति, कृष्णपश्च- अंधकारपश्च, रत्न- लाल, पीत- नीला, कृष्ण- काला, हरा-हरित, ध्वेत- सफेद, भार्गव- होग्रु, अमु- जल, अम्बु- कमल, सं- समा, अन्तर्गय- रेवती, अम्बु- अन्तर्करण
1.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

पूर्व में दिये गये सभी अभ्यास प्रश्नों के उत्तर यहाँ दिये जा रहे हैं। आप अपने से उन प्रश्नों को हल कर लिये होंगे। अब आप इन उत्तरों से अपने उत्तरों का मिलान कर लीजिये। यदि गलत हो तो उसको सही करके पुनः तैयार कर लीजिये। इससे आप इस प्रकार के समस्त प्रश्नों का उत्तर सही तरीके से दे पाएंगे।

6.3.1 के अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-
1-क, 2-क, 3-ख, 4-क, 5-ख, 6-ग, 7-क, 8-घ, 9-ख, 10-ख, 11-ग।

6.3.2 के अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-
1-क, 2-ख, 3-क, 4-ग, 5-घ, 6-ख, 7-घ, 8-ग, 9-घ, 10-ग।

6.3.3 के अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-
1-क, 2-ख, 3-ख, 4-घ, 5-ख, 6-घ, 7-ख, 8-क, 9-घ, 10-घ।

6.3.4 के अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-
1-ख, 2-ग, 3-ख, 4-घ, 5-क, 6-घ, 7-क, 8-घ, 9-क, 10-घ।

6.3.5 के अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-
1-ख, 2-घ, 3-क, 4-घ, 5-ज, 6-क, 7-क, 8-ख, 9-ख, 10-ख।

6.4.1 के अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-
1-ख, 2-क, 3-ग, 4-क, 5-ग, 6-घ, 7-घ, 8-क, 9-स, 10-क।

6.4.2 के अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-
1-ख, 2-ग, 3-घ, 4-क, 5-क, 6-ख, 7-ग, 8-घ, 9-क, 10-ख।

1.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची-

1-मुहूर्त चिन्तामणि।
2-भारतीय कुण्डली विज्ञान भग-1
3-शीघ्रबोध।
4-शान्ति- विधानम्।
5-आहिक सूत्रावलि।।
6-उत्सर्ग मधूख।
7-विद्यापीठ पंचांग।
8- फलदीपिका
9- अवकहड़ा चन्द्र।
10- सर्व देव प्रतिष्ठा प्रकाशः।
11- संस्कार-भास्करः। वीणा टीका सहित।
12- मनोभिलषितवत्तानुवर्णणम्- भारतीय नृत्य एवं अनुश्रान।
13- संस्कार एवं शान्ति का रहस्य।

1.9 सहायक उपयोगी पाठ्य सामग्री-

1- स्मृति कौशमः।
2- श्री काशी चित्रमाथ पंचांग।
3- जातकालकार।
4- याज्ञवल्क्य स्मृति।
5- संस्कार- विधानम।

1.10 निवंद्धात्मक प्रश्न-

1-तिथियों का परिचय दीजिये।
2- वारों का परिचय बतलाइये।
3- नक्त्रों का परिचय दीजिये।
4- योगों का परिचय दीजिये।
5- करणों का परिचय दीजिये।
6- प्रतिपदा से चंद्रमा तक के तिथियों का निर्णय लिखिये।
7- चंद्रमा से दशमी तक के तिथियों का निर्णय लिखिये।
8- दशमी से पूर्णिमा तक के तिथियों के निर्णय को लिखिये।
9- नक्त्रों के पर्यायवाची शब्दों को लिखिये।
10- वारों के पर्यायवाची शब्दों को लिखिये।
इकाई - 2 पंचांग का शुभाशुभ फल विचार

इकाई की संरचना

2.1 प्रस्तावना
2.2 उद्देश्य
2.3 पंचांग के शुभाशुभ स्वरूप
2.3.1 तिथियों के शुभाशुभ स्वरूप
2.3.2 तिथियों एवं चारों के संयोग से शुभ एवं अशुभ विचार
2.3.3 तिथि, चार एवं नक्षत्रों के संयोग से शुभ एवं अशुभ का विचार
2.4 शुभाशुभ योगों का प्रतिष्ठित विचार
2.4.1 चार एवं नक्षत्र के संयोग से सर्वार्थ सिद्धि योग का विचार
2.4.2 शुभाशुभ योग विचार का परिहार
2.4.3 शुभाशुभ योग विचार का परिहार
2.5 सारांश
2.6 परिभाषात्मक शब्दावलियाँ
2.7 बोध प्रश्नों के उत्तर
2.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
2.9 निबन्धात्मक प्रश्न
2.1 प्रस्तावना

इस इकाई में पंचांग के शुभ एवं अशुभ फल संबंधी प्रविधियों का अध्ययन आप करने जा रहे हैं। इससे पूर्व की प्रविधियों का अध्ययन आपने कर तिया होगा। पंचांग में पांच अंग अमूर्तत्व होते हैं जिन्हें हम तिथि, वार, नक्षत्र, योग एवं करण के रूप में जानते हैं। बिना इसके विचार किये वह दिन शुभ है या अशुभ है, इसका विचार आप नहीं कर सकते हैं। अतः इन तिथि, वार, नक्षत्र, योग एवं करणात्मा से केवल शुभ एवं अशुभ का विचार किया जाता है, इसका ज्ञान आपको इस इकाई के अध्ययन से हो जायेगा।

तिथि, वार, नक्षत्र, योग एवं करण यानी पंचांग के विचार के अभाव में किसी ब्रज, किसी मुहूर्त, किसी उत्सव एवं किसी पर्व का ज्ञान किसी भी व्यक्ति को नहीं हो सकता है। क्योंकि कोई भी ब्रज करते हैं तो उसका आधार तिथि, वार, नक्षत्र, योग एवं करण ही होते हैं। किसी दिन किसी नवीन कार्य का आरम्भ करते हैं तो उस दिन पंचांग का विचार कर लेते हैं क्योंकि शुभ मुहूर्त में आरम्भ किया गया कार्य शुभ फल प्रदान करने वाला होता है तथा अशुभ मुहूर्त में प्रारम्भ किया गया कार्य अशुभ फल देने वाला होता है। साधारण रूप से सभी लोग शुभ फल की अभिलाषा रखते हैं जिसके कारण पंचांग का शुभाशुभ ज्ञान सभी लोगों के लिये अविचार है। इसी प्रकार ब्रज का ब्रज जैसे मंगलवार का ब्रज करना हो तो यह जानना आवश्यक होगा किस मंगलवार से हम ब्रज आरम्भ करें जिससे वह ब्रज निर्विन्यता पूर्वक सम्पादित किया जा सके। आदि-आदि।

इस इकाई के अध्ययन से आप पंचांग यानी तिथि, वार, नक्षत्र, योग एवं करण इत्यादि के शुभ एवं अशुभ विचार करने की विधि का सम्प्रदाय ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे। इससे विषय के अलग संबंधी दोषों का निराशरण हो सकेगा जिससे सामाजिक जन भी अपने कार्य क्षमता का भरपूर उपयोग कर समाज एवं राष्ट्र के निर्माण में महत्वपूर्ण योगदान दे सकेंगे। आपके तत्संबंधी ज्ञान के कारण ऋषियों एवं महर्षियों का यह ज्ञान संक्षिप्त एवं सर्वाधिक हो सकेगा। इसके अलावा आप अन्य योगदान दे सकेंगे, जैसे - कल्याणीविधि के अनुपालन का सार्थक प्रयास करना, भारत वर्ष के गौरव की अभिवृद्धि में सहायक होना, सामाजिक सहभागिता का विकास, इस विषय की वर्तमान समस्याओं के समाधान हेतु उपयोगी बनाना आदि।

2.2 उद्देश्य

अब पंचांग के शुभ एवं अशुभ विचार की आवश्यकता को आप समझ रहे होंगे। इसका उद्देश्य भी इस प्रकार आप ज्ञान सकते हैं।
1. पंचांग ज्ञान की लोकोपकारक बनाना।
2. ब्रह्म, उसके निर्भरता शास्त्रीय विधि का प्रतिपादन।
3. ज्योतिष में व्याप्त अन्यविश्वास एवं भावनायां को दूर करना।
4. प्राचीन विद्या की रक्षा करना।
5. लोगों के कार्यक्रमात्मक विकास करना।
6. समाज में व्याप्त कुरकुरीतियों को दूर करना।

2.3 पंचांग के शुभाशुभ स्वरूप-

पंचांग में विश्लेषण में पांच अंगों का विवरण दिया गया है। पंचांग शब्द ज्योतिष एवं कर्मकाण्ड दोनों में आता है। कर्मकाण्ड का पंचांग अलग है जिसमें गणपति पूजन, कलशमहत्याग, मातृका पूजन, नान्दी श्राद्ध एवं आचार्य वरण आता है। यहाँ हम ज्योतिष के पंचांग पूजन की विवाह कर रहे है। ज्योतिष के पंचांग में तिथि, बार, नक्श, योग एवं करण इन पांच अंगों को बतलाया गया है। इन पांचों अंगों के आधार पर ही शुभ एवं अशुभ के बारे में विचार करते हैं। यहाँ हम उनके प्रथम- प्रथम स्वरूपों की चर्चा करेंगे जिससे संबंधित विषय का ज्ञान प्राप्त हो सकेगा।

2.3.1 तिथियों के शुभाशुभ स्वरूप-

तिथि क्या है? इस पर विचार करते हुए आचार्यों ने कहा है एक-चन्द्रकलावृद्धिकार्य-तरावलिच्छन: काल: तिथि। अर्थात् चन्द्रमा के एक-एक कला वृद्धि के अवस्थान काल को तिथि कहा जाता है। इसके बारे में वृहद ज्ञान आप इससे पूर्ण के प्रकरण में प्राप्त कर सकते हैं। तिथियों की संख्या पन्द्रह है जिनका नाम प्रतिपदा, द्वितीया, तृतीया, चतुर्थी, पंचमी, षष्ठी, सामवी, अष्टमी, नवमी, दशमी, एकादशी, द्वादशी, योगदशी, चतुदशी, पूर्णिमा एवं अमावस्या है। ये दोनों तिथियों शुक्ल पक्ष एवं चूर्ण पक्ष की है। इनके शुभ एवं अशुभ के बारे में यह वचन मिलता है- नन्दा, चंद्रव, शुक्ल, रित्का पूर्णिमा तिथियों अशुभमध्यमशता।

सिते असिते शुभमध्य: स्थ: सितजनमीकृंगिरो च सिन्अ। महामन्नितांमणि: गुप्तार्थार्थक्रिया- 4

इस शब्द के अनुसार तिथियों को पांच भागों में बांटा गया है जिन्हें नन्दा, चंद्रव, शुक्ल, रित्का एवं पूर्णिमा के नाम से जाना जाता है। नन्दा में प्रतिपदा, षष्ठी एवं एकादशी तिथियां, चंद्रव में द्वितीया, सामवी एवं द्वादशी तिथियां, शुक्ल में तृतीया, अष्टमी एवं त्रयोदशी तिथियां, रित्का में चतुर्थी, नवमी एवं चतुदशी
तिथियों तथा पूर्ण में पंचमी, दसमी एवं अमावास्या या पूर्णिमा तिथियां आती है। प्रथम पक्ष में ये नन्ददि तिथियां तीन बार आती है। उसी को व्यक्त करते हुये कहा गया है कि शुक्ल पक्ष में प्रथम नन्दा इत्यादि तिथियां अशुभ, द्वितीय नन्दा इत्यादि तिथियां मध्य एवं तृतीय नन्दा इत्यादि तिथियां शुभ होती है। उसी प्रकार कृष्ण पक्ष में प्रथम नन्दा इत्यादि तिथियां शुभ, द्वितीय नन्दा इत्यादि तिथियां मध्य एवं तृतीय नन्दा आदि तिथियां अशुभ होती है।

शुक्लवार को नन्दा तिथि यानी प्रतिपदा, चंद्री एवं एकादशी, बुधवार को भ्रुा यानी द्वितीया, समस्मी एवं द्वादशी तिथि, भीमवर को प्र्वय यानी तृतीया, अष्टमी एवं नवोंदशी तिथि, सन्नवर को ितर्क यानी चतुर्थी, नवमी एवं चतुर्दशी तिथि तथा गुरुवर को पंचमी, दशमी, अमावास्या या पूर्णिमा तिथि सिद्ध योग द्वारा प्रदान करती है अर्थात् इसमें कार्य का आरम्भ कार्य को सिद्धि दिलाने वाला होता है।

चन्द्रमा के पूर्ण या क्षोण होने से तिथियों में बलत्व या निर्वलत्व होता है। शुक्ल पक्ष में प्रतिपदा से पंचमी तक चन्द्रमा के क्षीण होने के कारण प्रमावृत्ति की नन्दा इत्यादि तिथियां अशुभ है। पश्चात् से दसमी तक चन्द्रमा के मध्य यानी न पूर्ण न क्षीण होने से द्वितीयृवृत्ति की नन्दा इत्यादि तिथियां मध्य मानी जाती है। ठीक इसी प्रकार तृतीयृवृत्ति की नन्ददि तिथियां चन्द्रमा के पूर्ण होने के कारण शुभ कही गयी है।

इसके अध्ययन से तिथियों की संज्ञा एवं शुभ एवं अशुभत्व का विचार आप स्मरण करके से जान गये होंगे। इस ज्ञान को पुष्ट करने के लिये नीचे प्रश्न दिया जा रहा है जो इस प्रकार है-

अभ्यास प्रश्न - 1

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अध्ययनित क्षेत्रों का उत्तर दे सकते हैं। अध्ययनित प्रश्न बहु विकल्पी है। प्रथम प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है।

प्रश्न 1-नन्दा किसकी नाम है?
क - प्रतिपदा, ख - समस्मी, ग - नवोंदशी, घ - चतुर्दशी।

प्रश्न 2- भ्रुा किसकी नाम है?
क - प्रतिपदा, ख - समस्मी, ग - नवोंदशी, घ - चतुर्दशी।

प्रश्न 3- जया किसकी नाम है?
क - प्रतिपदा, ख - समस्मी, ग - नवोंदशी, घ - चतुर्दशी।

प्रश्न 4- ितर्क किसकी नाम है?
क - प्रतिपदा, ख - समस्मी, ग - नवोंदशी, घ - चतुर्दशी।

उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय

उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय
प्रश्न 5- पूर्णा किसका नाम है?
क-प्रतिपदा, ख-पंचमी, ग-जयोदशी, घ-चतुर्दशी।
प्रश्न 6- शुक्रवार को कौन तिथि हो तो सिद्धा योग बनता है?
क-नंदा, ख-भद्रा, ग-जया, घ-रितका।
प्रश्न 7- बुधवार को कौन तिथि हो तो सिद्धा योग बनता है?
क-नंदा, ख-भद्रा, ग-जया, घ-रितका।
प्रश्न 8- भृंगवार को कौन तिथि हो तो सिद्धा योग बनता है?
क-नंदा, ख-भद्रा, ग-जया, घ-रितका।
प्रश्न 9- शनिवार को कौन तिथि हो तो सिद्धा योग बनता है?
क-नंदा, ख-भद्रा, ग-जया, घ-रितका।
प्रश्न 10- गुरुवार को कौन तिथि हो तो सिद्धा योग बनता है?
क-नंदा, ख-भद्रा, ग-पूर्णा, घ-रितका।

2.3.2 तिथियों एवं वारों के संयोग से शुभ एवं अशुभ विचार-
अब हम रवी इच्छादि वारों, तिथियों एवं नक्षत्रों के संयोग से शुभ एवं अशुभ कालों का विचार इस प्रकार करेंगे। अधृतलिखित श्लोक को ध्यान पूर्वक पढ़ना चाहिए।

नंदा भद्रा नंदिकार्या जयाः च रितका भद्रा चैव पूर्णा मृताकाः।
याम्य त्वार्द वैशदेवं धनिष्ठायन्यं ज्ञेयान्यं रक्तर्धमभं स्यात्।। मुहूर्त्चिन्तामणि:
शुभाशुभप्रकारणम्- 5
अथातं सूर्य आदि वारों में क्रम से नंदा, भद्रा, नंदा, जया, रितका, भद्रा और पूर्णा तिथियां पढ़ जाये तो अभय योग होता है। इसका मानक रविवार को नंदा यानी प्रतिपदा, षष्ठि एवं एकादशी तिथियां हो, सोमवार को भद्रा यानी द्वितीया, सप्तमि एवं द्वादशी तिथियां हो, भृंगवार को नंदा यानी प्रतिपदा, षष्ठि एवं एकादशी तिथियां हो, बुधवार को जया यानी तृतीया, अष्टमि एवं चतुर्दशी तिथियां हों, गुरुवार को रितका यानी चतुर्दशी, नवमि एवं चतुर्दशी तिथियां हों, शुक्रवार को भद्रा यानी द्वितीया, सप्तमि एवं द्वादशी तिथियां हों और शनिवार को पूर्णा यानी पंचमी, दशमि एवं अमावास्या या पूर्णिमा तिथियां आती हो तो मृत योग बन जाता है।
इसी प्रकार सूर्यादि वारों में क्रमशः भरणी आदि नक्षत्रों हो अर्थातः रविवार को भरणी, सोमवार को विश्व, मंगलवार को उत्तरास्त्रा, बुधवार को ज्ञेय, वृहस्पतिवार को उत्तरापाल्यु, शुक्रवार को ज्ञेया और शनिवार को रेताया आ जाय तो दथ योग होता है। ये दोनों मृत योग एवं दथ योग यात्रा में अल्पन निम्नित है। अन्य शुभ कार्य भी इनमें न स्वीकार किये जाय तो उत्म होता है।

उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय

103
कर्मकाण्ड एवं मूहूर्त ज्ञान

बृहस्पतिदिवस के विस्तार से विचार करते हुए प्राणकार ने एक विचार और दिया है जिसका वर्णन मे यहाँ अत्यन्त उचित समझता हूँ जो इस प्रकार है।

पशुपातितिथियो नवप्रसिद्धियो मन्दरहिलोम प्रतिपद वृषे।

सम्मके ध्रुवः पशुपातिपाश्र्यर्धार्यानान्।

इस शोक की व्याख्या करते हुए बतलाया गया है कि षूग्ददी आदि क्रम से तिथियां और शनि आदि उलटे दिनों के योग से क्रक्रम नामक अधम योग होता है। वैसे शनिवार को षूग्ददी, शुक्रवार को समस्त, 

बुधवार को अष्ठप्त, बुधवार को नवमी, भौमवार को दशमी, सोमवार को एकादशी और रविवार को द्वितीया हो जाय तो क्रक्रम नाम का कुयोग होता है। यह कुयोग दिन एवं तिथि के संयोग से तेह हो रहे के कारण हो रहा है। इसलिए शनिवार का मतलब सा, भूभान का मतलब घ, दोनों को जोड़ने से तेह हो रहा है जो इसका कारण क्रक्रम नामक योग बन रहा है। एक और उदाहरण समझ से यह बात छूटा है जो जितने से तेह हो रहा है जिसके कारण क्रक्रम नामक योग बन रहा है।

इसके साथ ही ज्योतिष शास्त्र में यह बतलाया गया है कि भूभान के प्रतिपदा तथा रविवार की समस्त हो तो संवत नाम का कुयोग होता है। इसे शुभ नही माना गया है।

इसके अलावा दूसरे धर्मराय के संयोग से अशुभ योग होता है। इसकी बतलाया गया है कि- 

सूर्यशंकारिनि-सार्यन्त-वेदंगसंयमित्रे ज्ञानितः।

सूर्यमंगलगोदिगीशा दश्च विषयविध्रुवं हृताशनः।

सूर्यादिवारे तिथियोभवनित प्रकाशिकाशानविवृत्वेषि।

ब्रह्मकर्णोद्वंगमण्डलकाशु विजयवर्गस्य गमने तवस्यम्।।

अर्थात् रविवार को द्वितीया, सोमवार को एकादशी, मंगलवार को पंचमी, 

बुधवार को लंकृत, बुधवार को अष्ठप्त, शुक्रवार को अष्ठप्त एवं शनिवार को नवमी दो योग होता हैं। रविवार को नवमी, सोमवार को षूग्ददी, भूमवार को दशमी, सोमवार को अष्ठप्त, 

बुधवार को द्वितीया, बुधवार को अष्ठप्त, शुक्रवार को अष्ठप्त एवं शनिवार को समस्त दो योग होता है। रविवार को द्वितीया, सोमवार को षूग्ददी, मंगलवार को दशमी, बुधवार को अष्ठप्त, 

बुधवार को अष्ठप्त, शुक्रवार को दशमी एवं शनिवार को एकादशी दो योग होता है। रविवार को नवमी, सोमवार को षूग्ददी, मंगलवार को पंचमी, बुधवार को लंकृत, 

बुधवार को अष्ठप्त, शुक्रवार को अष्ठप्त एवं शनिवार को हस्त नक्त्र आ जाय तो चन्द्रमण्डल नामक योग होता है। उक में का योग समस्त शुभ कार्यों में विषयक बतलाये गये हैं। विशेष कर कात्यायन दो अवस्थाः ही व्याव्याय है।

इसमे आपने तिथियों, दिनों एवं नक्त्रों के संयोग से अशुभ योगों के बारे में जाना। इसका छोड़कर
अन्यतः शुभ होता है। अतः इस पर कुछ प्रश्न दिये जा रहे हैं जिसका हल आपके ज्ञान को अभिविद्धित करेगा।

अभ्यास प्रश्न – 2

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखित प्रश्न बहुविकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है।

प्रश्न 1- शनिवार को क्रक्षण योग बनता है?
   क-पंडी, ख-सामी, ग-अष्टमी, घ- नवमी।

प्रश्न 2- शुक्रवार को क्रक्षण योग बनता है?
   क-पंडी, ख-सामी, ग-अष्टमी, घ- नवमी।

प्रश्न 3- गुरुवार को क्रक्षण योग बनता है?
   क-पंडी, ख-सामी, ग-अष्टमी, घ- नवमी।

प्रश्न 4- बुधवार को क्रक्षण योग बनता है?
   क-पंडी, ख-सामी, ग-अष्टमी, घ- नवमी।

प्रश्न 5- भिमवार को क्रक्षण योग बनता है?
   क-पंडी, ख-दशमी, ग-अष्टमी, घ- नवमी।

प्रश्न 6- सोमवार को क्रक्षण योग बनता है?
   क-पंडी, ख-सामी, ग-अष्टमी, घ- एकादशी।

प्रश्न 7- रविवार को क्रक्षण योग बनता है?
   क-पंडी, ख-सामी, ग-अष्टमी, घ- झादशी।

प्रश्न 8- शनिवार को कौन तिथि हो तो दाध योग बनता है?
   क-पंडी, ख-सामी, ग-अष्टमी, घ- नवमी।

प्रश्न 9- शनिवार को कौन तिथि हो तो विष योग बनता है?
   क-पंडी, ख-सामी, ग-अष्टमी, घ- नवमी।

प्रश्न 10- शनिवार को कौन तिथि हो तो हुताशन योग बनता है?
   क-पंडी, ख-सामी, ग-अष्टमी, घ- एकादशी।

2.3.3 तिथियों एवं नक्षत्रों के संयोग से शुभ एवं अशुभ का विचार

तिथियों एवं नक्षत्रों के मिलन शुभ एवं अशुभ का विचार हम इस प्रकार करते हैं-
   तथा निन्दा शुभे सार्थ द्रादशयं वैव्यादि।
   अनुराधातृतीयां धादायां पंचम्यां प्रत्येक कथा।
कर्मकाण्ड एवं मुहूर्त ज्ञान

इसका अर्थ करते हुये बतलाया गया है कि द्वादशी तिथि में अश्वेशा, प्रतीपदा तिथि में उन्नान, द्वितीया तिथि में अनुराधा, पंचमी में ममा, तृतीया में तीनों उत्तरान यानी उत्तरान्यात्मुगी, उत्तरान, उत्तरान्यात्मुगी, एकादशी में रोहिणी, वर्षोदशी में स्वाति और चित्रा, सत्रमी में हर्ष एवं नूल, नवमी में कृतिन, अष्ट्री में पूर्वान्यात्मुगी और चद्री में रोहिणी पढ़े तो निश्चय होता है। इनमें शुभ कार्य करना बजरित माना गया है।

नक्षत्रों का मासों से संबंध करके भी शुभ एवं अशुभ का विचार किया गया है।

कदा/ऊःयथभे/ऊथःवा/ऊःयथरायू िव/ऊःअयै/ऊथ8ययौ भगवासवो।

शुभ कार्य करने से कताूं के धन का नाश होता है।

इसी अर्थ करते हुये बतलाया गया है कि चैत्राम में रोहिणी एवं अधिनी नक्षत्र, बशाख मास में चित्रा एवं स्वाति नक्षत्र, ज्वेर एवं पुष्य नक्षत्र, आषाढ़ में पूर्वान्यात्मुगी एवं धनिष्ठा नक्षत्र, श्रावण में पूर्वान्यात्मुगी एवं श्रवण नक्षत्र, भादर में रोहिणी एवं व्रष नक्षत्र, आश्वी में रोहिणी एवं कृतिन नक्षत्र, कार्तिक में कृतिन एवं भरण नक्षत्र, मार्गिशीर्ष में व्रष एवं विशाखा नक्षत्र, पौष में आर्द्रा एवं अधिनी नक्षत्र, ग्रह में श्रवण एवं मूल नक्षत्र, फाल्गुन में भरण एवं ज्वेर नक्षत्र मास शून्य नक्षत्र कहे गये हैं। इनमें शुभ कार्य करने से कताूं के धन का नाश होता है।

इसी प्रकार राशियों के शून्यता का भी वर्णन मिलता है। यथा-

घठो झशो गौरिंशुन एवं एस्तंग सप्तःवर्तील।ः।

धनुः कर्को नुः। सिन्हश्रेष्ठाद्विशूनारायणः।ः।

अर्थात् चैत्र मास में कुम्भ, बशाख में मीन, ज्वेर में तुला, आषाढ़ में मिथुन, श्रावण में मेष, भादर में कन्या, आश्विन में धनिष्ठा, कार्तिक में तुला, मार्गिशीर्ष में धनु, पौष में कर्क, माघ में मकर और फाल्गुन में सिंह ये राशियां शून्य मानी गयी है। इनमें शुभ कार्य करने से कताूं के वंश और धन दोनों का निनाश होता है।

इसी प्रकार वंशांग में तिथियों एवं लन्नों के संयोग से भी शुभ एवं अशुभ का विचार इस प्रकार किया गया है।

उत्तराखण्ड मुक्त विश्वबिद्यालय

106
पशुपितादिकोचारिन्थों घटनाओं मृगोऽनाथको मिथुनाङ्गनांचा चा।
चापेतुरे कर्कोहरी ह्यांच्या गोन्या च नेषे तिथिशृंखलने॥
शुक्ल एवं कृष्ण दोन्हों पक्षांत मृत्युपाय से लेकर विशम तिथियोंमध्ये क्रम से प्रतिपदा मध्ये तुला एवं मकर, तृतीया मध्ये सिंह और मकर, चप्पमी मध्ये मिथुन और कन्या, सामती मध्ये धनु एवं कर्क, नवमी मध्ये कर्क और सिंह, एकादशी मध्ये धनु और मीन, चन्द्रदेशी मध्ये वृष और मीन शून्य लम्ब हे। इनमें कोई शुभकार्य करना उचित नहीं है।
इसमें आपने तिथियों, वारों, मासों, नयां एवं श्रवणों के संयोग से अर्थात् योगों के बारे में जाना।
इसको छोड़कर अनन्य शुभ होता है। अतः इस पर कृत प्रश्न दिये जा रहे हैं जिसका हल आपके ज्ञान को अभिविद्ध करेगा।
अभ्यास प्रश्न- 3
उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखत प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखत प्रश्न बहु विकल्पी है। प्रश्नेक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है।
प्रश्न 1- द्वादशी तिथि में कौन नक्षत्र त्याज्य है?
क-आश्रेष्ठा, ख- अनुराधा, ग-मघा, घ- तीनू उत्तर।
प्रश्न 2- द्वितीया तिथि में कौन नक्षत्र त्याज्य है?
क-आश्रेष्ठा, ख- अनुराधा, ग-मघा, घ- तीनू उत्तर।
प्रश्न 3- चप्पमी तिथि में कौन नक्षत्र त्याज्य है?
क-आश्रेष्ठा, ख- अनुराधा, ग-मघा, घ- तीनू उत्तर।
प्रश्न 4- तृतीया तिथि में कौन नक्षत्र त्याज्य है?
क-आश्रेष्ठा, ख- अनुराधा, ग-मघा, घ- तीनू उत्तर।
प्रश्न 5- एकादशी तिथि में कौन नक्षत्र त्याज्य है?
क-रोहिणी, ख- अनुराधा, ग-मघा, घ- तीनू उत्तर।
प्रश्न 6- ह्यांच्या तिथि में कौन नक्षत्र त्याज्य है?
क-आश्रेष्ठा, ख- स्वाती, ग-मघा, घ- तीनू उत्तर।
प्रश्न 7- सामती तिथि में कौन नक्षत्र त्याज्य है?
क-आश्रेष्ठा, ख- अनुराधा, ग-हस्त, घ- तीनू उत्तर।
प्रश्न 8- नवमी तिथि में कौन नक्षत्र त्याज्य है?
क-आश्रोषा, ख- अनुराधा, ग-मघा, घ- कृिूgदठ6का।
प्रश्न 9- अष्ट्री तिथि में कोन नक्षत्र त्वाज्य है?
क-पूवीभाषाय, ख- अनुराधा, ग-मघा, घ- तीनों उत्तर।
प्रश्न 10- ष्ठी तिथि में कोन नक्षत्र त्वाज्य है?
क-आश्रोषा, ख- रोहिणी, ग-मघा, घ- तीनों उत्तर।
2.3.4 तिथि, वार एवं नक्षत्रादि योगों द्वारा शुभ एवं अशुभ का विचार
इसमें तिथि, वारों एवं नक्षत्रों तीनों का संयोग पाया जाता है। इन तीनों के संयोगों के आधार पर अशुभ एवं शुभ फलों का विचार करते हैं-
वर्णयेतु सर्वकार्यसंहस्तार्क पंचमी तिथिः।
भीमाधीनीयं च सत्यमः पशुद्वयं च चढ़नन्दनं तथा।
बुधानुराधामश्यः दशाम्यः भुमुखावतीम्।
नवम्यः गुरुपुष चेकादाम्यः शनिरोहिणीयू।
इसके अर्थ का प्रतिपादन करते हुये कहा गया है कि पंचमी तिथि में रविवार और हस्त नक्षत्र हो, समस्य तिथि में भीमचार और अष्ट्री नक्षत्र हो, ष्ठी में सोमवार एवं मृगशिरा नक्षत्र हो, अष्ट्री में बुधवार और अनुराधा नक्षत्र हो, दशामी में गुर्जर एवं रेवती नक्षत्र हो, नवमी में गुर्जर एवं पुष्प नक्षत्र हो और एकादशी में रोहिणी नक्षत्र हो तो इन समस्य सूभ कारों में त्याग कर देना चाहिये।
यदि यहाँ नक्षत्र एवं वार के योग से शुभ योग होते है, तथापि तिथियों के योग से निषिद्ध योग हो जाता है। इसी को मधुसिपूष्य योग भी कहते हैं। तथापि वस्त्रिय ने दूसरे प्रकार का मधु सूद्ध योग कहा है जिसका हालाहल योग भी कहा गया है।
नक्षत्रों एवं वारों के योग से कुछ विशिष्ट कार्यों को करने के लिये विवर्तित किया गया है जो इस प्रकार है-
गृहप्रवेशस्य यात्रायां विवाहे च यथाक्रमम्।
भीमाधीनीयं शरी ब्राह्मण गुरु पुष्प विवर्तनेत्।
यदि प्रज्ञा योगों की चरचा की गई हैं तो योग सिद्ध योग बनाते है लेकिन कुछ विशेष कार्य हेतु इन योगाँ को वर्तित किया गया है। गृह प्रवेश में भीमचार एवं अष्ट्री नक्षत्र का संयोग त्याग देना चाहिये। यात्रा में रोहिणी नक्षत्र के संयोग को त्याग देना चाहिये। विवाह में गुर्जर एवं पुष्प नक्षत्र के संयोग को त्याग देना चाहिये।
विशेष- भीमाभिनी, शानिरोहिणी और गुप्तया ये तीनो सिद्ध है। तथापि गुप्तवेश में भीमवर निषिद्ध है, अर्थात् नक्स्त्र भी विहित नही है। अतः सिद्ध योग होते हुये भी गुप्तवेश में त्याज्य है। वसिष्ठ एवं राजमात्रण के अनुसार यात्रा में शानिवार निन्दा माना गया है। अतः सुहिणी के योग से सिद्ध योग होते हुये भी यात्रा में त्याज्य है। गुप्तया योग कामुकता का वर्धक होने से विवाह में निषिद्ध माना गया है। सभी प्रकार के कायाः में अधोलिखित योगों को त्याज्य माना है।

जन्मश्यामसत्योज्वितपियंिराधवमष्ठििलिनिनामिनिनिधिविद्वत्त्वांकितितिथियययोऽै।

न्यायाधिमापूकृत्तिप्रहाराद्वातिविश्वकभवध्वंस्तिकात्रथिवववर्वर्यम्।

परिधानः पंच शूले षट् च गण्डापितगण्डं।

व्यावहारेऽवनामवृद्ध्व वर्याः: सवेशु कर्ममु।।

अर्थाधिक जन्म नक्स्त्र, जन्म मास, जन्म तिथि, व्यविश्वातः, भूषज, वैभ्वत, अमावास्या, पितृ घाट दिन, तिथि का क्षय दिन, तिथि धृक्क्र वाला दिन, न्यून मास, अधिक मास, कुलिक योग, अर्जयाम, पात, विक्रम योग और वट्ट योग की तीन घटी, परिचय योग का आधा, गुलिहयों की पाँच घटी, गण्ड एवं अश्वगण्ड योग की छ: छ: घटी एवं व्यापार योग की नव घटी सभी प्रकार के शुभ कायाः हेतु वजित की गयी है।

विशेष- जन्म नक्स्त्र एवं जन्म मास उपनयन में शुभ होता है।

दूसरे दूसरे गर्भ से उपनयन बलक बालिकाओं का विवाह उत्तम है।

नारद संहिता के अनुसार पूः वृद्ध, मुण्डन, अन्नप्राशन, त्रतबन्ध इन कायाः में जन्मस्त शुभ माना गया है। बहुत से कायाः में जन्म की तारा शुभ कही गयी है।

इस प्रकार अन्ये तिथियों, बारों, मासों, लूः एवं नक्स्त्रों के संयोग से शुभ एवं अशुभ योगों के बारे में जाना। इसको छोड़कर अन्य शुभ होता है। अतः इस पर कुछ प्रश्न दिये जा रहे हैं जिसका हल आपके ज्ञान को अभिवर्धित करेगा।

अभ्यास प्रश्न - 4

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चर विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है।

प्रश्न 1- पंचमी तिथि में क्या त्याज्य है?

क- हस्ताक्ष, ख- भीमाभिनी, ग- इश्न्दवम्, घ- बुधानुराधा।

प्रश्न 2- सप्तमी तिथि में क्या त्याज्य है? ১০।
क- हस्ताक्षर, ख- भीमाशिर्षनी, ग- इतनेन्द्रवम्, घ- बुधानुराधा।

प्रश्न 3- छठी तिथि में क्या त्याज्य है?
क- हस्ताक्षर, ख- भीमाशिर्षनी, ग- इतनेन्द्रवम्, घ- बुधानुराधा।

प्रश्न 4- अष्टमी तिथि में क्या त्याज्य है?
क- हस्ताक्षर, ख- भीमाशिर्षनी, ग- इतनेन्द्रवम्, घ- बुधानुराधा।

प्रश्न 5- दशमी तिथि में क्या त्याज्य है?
क- भृगुरेवती, ख- भीमाशिर्षनी, ग- इतनेन्द्रवम्, घ- बुधानुराधा।

प्रश्न 6- नवमी तिथि में क्या त्याज्य है?
क- हस्ताक्षर, ख- भीमाशिर्षनी, ग- गुरुपृष्ठ, घ- बुधानुराधा।

प्रश्न 7- एकादशी तिथि में क्या त्याज्य है?
क- हस्ताक्षर, ख- भीमाशिर्षनी, ग- शनिरोहिणी, घ- बुधानुराधा।

प्रश्न 8- गृहवस्त्र में क्या त्याज्य है?
क- हस्ताक्षर, ख- भीमाशिर्षनी, ग- इतनेन्द्रवम्, घ- बुधानुराधा।

प्रश्न 9- यामा में क्या त्याज्य है?
क- शनि रोहिणी, ख- भीमाशिर्षनी, ग- इतनेन्द्रवम्, घ- बुधानुराधा।

प्रश्न 10 - विवाह में क्या त्याज्य है?
क- हस्ताक्षर, ख- भीमाशिर्षनी, ग- गुरुपृष्ठ, घ- बुधानुराधा।

2.4. शुभाशुभ योगों का विशेष विचार-

इस प्रकार में पंचांग के अनुसार शुभ अशुभ फलों के विशेष विचार किये जायेंगे। इसका ज्ञान शुभ अशुभ फलों के जानने हेतु अत्यावश्यक बतलाया गया है।

2.4.1 वार एवं नक्षत्र के संयोग से सर्वार्थ सिद्धि योग का विचार-

सर्वार्थसिद्धि योग एक ऐसा योग है जिसमें कार्य करने से सभी प्रकार के उद्देश्यों की पूर्ति होती है। आइये विचार करें कि सर्वार्थ सिद्धि योग कैसे बनता है। इस सन्दर्भ में अध्योतितिक श्रीरक मिलता है- 

सूर्यकृष्णभूमिनिर्माणा
भौमेश्वरविभिन्नभूतकृष्णसार्वेष
जीवेन्यमेंत्रावतिवधिष्ण्यमूकेन्यमेंत्रावतिवधिष्ण्यमूकेन्यमेंत्रावतिवधिष्ण्यमूकेन्यमेंत्रावतिवधिष्ण्यमूकेन्यमेंत्रावतिवधिष्ण्यमूकेन्यमेंत्रावतिवधिष्ण्यमूकेन्यमेंत्रावतिवधिष्ण्यमूकेन्यमेंत्रावतिवधिष्ण्यमूकेन्यमेंत्रावतिवधिष्ण्यमूकेन्यमेंत्रावतिवधिष्ण्यमूकेन्यमेंत्रावतिवधिष्ण्यमूकेन्यमेंत्रावतिवधिष्ण्यमूकेन्यमेंत्रावतिवधिष्ण्यमूकेन्यमेंत्रावतिवधिष्ण्यमूकेन्यमेंत्रावतिवधिष्ण्यमूकेन्यमेंत्रावतिवधिष्ण्यमूकेन्यमेंत्रावतिवधिष्ण्यमूकेन्यमेंत्रावतिवधिष्ण्यमूकेन्यमेंत्रावतिवधिष्ण्यमूकेन्यमेंत्रावतिवधिष्ण्यमूकेन्यमेंत्रावतिवधिष्ण्यमूकेन्यमेंत्रावतिवधिष्ण्यमूकेन्यमेंत्रावतिवधिष्ण्यमूकेन्यमेंत्रावतिवधिष्ण्यमूकेन्यमेंत्रावतिवधिष्ण्यमूकेन्यमेंत्रावतिवधिष्ण्यमूकेन्यमेंत्रावतिवधिष्ण्यमूकेन्यमेंत्रावतिवधिष्ण्यमूकेन्यमेंत्रावतिवधिष्ण्यमूकेन्यमेंत्रावतिवधिष्ण्यमूकेन्यमेंत्रावतिवधिष्ण्यमूकेन्यमेंत्रावतिवधिष्ण्यमूकेन्यमेंत्रावतिवधिष्ण्यमूकेन्यमेंत्रावतिवधिष्ण्यमूकेन्यमेंत्रावतिवधिष्ण्यमूकेन्यमेंत्रावतिवधिष्ण्यमूकेन्यमेंत्रावतिवधिष्ण्यमूकेन्यमेंत्रावतिवधिष्ण्यमूकेन्यमेंत्रावतिवधिष्ण्यमूकेन्यमेंत्रावतिवधिष्ण्यमूकेन्यमेंत्रावतिवधिष्ण्यमूकेन्यमेंत्रावतिवधिष्ण्यमूकेन्यमेंत्रावतिवधिष्ण्यमूकेन्यमेंत्रावतिवधिष्ण्यमूकेन्यमेंत्रावतिवधिष्ण्यमूकेन्यमेंत्रावतिवधिष्ण्यमूकेन्यमेंत्रावतिवधिष्ण्यमूकेन्यमेंत्रावति
इसका अर्थ करते हुए बतलाया गया है कि रविवार को अर्क यानी हस्त नक्त्र, मूल नक्त्र, उत्तर यानी उत्तराफळयुग, उत्तराध्यय, उत्तराधापण्ड, पुष्य और अधिनी ये सात नक्त्र हों तो सर्वांग सिद्ध योग होता है।

सोमवार को श्रुति यानी श्रवण, ब्राह्म यानी रोहिणी, शाशी यानी मृगशिरा, इज्य यानी पुष्य, और मैत्र यानी अनुराधा ये पाँच नक्त्र होते हैं तो सर्वांग सिद्ध योग होता है।

मंगलवार को अन्ध यानी अधिनी, अहिरुध्य यानी उत्तराधापण्ड, कृषाणु यानी कृतिका तथा सार्य यानी आभोग्य ये चार नक्त्र होते हैं।

बुधवार को ब्राह्म यानी रोहिणी, मैत्र यानी अनुराधा, अर्क यानी हस्त, कृषाणु अर्थात् कृतिका, और चान्द्र यानी मृगशिरा ये पाँच नक्त्र होते हैं।

शुक्लवार को अन्य यानी रेवती, मैत्र यानी अनुराधा, अन्ध यानी अधिनी, अदिति यानी पुनर्वसु, इज्य यानी पुष्य, धिण्य यानी नक्त्र होते हैं।

शुक्रवार को अन्त्य यानी रेवती, मैत्र यानी अनुराधा, अन्ध अर्थात् अधिनी, अदिति यानी पुनर्वसु, और श्रव यानी श्रवण नक्त्र होते हैं।

शनिवार को मृू यानी रेवती, मैत्र यानी अनुराधा, अन्ध अर्थात् अधिनी, अदिति यानी पुनर्वसु, और शनिवार यानी श्रवण नक्त्र होते हैं।

इसी प्रकार उत्पात, मृूत, काण एवं सिद्ध योग का विचार इस प्रकार किया गया है-

- द्रीशात्तोपाभा-सात्तीपीणाभाच्छ ब्राह्मात्यापद्यादर्थस्मादायुगः।

- स्पातुत्तो नूरु काणी च सिद्धिवरिकोको तत्त्वात् नामनुल्लम्।

इसका अर्थ करते हुए बतलाया गया है कि अर्क यानी सूर्यवार को विशाखा नक्त्र से चार - चार नक्त्र क्रमशः उपात, मृूत, काण एवं सिद्ध योग को देने वाले कहे गये हैं। यानी रविवार को विशाखा नक्त्र हो तो उपात योग, अनुराधा नक्त्र हो तो मृूत योग, ज्वेशा नक्त्र हो तो काण योग एवं मूल नक्त्र हो तो सिद्ध योग बनता है। ये अपने नाम के अनुसार व्यक्ति को फल प्रदान करते हैं।

सोमवार को तृतीया यानी पूर्वोषांक नक्त्र से चार - चार नक्त्र क्रमशः उपात, मृूत, काण एवं सिद्ध योग को देने वाले कहे गये हैं। यानी सोमवार को पूर्वोषांक नक्त्र हो तो उपात योग, उत्तराध्यय नक्त्र हो तो मृूत योग, अभिजित नक्त्र हो तो काण योग एवं श्रवण नक्त्र हो तो सिद्ध योग बनता है। ये अपने नाम के अनुसार व्यक्ति को फल प्रदान करते हैं।

मंगलवार को धनिष्ठ नक्त्र से चार - चार नक्त्र क्रमशः उपात, मृूत, काण एवं सिद्ध योग को देने वाले कहे गये हैं। यानी मंगलवार को धनिष्ठ नक्त्र हो तो उपात योग, शातिभा नक्त्र हो तो मृूतु
योग, पूर्वाभावस्पद नक्षत्र हो तो काण योग एवं उत्तराभावस्पद नक्षत्र हो तो सिद्ध योग बनता है। ये अपने नाम के अनुसार व्यक्ति को फल प्रदान करते हैं।

बुधवार को रेवती नक्षत्र से चार-चार नक्षत्र क्रमशः उत्पत, मृत्यु, काण एवं सिद्ध योग को देने वाले कहे गये हैं। यानी बुधवार को रेवती नक्षत्र हो तो उत्पत योग, अधिनी नक्षत्र हो तो मृत्यु योग, भरणी नक्षत्र हो तो काण योग एवं कृतिका नक्षत्र हो तो सिद्ध योग बनता है। ये अपने नाम के अनुसार व्यक्ति को फल प्रदान करते हैं।

शुक्रवार को पुष्य नक्षत्र से चार-चार नक्षत्र क्रमशः उत्पत, मृत्यु, काण एवं सिद्ध योग को देने वाले कहे गये हैं। यानी शुक्रवार को पुष्य नक्षत्र हो तो उत्पत योग, आष्ट्रेशा नक्षत्र हो तो मृत्यु योग, भरणी नक्षत्र हो तो काण योग एवं पुनर्वसु नक्षत्र हो तो सिद्ध योग बनता है। ये अपने नाम के अनुसार व्यक्ति को फल प्रदान करते हैं।

अध्याय प्रश्न - 5

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोंलिखत प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोंलिखत प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्न में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है।

प्रश्न 1- सर्वाधिक योग हेतु ग्रहवार को कौन सी नक्षत्र प्राप्त है?
   क- हस्त, ख- रोहिणी, ग- कृतिका, घ- मृगिशरा।

प्रश्न 2- सर्वाधिक योग हेतु सोमवार को कौन सी नक्षत्र प्राप्त है?
क- हस्त, ख- रोहिणी, ग- कृतिका, घ- मृगिशरा।
प्रश्न 3- सर्वरथिसिद्धि योग हेतु मंगलवार को कौन सी नक्षत्र प्राप्त है?
क- हस्त, ख- रोहिणी, ग- कृतिका, घ- मृगिशरा।
प्रश्न 4- सर्वरथिसिद्धि योग हेतु बुधवार को कौन सी नक्षत्र प्राप्त है?
क- हस्त, ख- रोहिणी, ग- कृतिका, घ- मृगिशरा।
प्रश्न 5- सर्वरथिसिद्धि योग हेतु गुरुवार को कौन सी नक्षत्र प्राप्त है?
क- रेवती, ख- रोहिणी, ग- कृतिका, घ- मृगिशरा।
प्रश्न 6- सर्वरथिसिद्धि योग हेतु शुक्रवार को कौन सी नक्षत्र प्राप्त है?
क- हस्त, ख- अनुराधा, ग- कृतिका, घ- मृगिशरा।
प्रश्न 7- सर्वरथिसिद्धि योग हेतु शनिवार को कौन सी नक्षत्र प्राप्त है?
क- हस्त, ख- रोहिणी, ग- स्वाती, घ- मृगिशरा।
प्रश्न 8- उत्पात योग हेतु रविवार को कौन सी नक्षत्र प्राप्त है?
क- हस्त, ख- रोहिणी, ग- कृतिका, घ- विशाखा।
प्रश्न 9- काण योग हेतु सोमवार को कौन सी नक्षत्र प्राप्त है?
क- हस्त, ख- रोहिणी, ग- कृतिका, घ- अभिजित।
प्रश्न 10- सिद्धि योग हेतु बुधवार को कौन सी नक्षत्र प्राप्त है?
क- हस्त, ख- रोहिणी, ग- कृतिका, घ- मृगिशरा।

2.4.2 शुभाशुभ योग विचार का परीक्षण-
अभी तक आपने विभिन्न प्रकार के शुभ एवं अशुभ विचार के नियमों को जाना। लेकिन इन नियमों के परीक्षण के ज्ञान के अभाव में शुभाशुभ का ज्ञान सम्बंधित प्रकार से नहीं हो पाता है, इसलिए यहाँ सन्दर्भित विषय पर परीक्षण का लेखन किया जा रहा है। आशा ही नहीं अपने विश्वास है कि यह ज्ञान आपके लिए गुणकारी सिद्ध होगा।


dूष योगों का परीक्षण

तिथियो मासशून्याच शून्यतलमानि यान्यपि।
मध्यदेशे विवज्ञानि न दूम्यानीतेरु च।
पंगंभरकाण्डलमानि मासशून्याच राशयः।
गौडमालवयोः त्याया अन्यदेशे न गहिताः।

इसका अर्थ हुआ कि मास शून्य तिथियां तथा शून्य लम्ब मध्यदेश में ही त्याज्य है, अन्य

dेशों में दृष्टि नहीं है। शून्य लम्ब का विचार 2.3.3 में पक्षाविद्योजितीय घटनाओं में किया गया है।
इसका विचार मध्य देश में ही करना चाहिये। इस सन्दर्भ में आचार्य मनु ने कहा है कि- हिमवत्
विन्ययोर्मेयं यत्राग्रिधिवनाधिपि। प्रत्येक प्रयागात्र्च मध्यदेशः प्रकरित।। अर्थात् हिमवत् और
विन्याचल के बीच सरस्वती नदी से पूर्व प्रयाग से पश्चिम, इसके भूभाग को मनु ने मध्य देश कहा है।
आधुनिक मध्यप्रदेश इससे भिन्न है। इसके साथ ही, पंच, अन्ध एवं काण लम और मास में गौड़
राशियां गोद एवं मालव देश में ही वर्तित है।
कुयोगासिदिवारोत्वासिदिविभोमथा भवारजः।
हुण-बंग-खशेव वजयिशिक्षान्तथातः॥
इसका अर्थ बतलाते हुये कहा गया है कि तिथि और बार से उत्पन्न कुयोग जो नन्दा भद्रा
निदिकाया...इस श्रोक में वर्णित जैसे मूत्यु योग है। षूवादि में वर्णित खकक्क योग, सूर्यश पञ्चामि
में वर्णित दध, विष और दुतावाणि योग, तिथि और नक्षत्र से उत्पन्न कुयोग जो तथा निन्दा शुभे सार्थ
में दिया गया है, नक्षत्र एवं बार से उत्पन्न कुयोग जो वाम्यन त्वापु आदि दध योग के बारे में दिया
गया है वह, यमयाणि योग, आनन्दादि योगों में कालदं, मृत्यु उपयाणि और तिथि, बार एवं नक्षत्र
तीनों से उत्पन्न कुयोग इत्यादि को हूण, बंग एवं खशदेशों में वर्तित किया गया है अन्य देशों में नहीं।
हूण जाति के लोग पूर्व काल में चीन की पूर्वी सीमा पर लूट पाते थे। बाद से प्रवास अवरोध
होने पर तुक्स्तान पर अधिकार कर लिया और वस्त्र नद के किनारे आ बसे। फिर कालिदास के
समय में हूण लोग वस्त्र नद के प्रति ही आकर थे। रघुवंश में कालिदास ने हूणों का वर्णन वस्त्र नद
के प्रति ही किया है। बाद में फारस के सम्राट से हार कर भारत में युद्ध और सीमान्त प्रदेश कपिस
गोधार पर अधिकार कर लिया। फिर मध्य देश की ओर चढ़ाई करने लगे और गुप्त सम्राटों से युद्ध
करते हुये हूणों के प्रति राजा तौरपाण के गुप्त साम्राज्य के पश्चिम भाग पर पूर्व अधिकार प्राप्त कर
लिया। इस प्रकार गांधार, काश्मीर, चंपारंथ, राजपुताना, मालवा, काश्तियासाव इनके शासन में आये।
इनको हूण देश कहा जाता है।
मृत्युक्रकचदधादीनन्दी शस्त्रेण शूभांजगुः।
कैविधामायंतकयो यत्रायामनु निन्दितान।।
चन्द्रमा के गुढ रहने पर मृत्यु, क्रकच एवं दध आदि योग शुभ हो जाते हैं। और किसी अन्य
आचार्य के मत में एक प्रहर के बाद ये योग शुभ्यदापक होते हैं। और किसी आचार्य के मत में सभी
कुयोग यात्रा में ही निदित है, अन्य शुभ काय्य में ही निदित है। अर्थात् आचार्य ने कहते हैं कि
अथोगो मूयोगोपी चेतु स्याततानीयोगं निहृत्य सिद्धत्वं तत्त्वत।
परं तत्सुभुधुः कुयोगाविदिचः दिनान्तद्वारं विनियूर्वच शःस्तमः॥
क्रकच आदि कुयोगों के रहते हुये उसी समय कोई अन्य सुयोग आ जाते हो तो वह सुयोग, कुयोग के
अर्थभ कल्पों की नट करके अपने सुयोग का ही शुभ फल देता है। अर्थात् आचार्य गण कहते हैं कि
जिस कार्य के लिए जैसी लम्बीदर्द कही गयी है वैसी लम्बी शुद्धि रहने पर कुड़ोग के दुष्कटन नष्ट हो जाते है। कुछ आचारियों के मत से दिन के आधे भाग की भूद्रा आदि कुड़ोगों का फल नष्ट हो जाता है। भूद्रा के संबंध में कहा गया है कि शुद्धिपक्ष में अष्टकों और पूर्णिमा के पूर्वीय में चौथ और एकादशी के उत्तरार्ध में भूद्रा रहती है। कृत्तिपक्ष में तृतीया और दशमी के अन्त्यार्ध में और सप्तमी तथा चतुर्दशी के पूर्वीय में भूद्रा रहती है।

भूद्रा का वर्णन करते हुए बतलाया गया है कि जब चंद्रमा कुम्भ, मीन, कर्क एवं सिंह राशि का हो, उसी समय भूद्रा भी आ जाय तो भूद्रा का निवास मृत्यु लोक में रहता है। मेष, वृष, मिथुन एवं वृश्चिक के चंद्रमा में भूद्रा का निवास स्वर्ग में रहता है। कन्या, मकर, तुला एवं धनु राशि के चंद्रमा में भूद्रा का निवास पाताल लोक में रहता है। भूद्रा का निवास जिस लोक में रहता है उस लोक में उसका अगुण मृत्व होता है।

बारे प्रोक्त: कालहोरासु तथ्य धिषण्ये प्रोक्त स्वामित्वथंशकेस्या।

कृत्तिपिक्षेऽदिद्ध विन्यथ्य कृषणेऽनैवो मैवोलख्यः परिघाशपि दण्डः।।

जिस दार में जो कार्य करना शुभ में कहा गया है, वह वार वर्तमान समय में न हो और कार्य करना अवश्यक हो तो वर्तमान निष्ठ वार में भी बिहित वार के काल होरा में उस कार्य को कर लेना चाहिये। जैसे किसी व्यक्ति ने शुक्रवार को ही श्रीमुख कराने का निष्ठ किया है। आज भौमवार है और किसी कार्य के निमित्त आज ही श्रीमुख करारा अवश्यक है तो मंगल वार को शुक्र की होरा में श्रीमुख करारा लेने में कोई दोष नही है।

इस प्रकार आपने शुभ अशुभ विचार के सन्दर्भ में विविध विषयों का अध्ययन किया। साथ ही विषम कालीन परिष्ठितियों में परिहार पूर्वक किस प्रकार कार्य साधन हो सकेगा इसका यथा शारीरिक प्रमाण आपने देखा। आशा है आप शुभ एवं अशुभ काल का सही तरीके से विवेचन कर पायेंगा। अब में इस पर आधारित कुछ प्रश्न आपको हल करने के लिए प्रदान कर रहा हूँ जो अधोलिखित है:-

अभ्यास प्रश्न - 6

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पी है। प्रश्नों के चयन के लिए आपको चुनाव करना होगा।

प्रश्न 1- जब चंद्रमा मीन को हो तो भूद्रा का निवास कहां पाया जाता है?
   क- स्वर्ग, ख- पाताल, ग- मृत्युरोक्त, घ- चंद्रतोक में।

प्रश्न 2- जब चंद्रमा वृश्चिक को हो तो भूद्रा का निवास कहां पाया जाता है?

उत्तरार्थां वृद्धि विश्वविद्यालय 115
क- स्वर्ग, ख- पाताल, ग- मृत्युलोक, घ- चन्द्रलोक में।
प्रश्न 3- जब चन्द्रमा मंकर का हो तो भूमा का निवास कहां पाया जाता है?
क- स्वर्ग, ख- पाताल, ग- मृत्युलोक, घ- चन्द्रलोक में।
प्रश्न 4- जब चन्द्रमा कुम्भ का हो तो भूमा का निवास कहां पाया जाता है?
क- स्वर्ग, ख- पाताल, ग- मृत्युलोक, घ- चन्द्रलोक में।
प्रश्न 5- जब चन्द्रमा मेष का हो तो भूमा का निवास कहां पाया जाता है?
क- स्वर्ग, ख- पाताल, ग- मृत्युलोक, घ- चन्द्रलोक में।
प्रश्न 6- जब चन्द्रमा कन्या का हो तो भूमा का निवास कहां पाया जाता है?
क- स्वर्ग, ख- पाताल, ग- मृत्युलोक, घ- चन्द्रलोक में।
प्रश्न 7- भूमा का फल उसके निवास से कहां पाया जाता है?
क- नीचे के लोक में, ख- उपर के लोक में, ग- उसी लोक में, घ- अनिश्चित लोक में।
प्रश्न 8- जब निषिद्ध वार में कार्य अति आवश्यक हो तो उचित काल होगा में वह कार्य-
क- किया जा सकता है, ख- नहीं किया जा सकता,
ग- कभी किया जा सकता है, घ- जैसी इच्छा।
प्रश्न 9- जब चन्द्रमा शुद्ध हो तो मृत्यु योग होता है?
क- शुभ, ख- अशुभ, ग- अनावश्यक, घ- आवश्यक।
प्रश्न 10- जब चन्द्रमा शुद्ध हो तो क्रकच योग होता है?
क- शुभ, ख- अशुभ, ग- अनावश्यक, घ- आवश्यक।

2.5 सारांश-
इस ईकाई में आपने शुभ एवं अशुभ योगों के बारे में ज्ञान प्राप्त कर रहे हैं। ज्ञान के बिना प्राप्त लोग कार्य का आरम्भ नहीं करते क्योंकि प्रत्येक कार्य का आरम्भ करने वाले यह भली भांति सोचता है कि कार्य निर्विभन्न पूर्वक सम्पन्न होना चाहिये। सम्पन्नता के साथ-साथ निश्चित उद्देश्य को भी प्राप्त करने में वह कार्य सफलता प्रदान करेगा। इस ईकाई में शुभ या अशुभ का विचार करने के लिये सबसे पहले तिथियों को केन्द्र विन्दु मानकर विचार किया गया। इसके अनुसार सम्पूर्ण तिथियों का पांच भागों में बांटा गया है जिन्हें नन्दा, भूमा, जया, रिता एवं पूणा के नाम से जाना जाता है। नन्दा में प्रतिपदा, षष्ठी एवं एकादशी तिथियां, भूमा में द्वितीया, सप्तमी एवं द्वादशी तिथियां, जया में तृतीया, अष्टमी एवं त्रयोदशी तिथियां, रिता में चतुर्थी, नवमी एवं चतुर्दशी तिथियां तथा पूर्णा में पंचमी, दशमी एवं अमावस्या या पूर्णिमा तिथियां आती है। प्रत्येक पक्ष में दे नन्दादि तिथियां तीन
बार आती है। उसी को व्यक्त करते हुये कहा गया है कि शुक्ल पक्ष में प्रथम नन्दा इत्यादि तिथियाँ अशुभ, द्वितीय नन्दा इत्यादि तिथियाँ मध्य एवं तृतीय नन्दा इत्यादि तिथियाँ गुभ होती है। उसी प्रकार कृष्ण पक्ष में प्रथम नन्दा इत्यादि तिथियाँ गुभ, द्वितीय नन्दा इत्यादि तिथियाँ मध्य एवं तृतीय नन्दा आदि तिथियाँ अशुभ होती है।

शुक्ल नन्दा को नन्दा तिथि यानी प्रतिपदा, षड़ी एवं एकादशी, बुधवार को भद्र यानी द्वितीया, समप्रणय एवं द्वादशी तिथि, भूमियार को जया यानी तृतीया, अष्टी एवं त्रयोदशी तिथि, शनिवार को रित्का यानी चतुर्थी, नवमी एवं चतुर्दशी तिथि तथा गुरुवार को पंचमी, दशमी, अमावास्या या पूर्णिमा तिथि सिद्ध योग प्रदान करते हैं तथा इसमें कार्य का आरम्भ कार्य को सिद्धि दिलाने वाला होता है।

उसमें बाद तिथियों और दिनों के संयोग से गुभ एवं अशुभ का विचार करते हुये कहा गया है कि रविवार को नन्दा यानी यात्रिपदा, षड़ी एवं एकादशी तिथियों हो, सोमवार को भद्र यानी द्वितीया, समप्रणय एवं द्वादशी तिथियों हो, भूमियार को जया यानी तृतीया, अष्टी एवं त्रयोदशी तिथियों हो, गुरुवार को रित्का यानी चतुर्थी, नवमी एवं चतुर्दशी तिथियों हो, शुक्रवार को भद्र यानी द्वितीया, समप्रणय एवं द्वादशी तिथियों हो और शनिवार को पूर्णिमा यानी पंचमी, दशमी एवं अमावास्या या पूर्णिमा तिथियों आते हैं तो तुम योग बन जाता है।

फिर तिथि, चाव, नश्नादि का विचार करते हुये कहा गया है कि पंचमी तिथि में रविवार एवं हस्त नक्षत्र हो, समप्रणय तिथि में भूमियार और अण्डनी नक्षत्र हो, षड़ी में सोमवार एवं मृगशिर्य नक्षत्र हो, अष्टी में बुधवार और अपूर्णा नक्षत्र हो, दशमी में शुक्रवार एवं रेवती नक्षत्र हो, नवमी में गुरुवार एवं पूर्ण नक्षत्र हो और एकादशी में शनिवार एवं रोहिणि नक्षत्र हो तो इन्हें सम्पन्न शुभ कार्यों में व्यापक देना चाहिये। इसी प्रकार परिलक्षित शिक्षण विचार योगों का स्वर्ण करते हुये भद्रा का विचार एवं परिहार भी प्रस्तुत किया गया जो तत्संबंधी ज्ञान के लिये आवश्यक ही नहीं अर्थित अविकार है।

2.6 पारिभाषिक शब्दावलियाँ-

विष- भद्रा, सित पक्ष- शुक्ल पक्ष, अपि पक्ष- कृष्ण पक्ष, शस्त-शुभ, सम- समान, मध्य- मध्यम, सर्व- सभी, पूवर्त- पहले को आधा भाग, उतरार्थ- बाद वाला आधा भाग, सितवार- शुक्रवार, ज्योति- बुधवार, अर्कवार- शनिवार, ग्यां- प्रभणी, त्यात्- चित्रा, वैद्य- शरीर, अर्यमा- उत्तरार्धाःपुनिः, अन्तर्य- रेवती, गतर्थ- गत नक्षत्र, ख- शून्य, र- दात, भूम तिथि- चतुर्ती, विशु- चन्द्रमा, क्ष- क्षण, विपुक्षम तिथि- अमावास्या, पल- मांस, कुर- क्षु, रच- प्रेम, विध्व- तिथि- त्रयोदशी तिथि, श्य- तिथि- दशमी तिथि, द्वि- तिथि- द्वितीया तिथि , धात्री फल- औंवला, अमा-
अमावास्या, आंद्र- सात, गो तिथि- नवमी तिथि, सूर्या तिथि- द्वादशी तिथि, ईश तिथि- एकदशी
तिथि, अंग तिथि- तृतीया तिथि, रस तिथि- षष्ठी तिथि, नन्दा तिथि- नवमी तिथि, वेद तिथि- 
चतुर्थी तिथि, अंग तिथि- षष्ठी तिथि, अंग तिथि- द्वितीया तिथि, गज तिथि- अष्टमी तिथि, अंग तिथि-
नवमी तिथि, शैलतिथि-सामी तिथि, उरा तिथि- अष्टमी तिथि, दिशा तिथि- नवमी तिथि, शिव 
तिथि- आाँटी तिथि, बनिक तिथि- कृष्णका, ब्राह्म- रोहिणी, कर नक्त्र- हस्त नक्त्र, अर्क- 
सूर्य, चन्द्र तिथि- प्रतिपदा तिथि, दूसर तिथि- द्वितीया तिथि, नभास मास- श्रवण मास, अनल तिथि- 
तृतीया तिथि, नेत्र तिथि- द्वितीया तिथि, माधव मास- वैशाख मास, शर तिथि- 
सूझी मास, नृति मास- चतुर्थी तिथि, नाग मास- 
अष्टमी तिथि, मधु मास- चैत नक्त्र, उज्जै नास- कार्तिक नास, शुक्र नास- ज्येष्ठ नास, तपस्या- फाल्गुन नास, तपस 
नास- माधव मास, अंग तिथि- चतुर्थी तिथि, नारा नक्त्र- आश्वेश नक्त्र, पितृभ- 
मधु नक्त्र, राक्षस 
नक्त्र- मृतु नक्त्र, कादा नक्त्र- रोहिणी, नभा नक्त्र- आधिनी, वायू नक्त्र- 
श्वाती नक्त्र, इजत नक्त्र- 
पूर्व नक्त्र, भग नक्त्र- पूर्वा फाल्गुनि, वासव नक्त्र- धनिःश्र, श्रुति नक्त्र- 
श्रवण नक्त्र, पाशी नक्त्र- 
शतभिषा, पौष नक्त्र- रेती नक्त्र, अजपाद नक्त्र- 
पूर्व भाद्र नक्त्र, द्रौह नक्त्र- 
विशाखा नक्त्र, सम नक्त्र- भरणी नक्त्र, इथंभ-ज्येष्ठा, घट लम- 
कुम्भ लम, झष लम- 
मीन लम, अति 
लम- वृशिक लम, मृगेन्द्र लम- 
सिंह लम, नक लम- 
मकर लम, अंगना लम- 
कन्या लम।

2.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर- 

पूर्व में दिये गये सभी अभ्यास प्रश्नों के उत्तर यहां दिये जा रहे हैं। आप अपने से उन प्रश्नों को हल कर ती रहे होंगे। अब आप इन उत्तरों से अपने उत्तरों का मिलान कर लीजिये। यदि गलत हो तो उसको सही करके पुनः तैयार कर लीजिये। इससे आप इस प्रकार के समस्त प्रश्नों का उत्तर सही तरीके से दे पायेंगे।

अभ्यास प्रश्नों के उत्तर- 1

1-क, 2-ख, 3-ग, 4-घ, 5-श, 6-स, 7-व, 8-ग, 9-घ, 10-ग।

अभ्यास प्रश्नों के उत्तर- 2

1-क, 2-ख, 3-ग, 4-घ, 5-श, 6-स, 7-व, 8-ग, 9-घ, 10-घ।

अभ्यास प्रश्नों के उत्तर- 3

1-क, 2-ख, 3-ग, 4-घ, 5-श, 6-स, 7-व, 8-घ, 9-घ, 10-घ।

अभ्यास प्रश्नों के उत्तर- 4

1-क, 2-ख, 3-ग, 4-घ, 5-श, 6-स, 7-व, 8-घ, 9-घ, 10-घ।
### 2.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची-

<table>
<thead>
<tr>
<th>संख्या</th>
<th>ग्रन्थ का नाम</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>1</td>
<td>मुहूर्त चिन्तामणि</td>
</tr>
<tr>
<td>2</td>
<td>विद्यापीठ पंचांग</td>
</tr>
<tr>
<td>3</td>
<td>फलदीपिका</td>
</tr>
<tr>
<td>4</td>
<td>अवकहड़ा चब्र</td>
</tr>
<tr>
<td>5</td>
<td>संस्कार-भारतकर : वीणा टीका सहित</td>
</tr>
<tr>
<td>6</td>
<td>मनोभिलक्षित नर्तनवर्णनम्: भारतीय तत्त्व एवं अनुवाद</td>
</tr>
<tr>
<td>7</td>
<td>संस्कार एवं शान्ति का रहस्य</td>
</tr>
</tbody>
</table>

### 2.9- सहायक उपयोगी पाठ्य सामग्री-

<table>
<thead>
<tr>
<th>संख्या</th>
<th>पाठ्य सामग्री</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>1</td>
<td>स्मृति कौस्तुभ</td>
</tr>
<tr>
<td>2</td>
<td>श्री काशी विद्वानाथ पंचांग</td>
</tr>
<tr>
<td>3</td>
<td>जातकालंकार</td>
</tr>
<tr>
<td>4</td>
<td>याज्ञवल्क्य स्मृति</td>
</tr>
<tr>
<td>5</td>
<td>संस्कार-विधानम्</td>
</tr>
</tbody>
</table>

### 2.10 निबंधात्मक प्रश्न-

<table>
<thead>
<tr>
<th>संख्या</th>
<th>प्रश्न</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>1</td>
<td>नन्दा आदि तिथियों की संज्ञा बतलाइये।</td>
</tr>
<tr>
<td>2</td>
<td>वारों से मृत योग का विचार बतलाइये।</td>
</tr>
<tr>
<td>3</td>
<td>दश योग का परिचय दीजिये।</td>
</tr>
<tr>
<td>4</td>
<td>जनक योग का परिचय दीजिये।</td>
</tr>
<tr>
<td>5</td>
<td>करणों का परिचय दीजिये।</td>
</tr>
<tr>
<td>6</td>
<td>विश योग का विचार लिखिये।</td>
</tr>
<tr>
<td>7</td>
<td>हुताशन योग लिखिये।</td>
</tr>
<tr>
<td>8</td>
<td>वमचण्ट योग को लिखिये।</td>
</tr>
<tr>
<td>9</td>
<td>संवार्थ सिद्ध योग को लिखिये।</td>
</tr>
</tbody>
</table>
इकाई – 3 जातकर्म, नामकरण एवं अन्नप्राशन मुहूर्त

इकाई संचरणा

3.1 प्रस्तावना

3.2 उद्देश्य

3.3 जातकर्म, नामकरण एवं अन्नप्राशन संस्कारों का परिचय एवं महत्व

3.3.1 जातकर्म संस्कार का परिचय एवं महत्व

3.3.2 नामकरण संस्कार का परिचय एवं महत्व

3.3.3 अन्नप्राशन संस्कार का परिचय एवं महत्व

3.4 जातकर्म, नामकरण एवं अन्नप्राशन का मुहूर्त

3.4.1 जातकर्म संस्कार का मुहूर्त विचार

3.4.2 नामकरण संस्कार का मुहूर्त विचार

3.4.3 अन्नप्राशन मुहूर्त का विचार

3.5 सारांश

3.6 पारिभाषिक शब्दावलियाँ

3.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

3.8 सन्दर्भ प्रणाली सूची

3.9 सहायक उपयोगी पाठ्यसामग्री

3.10 निबन्धात्मक प्रश्न
3.1 प्रस्तावना

इस इकाई में जातकमंत्र संस्कार, नामकरण संस्कार एवं अनन्यातिरि संस्कार संबंधी प्रविधियों का अध्ययन आप करने जा रहे हैं। इससे पूर्व की प्रविधियों का अध्ययन आपने कर लिया होगा। जन्मोत्सव संस्कारों में प्रथम संस्कार जातकमंत्र संस्कार। यह संस्कार जातक के उत्पन्न होने के बाद संपन्न किया जाता है। उसके बाद के संस्कारों में से नामकरण, अनन्यातिरि संस्कार कराये जाते हैं। इन संस्कारों का ज्ञान आपको इस इकाई के अध्ययन से हो जायेगा।

प्राचीन काल में ऋषियों एवं महर्षियों द्वारा एक ऐसा अनूठा प्रयोग किया गया जिसमें मानव को मानव बनाने की प्रक्रिया का चिन्तन एवं मनन किया गया। मानवता से व्यक्ति जब-जब जितना भी होता है समाज में अत्याचार, अनाचार, पापाचार आदि कृत्य बढ़ते हैं जिससे समाज एवं राज्य का हास होने लगता है। इसलिए आवश्यक है कि समाज में सांस्कृतिक लोगों की अभिवृद्धि हो। यह आवश्यक नहीं कि पद्ध निखिल सुशिक्षित व्यक्ति गति नहीं करेगा लेकिन यह जब हृद आवश्यक है कि एक सुसंस्कृत व्यक्ति असाधारण नहीं करेगा। आज लोगों का चारित्रिक पतन हो रहा है। इसके कारण नैतिकता निर्भर होती जा रही है। व्यक्ति के चारित्रिक बल के जीवन कर नैतिकता को विकसित करने का काम संस्कार करते हैं। इन संस्कारों की नीति का गन्धाधान से रखी जाती है का पर्यवेक्षण जातकमंत्रियां संस्कारों के प्रारम्भ हो जाता है इसलिए इनका ज्ञान अत्यन्त आवश्यक है।

इस इकाई के अध्ययन से आप जातकमंत्र संस्कार, नामकरण संस्कार एवं अनन्यातिरि संस्कार का सम्बंध ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे। इससे विषय के अन्दर संबंधी दोषों का निवारण हो सकेगा जिससे सामाजिक जन भी अपने कार्य क्षमता का भरपूर उपयोग कर समाज एवं राज्य के निर्माण में महत्वपूर्ण योगदान दे सकेंगे। आपके तत्संबंध ज्ञान के कारण ऋषियों एवं महर्षियों का यह ज्ञान संरक्षित एवं संरक्षित हो सकेगा। इसके अलावा आप अन्य योगदान दे सकेंगे, जैसे - कल्यणीति विधि के अनुपालन का सार्थक प्रयास करना, भारत वर्तमान के मार्ग की अभिवृद्धि में सहायक होना, सामाजिक सहभागिता का विकास, इस विषय का वर्तमान समस्याओं के समाधान हेतु उपयोगी बनाना आदि।

3.2 उद्देश्य

आप जातकमंत्र, नामकरण एवं अनन्यातिरि संस्कार के सम्पादन की आवश्यकता को समझ रहे होगे।

इसका उद्देश्य भी इस प्रकार आप जान सकते हैं।

1. सांस्कृतिक ज्ञान को लोकोपकारक बनाना।
2. जातकमंत्र संस्कार का शास्त्रीय विधि से प्रतिपादन।
3. नामकरण संस्कार का शास्त्रीय विधि से सम्पादना।
4. अन्नप्राशन संस्कार वर्णन सहित संस्कार सम्पादन में भ्रातियों को दूर करना।
5. प्राच्य विद्या की रक्षा करना।
6. लोगों के कार्यक्षमता का विकास करना।
7. समाज में व्यापार कुरौटियों को दूर करना।

3.3 जातकर्म, नामकरण एवं अन्नप्राशन संस्कारों का परिचय एवं महत्त्व

महर्षि आध्यात्मक के अनुसार विवाह, गर्भधारण, पुंसवन, सीमन्तोन्नयन, जातकर्म, नामकरण, चूड़ाकरण, अन्नप्राशन, उपनयन, समावतन एवं अन्येक्ष ये यथार्थ संस्कार होते हैं। वैवाहिक से अनुसार, गर्भधारण, तीसरे, विषयवत्त, जातकर्म, उपनयन, नामकरण, अन्नप्राशन, प्रवासन, पिण्डवर्धन, चौत, उपनयन, पारायण, व्रतबन्धावलय, उपाकर्म, उत्सर्जन, समावतन, पाणिग्रहण इन अशुभ संस्कारों को बतलाया है। पारस्कर ने विवाह, गर्भधारण, पुंसवन, सीमन्तोन्नयन, जातकर्म, नामकरण, निन्द्ररक्ष, अन्नप्राशन, चूड़ाकरण, उपनयन, केशाण्त, समावतन एवं अन्येक्ष इन तेरह संस्कारों की आयु की का व्यवस्था की है। वैवाहिक गृहसूचन में विवाह, गर्भधारण, सीमन्तोन्नयन, पुंसवन, जातकर्म, नामकरण, उपनिन्द्ररक्ष, अन्नप्राशन, चूड़ाकरण, कणिकावध, उपनयन, समावतन, पिण्डवर्धन इन तेरह संस्कारों का वर्णन किया है। इस प्रकार हम देखते हैं कि समस्त आचारों के अनुसार जातकर्म संस्कार, नामकरण संस्कार एवं अन्नप्राशन संस्कारों का वर्णन अवश्य किया गया है। यहाँ हम इन तीनों संस्कारों के पृथक-पृथक स्वरूपों की चर्चा करेंगे जिससे संबंधित विषय का ज्ञान प्राप्त हो सकेगा।

3.3.1 जातकर्म संस्कार का परिचय एवं महत्त्व-

जातकर्म संस्कार का प्रयोजन व्यक्त करते हुये महर्षि भूगु ने कहा है—
जातकर्मक्रियां कुर्यात् पुण्यम् श्रीविवृद्धये।
ग्रहदेश विनाशाय सृविकाः अशुभविचित्ते।
कुमार ग्रहनाशाय पुण्यस सत्वविवृद्धये॥

इसका अर्थ स्पष्ट करते हुये कहा गया है कि पुन की आयु एवं श्री की बुद्धि के लिये जातकर्म संस्कार की क्रिया करनी चाहिये। ग्रहों से संबंधी दोषों के विनाश के लिये, सृविका के अशुभ के विनाश हेतु...
तथा कुमार के ग्रह नाशा एवं पुंसत्व की वृद्धि के लिये जातकमं संस्कार करने चाहिए। सूतिका का मतलब सयः प्रसूता है।

इसमें बच्चे को पी एवं शहद चटाने की परम्परा अत्यन्त प्राचीन है। इसका विधान गृहसूत्रों में लिखा है। कारण बतलाते हैं स्वयं शान्ति का ह्रस्व नामक ग्रंथ में लिखा गया है कि जब बच्चा मां के पेट में रहता है उसकी आखें में एक प्रकार का मल पदार्थ जमा रहता है जिसे चिकित्सकीय भाषा में मैकोनियंम कहा गया है। डॉक्टर लोग इसे निकालने के लिये अपनी तेल का प्रयोग करते हैं लेकिन वह स्वाद में तीखा होने के कारण बच्चे द्वारा सुगमता से प्रभाव नहीं किया जाता। वहीं पर यह एवं मधु स्वाद में भी प्राण होता है। इसका सहिता के अनुसार यह एवं मधु में प्रभूत गुण बलताये गये हैं। इसे मधु के प्रयोग से मैकोनियंम भी वारूद आता है। यह एवं मधु का प्राण इसका स्वर्ण शलाका से करने का मतलब मिलता है आचार्य सुथु इसके साथ स्वर्ण भौम भी मिलाने की आदेश करते हैं। लिखित हैं- जातकमंचण कृत मधुसिप्तः अनुभवमात्र अंगुिल अनाम्यक्या लेहयेत्।

अथाते अनामिका अंगुिल से मधु, घृत एवं सुवण्डन बालक को चटाना चाहिए। सुवण्डन के अंग में विष ऐसे ही प्रभाव नहीं करता है जैसे पानी में रहते हैं। बच्चे की रक्षा हेतु उसका प्रथम आहार उसके मां के दूध में होता है इसलिये दूध पान करना अति आवश्यक बलताया गया है। चिकित्सकीय भाषा में मां के प्रथम दूध को कोलोस्ट्रस्म कहा जाता है।

यह बच्चे के प्राण में तो बहुत फायदा नहीं करता है लेकिन इसे पीकर तथा शहद चाटकर उसकी आवश्यकता साफ हो जाती है। इसमें आयुष्वद्धन कर्म भी किया जाता है। आयुष्वद्धन कर्म का मतलब है आयु को बढ़ाने वाला कर्म। इसमें जातक का पिता शिशु के नाम या दक्षिण कर्म के यहां इसका उच्चारण कर कि अभिन बनस्पतियों सब तुम्हें आयुष्वद्धन बनाएं।

इस अवसर पर जातक के जन्म के चार्दो दिन छह महोत्सव करने का विधान है। इसमें काफ़ी पीढ़ पर स्वन्दर एवं प्रायुक्त को स्थापित कर पूजन करने का विधान है। दो दिन तक सूतक लगाने के कारण पूजन का तीव्र निषेध मिलता है परंतु इस अवसर पर गाय का पी रही, सरस्ना, निन्द्रि पत्र इत्यादि से सूतिका के समीप धुप देने का विधान भी मिलता है। मार्गन्यूष्ण पूरे के अनुसार इस अवसर पर सूतिका के पर में अभिन, जल, यम, दीपक, शान, गधा और सरस्तों के वीज रखे जाते हैं। आपस्तम्भ गृहसूत्र में आता है कि इस अवसर पर माता के पर में तुलना का पौधा रखना चाहिए। शांखायन गृहसूत्र में आता है कि धान के कणों एवं सरस्तों के वीजों से आहुति देना चाहिए। ये समी पराय सूतिकामं में सम्पन्न किये जाने चाहिए। दो दिन माता एवं शिशु की प्राणियों के साथ ही इस अभिन को शान्त कर देना चाहिए तथा अगे के समस्त कर्म गृहसूत्र में सम्पन्न होना चाहिए। इसका मतलब सूतिका का अभिन है।

इस प्रकार आप जातकमं संस्कार के बारे में अच्छी तरह से जान गये होंगे। इस ज्ञान को और पुष्ट नहीं करना है।

उत्तराखण्ड मुंक्त विश्वविद्यालय

123
करने के लिये नीचे कुछ प्रश्न दिये जा रहे है जो इस प्रकार है:-

अभ्यास प्रश्न- 1

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अथोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अथोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है-

प्रश्न 1- जातक के जन्म दिन के अन्दर माता के पास रखी जाने वाली अभि का नाम है?
   क- सूतिकामनि, ख- गृहान्मि, ग- बेदामि, घ- शाखााँमि।

प्रश्न 2- आपत्तक गृह सूत में माता के पास कौन सा पौधा रखने का विधान पाया जाता है?
   क- कदमब, ख- तुर्खि, ग- शामी, घ- कमल।

प्रश्न 3- आयुष्यवर्धन कर्म का मतलब है?
   क- आयु को बहा ले जाने वाला, ख- आयु को हटाने वाला,
   ग- आयु को बढ़ाने वाला, घ- आयु को घटाने वाला।

प्रश्न 4- शिशु जन्म का सूतक कितने दिन तक रहता है?
   क- सात दिनों तक, ख- आठ दिनों तक, ग- नौ दिनों तक, घ- दस दिनों तक।

प्रश्न 5- जातकम कर्म संसार से क्या बढ़ता है?
   क- श्री, ख- चंद्र, ग- पिता, घ- माता।

प्रश्न 6- गर्भ में शिशु के आँखों में क्या जम जाता है?
   क- मैगनीशियम, ख- मैकोनियम, ग- मैगनीज, घ- कैल्शियम।

प्रश्न 7- सूतिका का मतलब है?
   क- गर्भसूती, ख- नवविवाहिता, ग- सर्था: प्रसूता, घ- बहुपुत्रवती।

प्रश्न 8- मधु एवं घृत किस अंगुलि से चटाने का विधान है?
   क- अगुंठे से, ख- तर्कभी से, ग- मधुमा से, घ- अनामिका से।

प्रश्न 9- मां के पहले दूध में क्या पाया जाता है?
   क- सोडियम, ख- पोटेशियम, ग- मैगनीशियम घ- कॉलोस्ट्रूम।

प्रश्न 10- आचार्य सुषुद्ध ने धी एवं मधु के साथ क्या खाने को कहा है?
   क- सुवर्ण भस्म, ख- लोह भस्म, ग- लवण भस्म, घ- चूण्डभस्म।

3.3.2 नामकरण संस्कार का परिचय एवं महत्व-

नामकरण संस्कार एक ऐसा संस्कार है जिसमें दिया गया नाम न केवल उस व्यक्ति के जीवन पर्याप्त
अभितु अनेक पीढ़ियों तक व्यास रहता है। इस उक्ति में उसका महत्त्व इस प्रकार दर्शाया गया है:-

नामाखिलाक्य व्यवहारहेतुः शुभावहं कर्मवृत्तिः।

नामैन्य कीर्ति लभते मनुष्यः ततः प्रतापस्त प्राच्यवेदन

यह उक्ति यह बतलाती है कि नाम अखिल व्यवहार का हेतु है। वह शुभावह कर्मों में भाय का हेतु है। नाम से ही मनुष्य कीर्ति प्राप्त करता है। अतः नामकरण अत्यन्त प्रशास्त कर्म है। नामकरण की परम्परा अत्यन्त प्राचीन परम्परा है। शास्त्रविवेचन के अनुसार दो नाम ग्रहण करने की परम्परा थी जिसमें एक नाम प्रचलित तथा दूसरा नाम मातृक तथा पैतृक होता था। पारस्करग्रहासूत्र में नाम का स्पष्ट संकेत मिलता है लेकिन इसमें नामाश्रयों को लेकर प्रतिबन्ध लगाया गया है। अचार्य वसिष्ठ नामाश्रय को दो अथवा चार में समिश्रित कर देते हैं। आश्वत्सक गृहासूत्र में नामकरण के सन्दर्भ में अक्षरों की संख्या का निर्धारण गुणों के आधार पर बतलाया गया है। जैसे प्रतिष्ठा एवं कीर्ति के लिये इच्छुक व्यक्ति के लिये दो अक्षरों का नाम, तथा अनुसार श्रेणी की कामना के लिये चार अक्षरों वाले नाम या बालकों के लिये सम अक्षरों वाले नाम रखने चाहिये। मनु के अनुसार ब्राह्मण का नाम मंगल सूचक, श्रीश्चिर के लिये बल सूचक, वैष्णव के लिये धन सूचक तथा अन्य के लिये जुगुप्त सूचक नाम रखने का निदेश गया है।

नाम को चार प्रकारों में बोंटा गया है:-

इनको 1-कुलदेवताभूत्त्त्त् नाम, 2-मास नाम, 3-नूदठठूअ् नाम, 4-वेष्यवहार नाम के रूप में जाना जाता है।

कुल देवता के अनुसार नाम रखना कुल देवता भूत्त्त्त् नाम कहलाता है। वीरिमूर्दा में कुल देवता का अर्थ कुल के पूज्य देवता या उनसे संबंधित देवता के रूप में किया है। दूसरा नाम मास देवता का है।

इसमें प्रत्येक महीने के देवता बतलाये गये हैं। उनके नाम पर जातक का नाम निर्धारित किया जाता है। गार्द्ध के अनुसार मार्गशीर्ष मास से क्रमशः इन नामों को जानना चाहिये। जैसे मार्गशीर्ष में मास क्रृष्ण दिवस दिया गया है। चौथे में मास नाम अनंत दिया गया है। माघ में मास नाम अक्षुण्ड दिया गया है।

वाल्यु में मास नाम चूरों दिया गया है। तृतीय में मास नाम वैकुण्ठ दिया गया है। वैशाख में मास नाम जनादेव दिया गया है। ज्येष्ठ में मास नाम उपेन्द्र दिया गया है। आषाढ़ में मास नाम वसंत दिया गया है। श्रावण में मास नाम वसंत दिया गया है। भाद्रपद में मास नाम हिरी दिया गया है। आषिन में मास नाम योगिणी दिया गया है। कार्तिक में मास नाम पुष्णदीक्षा दिया गया है।

तीसरा नाम नक्षत्र देवता का है। अभिनी नक्षत्र के देवता नाम आधिन है। भरणी नक्षत्र के देवता नाम यम है। कृतंका नक्षत्र के देवता नाम अभिन है। रोहिणी नक्षत्र के देवता नाम प्रजापति है। मुंगिरिया नक्षत्र के देवता नाम सोम है। आद्रि नक्षत्र के देवता नाम रूद्र है। पुर्णिमा नक्षत्र के देवता नाम अभिन है। पूर्ण नक्षत्र के देवता नाम वृहस्तिक है। आद्रि नक्षत्र के देवता नाम मण्डल है। मध्य नक्षत्र के देवता नाम पितृ है। पूर्व फाल्यु नक्षत्र के देवता नाम भग है। उत्तराफाल्यु नक्षत्र के देवता नाम अर्धम है।
हस्त नक्षत्र के देवता नाम सवितृ है। चित्रा नक्षत्र के देवता नाम त्वर्द्धा है। स्वामी नक्षत्र के देवता नाम वायु है। विशाखा नक्षत्र के देवता नाम इन्द्रामि है। अनुराधा नक्षत्र के देवता नाम मित्र है। ज्येष्ठा नक्षत्र के देवता नाम इन्द्र है। मूल नक्षत्र के देवता नाम निर्मिति है। पूर्वाष्ठा नक्षत्र के देवता नाम आप है।

उत्तराष्ठा नक्षत्र के देवता नाम विवेधेश है। श्रवण नक्षत्र के देवता नाम विष्णु है। धनिशा नक्षत्र के देवता नाम वसु है। रात्रि नक्षत्र के देवता नाम अहिंसाय है। इन नक्षत्रों के देवता नाम अद्वैत प्रथम है। उन्नताभिरथदा नक्षत्र के देवता नाम अधिवर्म्य है। रेवती नक्षत्र के देवता नाम धनान्त्रय है।

जो लोक परम्परा में रख दिया जाता है, उसे चौथा नाम विवहार नाम है। जो लोक परम्परा में रख दिया जाता है, उसे चौथा नाम विवहार नाम है।

अतः आप नामकरण संबंधक के बारे में जान गये होगे और इसके महत्व के बारे में भी अनुभव हो गया होगा। आपके ज्ञान को और प्रगाढ़ करने के लिए नीचे कुछ प्रश्न दिये जा रहे हैं जो इस प्रकार हैं।

अभ्यास प्रश्न - 2

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखत प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखत प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है।

1. अधिनी नक्षत्र के देवता का नाम है?
   - क- आदिन, ख- यम, ग- अनिन, घ- प्रजापति।

2. भरणी नक्षत्र के देवता का नाम है?
   - क- आदिन, ख- यम, ग- अनिन, घ- प्रजापति।

3. कृत्वा नक्षत्र के देवता का नाम है?
   - क- आदिन, ख- यम, ग- अनिन, घ- प्रजापति।

4. मृगिशरा नक्षत्र के देवता का नाम है?
   - क- सोम, ख- रुद्र, ग- अमिदित, घ- बुधपित।

5. मृगिशरा नक्षत्र के देवता का नाम है?
   - क- सोम, ख- रुद्र, ग- अमिदित, घ- बुधपित।

6. आद्वा नक्षत्र के देवता का नाम है?
   - क- सोम, ख- रुद्र, ग- अमिदित, घ- प्रजापति।

7. सुन्दर्वसु नक्षत्र के देवता का नाम है?
   - क- सोम, ख- रुद्र, ग- अमिदित, घ- प्रजापति।

8. सुन्दर्वसु नक्षत्र के देवता का नाम है?
   - क- सोम, ख- रुद्र, ग- अमिदित, घ- प्रजापति।

उद्देश्य नक्षत्र के देवता का नाम है?
   - क- सोम, ख- रुद्र, ग- अमिदित, घ- प्रजापति।
3.3.3 अनन्दाश्चाय उपदेश का परिचय एवं महत्त्व-

पारस्कर गृहध्वषेन में कहा गया है कि पद्मा माति अनन्दाश्चाय उपदेश का संस्कार शिशु के जन्म के छठवें महीने कराना चाहिए। अनन्दाश्चाय का सामान्य अर्थ है अन्न का प्राण यानी प्रीति।

प्रश्न 9- ब्रह्मचर्य सूत्र के कामना के लिये कितने अक्षरों बाल नाम रखना चाहिए?

क- दो, ख- चार, ग- छ, घ- सात

प्रश्न 10- शतपथ ग्राहण के अनुसार कितने नाम प्राप्त करने की परम्परा है?

क- आठ, ख- छ, ग- चार, घ- दो।

मुहूर्त चिन्तामणि के संस्कार प्रकरण के तेरहवें शृङ्खला के अनुसार लिखा गया है कि-

- माता चेतनमें मृत्युदश्यकारो बालो विनाशयं स्वयम्।

- हन्यात्स क्रमपूर्वार्थमेव भक्तिमात्रायामार्गाय दयानि।

- प्राणार्थ रत्नवेणि तिथिसयमि िवकारसंदेशविद्यामि।

अर्थात् जन्म के प्रथम मास में जन्म हो तो बालक का स्वयं विनाश होता है। दूसरे मास में दांत निकलने से उसके छोटे भाई का नाम रखा होता है। जन्म से तीसरे महीने में दांत जन्म हो तो बहन के लिये अमृतविशिष्ट होता है। जन्म से चौथे महीने में यदि दांत जन्म होता है तो माता का नाम होता है। जन्म से पांचवें महीने में यदि दांत जन्म होता है तो बड़े भाई का नाम होता है। छठवें महीने में दांत जन्म होने से बालक अवकाश सुखी रहता है। सातवें महीने में दांत जन्म होने से िपता से सुख धारण करता है। आठवें मास में दांत जन्म से पुष्कर की प्राप्ति होती है। नववें मास में दांत जन्म से प्रवृत्ति धारण होता है। दांत सहित शिशु का जन्म हो या िपता की प्रति में दांत जन्म हो तो माता, िपता, भाई एवं स्वयं
अपना नाश करता है, अशुभ फलल दंत निकलने पर शान्ति करानी चाहिये।

पारस्कर गृहस्त्व में आया है कि प्राणनाम सर्वां रसान, रसात्सर्वनभूतर उद्दृत्य अधीन प्राणिवेत। अर्थात् संस्कर प्राणन के बाद मधु आदि सभी रसों का भक्ष्य भोज्यादि सभी अन्नों को एक पात्र में उठाकर चटाना चाहिये। यहां मार्क्हन्देय ऋषि का वचन है कि-

- देवता पुरुस्तेश्य धातृसंगतं च.
- अलकात्म संस्करासन पत्रे सकरावन्ष्।

अर्थात् देवता के समक्ष अलकात्म बालक को माता की गांड में रखकर स्वर्ण पात्र में मधु, आज्ञा, धिति मिश्रित कर खीर सहित चटाना चाहिये।

इस प्रकार अन्नप्राणन संस्कर क्या है तथा उसका महत्व क्या है इसको आपने जाना। अब हम आपके बाण को और प्रोट करने के लिये कुछ प्रश्न प्रस्तुत करेंगे जिसके हल करने आपकी बुद्धि में विषय परिपक्व होगा। प्रश्न अधोलिखित है-

अध्याय प्रश्न- 3

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है-

प्रश्न 1- ज्ञान के प्रथम मास में दंत जनन का फल क्या होता है?
- क- स्वयं शिशु का विनाश ख- अनुज का विनाश, ग- भगिनी का विनाश, घ- माता का विनाश।

प्रश्न 2- ज्ञान के द्वितीय मास में दंत जनन का फल क्या होता है?
- क- स्वयं शिशु का विनाश ख- अनुज का विनाश, ग- भगिनी का विनाश, घ- माता का विनाश।

प्रश्न 3- ज्ञान के तृतीय मास में दंत जनन का फल क्या होता है?
- क- स्वयं शिशु का विनाश ख- अनुज का विनाश, ग- भगिनी का विनाश, घ- माता का विनाश।

प्रश्न 4- ज्ञान के चतुर्थ मास में दंत जनन का फल क्या होता है?
- क- स्वयं शिशु का विनाश ख- अनुज का विनाश, ग- भगिनी का विनाश, घ- माता का विनाश।

प्रश्न 5- ज्ञान के पंचम मास में दंत जनन का फल क्या होता है?
- क- अप्रज का विनाश ख- सुख की प्राप्ति, ग- पिता से सुख, घ- पुष्टि।

प्रश्न 6- ज्ञान के षष्ठ मास में दंत जनन का फल क्या होता है?
- क- अप्रज का विनाश ख- सुख की प्राप्ति, ग- पिता से सुख, घ- पुष्टि।

प्रश्न 7- ज्ञान के साम्राज मास में दंत जनन का फल क्या होता है?

उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय

उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय
क- अग्रज का विनाश ख- सुख की प्राप्ति , ग- पिता से सुख , घ- पुष्टि।
प्रश्न 8- जन्म के अष्टम मास में दूष जनन का फल क्या होता है?
क- अग्रज का विनाश ख- सुख की प्राप्ति , ग- पिता से सुख, घ- पुष्टि।
प्रश्न 9 - प्राप्ति-अन्त स्वरूप-स्वास्ति का क्या मतलब है?
क- संस्कर प्राप्ति के बाद, ख- संस्कर प्राप्ति से पहले , ग- अन्त प्राप्ति के बाद, घ- अन्त प्राप्ति से पहले।
प्रश्न 10- पारस्पर जी के अन्त प्राप्ति किस महीने में बताया है?
क- दूसरे महीने में, ख- तीसरे महीने में, ग- चौथे महीने में, घ- छठवे महीने में।

3.4 जातकम, नामकरण एवं अन्त प्राप्ति का मुहूर्त-

इससे पूर्व के प्रकार में आपने जातकम संस्कार, नामकरण संस्कार एवं अन्त प्राप्ति संस्कार का परिचय एवं महत्व जाना। इस प्रकार में जातकम संस्कार कब कराया जाना चाहिए यानी उसका मुहूर्त, नामकरण संस्कार का जातकम एवं अन्त प्राप्ति संस्कार का मुहूर्त आप जानेंगे। इसके ज्ञान से तस्विरी मुहूर्त के ज्ञान में आप सक्रिय हो जाएंगे।

3.4.1 जातकम संस्कार का मुहूर्त विचार- नामकरण एवं अन्त प्राप्ति का मुहूर्त जातकम संस्कार के मुहूर्त का प्रतिपादन करते हुये बतलाया गया है कि-

जतन्त्र्यथिदि शिष्यो विवेभे वर्त्त्ययर्त्तेन तीथिथियो शुभेनिः।
एकादशी द्वारवेके अभि यस्मे मूद्भुष्ठिङ्चरोधुर स्याः।

शिशु का जातकमदि संस्कार पवित्र तिथियों एवं रित्ता तिथियों को छोड़कर किया जाता है। चतुर्दशी, अष्टमी, अमावस्या, पूर्णिमा एवं रवि की संक्रांति की पवित्र तिथियों कहा गया है। रवि की संक्रांति का तार्थन है सूर्य का एक राशि से दूसरी राशि पर जाना। उस दिन जो तिथि हो उस तिथि की पवित्र तिथि की संजा दी गयी है। चतुर्दशी, नवमी एवं चतुर्दशी को रित्ता तिथि कहा जाता है। इन तिथियों को छोड़कर अन्य तिथियों में राइ प्रतिपदा, द्वितीया, तृतीया, पंचमी, षष्ठि, सप्तमी, अष्टमी, एकादशी, द्वादशी एवं त्रितीयशी तिथियों में जातकम संस्कार कराया जाना चाहिए। आगे शुभेनिः कहते हुये समझाया है कि शुभ दिवसों में शुभ दिवसों के सन्धिमें जब हम विचार करते है तो पाते हैं कि सोमवार, बुधवार, गुरुवार एवं शुक्लवार को शुभ दिन कहा गया है। जन्म दिन से यारहव या बारहव या जन्म दिन में मुहूर्त यानी मृगिशरा, रेवती, चित्रा एवं अनुराधा, धृष्टि मुहूर्त यानी तीन उत्तर एवं रोहिणि, किष्ण संक्रान्ति यानी नव, अधिनी एवं पुष्य एवं चर संक्रान्ति यानी चलाती, पुनर्वसु श्रवण , धनिष्ठा तथा शताभिषक इन सोलह दिनों में शिशु का जातकम संस्कार शुभ होता है।
आचार्य विष्णु जी इस विषय में कहते हैं कि-
यज्ञमुहूर्त जनिता: कुमारः| तरस्य विषयें खलु जातकम्।
सन्तर्प्य देवानुं सदिश्विनिजांशु मुख्यमोहर्मूतिनमयं।
अर्थात् जिस मूहूर्त में कुमार का जन्म हुआ है उसी मूहूर्त में जातकम् करना चाहिये। इसमें देवताओं का तर्पण करें, पिताओं एवं हिंदूओं का तर्पण सूचन, गी, भूमिक, तिल एवं कान्य वस्त्र से करें।
आचार्य विष्णु जी भी कहते हैं-
जातकम् ततः कुर्यातूं यथादितम्। यथाधितम् शब्द का अर्थ स्वाधृष्टम् में उक्त विधान के अनुसार करना चाहिये किया गया है। इसमें लिखा गया है कि पुनः का जन्म सुनकर पिता को सचेत स्नान करवाकर विधान करना चाहिये। धौतिष सागर में विष्णु जी लिखते हैं-
शुचा जातितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितितिति
कर्मकाण्ड एवं मुहूर्त ज्ञान

होता है। पाचन शक्ति, स्मृति, बुद्धि, प्रज्ञा, तेज, मधुर ध्वनि, वीर्य एवं आयु को बढ़ाने वाला है। मधु जड़ानि को प्रदीप करने वाला, रंग रूप सुधारने वाला, बलकारक, हल्का कोमल, शारीर को मोटा न होने देने वाला, जोड़ू को जोड़ने वाला, चावल को भरने वाला एवं पितादि दोषों को शान्त करने वाला होता है। सुद्धा का प्रयोग विष का विनाशक होता है।

इस प्रकार जातकम संस्कार के मुहूर्त प्रतिपदा विषय को आपने जाना। अब हम आपके ज्ञान को और प्रौढ़ करने के लिए कुछ प्रश्न प्रस्तुत करेंगे जिसके हल करने आपकी बुद्धि में विषय परिपक्व होगा। प्रश्न अधोलिखित है-

अभ्यास प्रश्न- 4

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है-

प्रश्न 1- इनमें रिक्त तिथि क्या है?
   क- प्रतिपदा, ख- द्वितीया, ग- तृतीया, घ- चतुर्थी।

प्रश्न 2- इनमें पर्व तिथि क्या है?
   क- प्रतिपदा, ख- द्वितीया, ग- अष्टमी, घ- चतुर्थी।

प्रश्न 3- इनमें कौन शुभ दिन नही है?
   क- सोमबार, ख- कुजबार, ग- गुरुवार, घ- शुक्रवार।

प्रश्न 4- इनमें धूप संज्ञ नक्षत्र क्या है?
   क- अधिनी, ख- भरणी, ग- कृतिका, घ- रोहिणी।

प्रश्न 5- इनमें छिप्र संज्ञ नक्षत्र क्या है?
   क- अधिनी, ख- भरणी, ग- कृतिका, घ- रोहिणी।

प्रश्न 6- इनमें मृदु संज्ञ नक्षत्र क्या है?
   क- अधिनी, ख- रेवती, ग- कृतिका, घ- रोहिणी।

प्रश्न 7- इनमें सचाल स्नान क्या है?
   क- वक्ष रहित, ख- वक्ष सहित, ग- यथेच्छ, घ- समुद्र स्नान।

प्रश्न 8- इनमें नाधिबर्द्ध क्या है?
   क- नालचछेदन, ख-नामि का बढ़ना, ग-नामि का मोटा होना, घ- नामि का छोटा होना।

प्रश्न 9- इनमें जन्म सूत्रक कितने दिन का होता है?

उंतराखण्ड मुक्ति विश्वविद्यालय 131
क- आठ दिन, ख- नौ दिन, ग- दस दिन, घ- म्यारह दिन।
प्रश्न 10- जातकर्म में पिता मधु एवं पी शिशु को कितने बार चटाता है?
क- तीन बार, ख- चार बार, ग- पांच बार, घ- छ बार।

3.4.2 नामकरण संस्कार का मूहत्तर विचार-

नामकरण संस्कार के मूहत्तर का प्रतिपादन करते हुये अनेक ऋषियों ने अपने - अपने तरीके से विचार किया है। मदन रतन में नारदीय वचन है कि-

सूतकान्ते नामकरण विधेय स्वकुलोचितम्। अर्थात् सूतक के अन्त हो जाने के बाद अपनी कुल परम्परा के अनुसार नामकरण संस्कार करना चाहिये। इस सन्दर्भ में हरिहराचार्य जी कहते है कि जितने दिन का सूतक हो उतना दिन बीत जाने पर ही नामकरण संस्कार होगा। इसका मतलब जननाशौच के बाद कोई मरणाशौच आ जाय तो उस अशौच के बीत जाने पर ही नामकरण किया जायेगा। सूत्रकारों का वचन है कि जन्म से म्यारहें दिन नामकरण करना चाहिये। गोर्क्लूगृहसूत्र कहता है कि-

dशरात्रे लघुः नामकरणमिति
अर्थात् दश रात्रि बीत जाने पर ही नामकरण करना चाहिये। मदन रतन में वर्णन मिलता है कि-

ब्राह्मणो दशमे वापिष्य जन्मतो पि त्रजोदशी।
षोडशे विशालो चैव द्रविकारणेतः क्रमातु।
अर्थात् नामकरण जन्म से दशवें, बारहवें, तेरहवें, सोलहवें, बीसवें या बाइसवें दिन किया जा सकता है। कारिका में कहा गया है कि-

एकादशे द्राढशे वा मासे पूर्वो अथवा परे।
अष्टादशो अहिनं तथा पदन्त्यवे मनीषिणं।
शत्तात्रे व्यतीते वा पूर्णं स्वतंसेर अथवा।।
अर्थात् म्यारहें, बारहवें दिन या महीना पूर्ण होने पर सोलहवें दिन अथवा एक वर्ष पर नामकरण करना जा सकता है। ज्योतिषविभाग में आचार्य गर्ग जी का मत है कि-

अमा संक्रान्ति विद्वार्दी प्राप्तकाले पि नाचरेतु।
अर्थात् अमावास्या, संक्रान्ति, भद्रा के होने पर काल प्राप्त होने पर भी नामकरण नहीं करना चाहिये।

सार संग्रह में वर्ण के अनुसार नामकरण करने का विचार दिया गया है।

एकादशो अनि विप्राणां क्षत्रियाणां त्रयोदशो।
वैशाखा यों पोद्धरो नाम मासाने शून्तजनमनं।।
कर्मकाण्ड एवं मुहूर्त ज्ञान

बाक्क – 101

अर्थात् यारहें दिन विश्री का, तेरहवें दिन क्षत्रियों का, सोलहवें दिन वैश्यों का, एवं एक मास में
tेद्विरो का नामकरण करना चाहिए। नामकरण के सन्दर्भ में महर्षि कर्षण का विचार निम्नलिखित है:-

उत्कलाप्रकारण्य द्विजानामविषया क्रिया।
अतीतेषु च कालेषु कर्म्यायशोत्तरवेणु।
सुभाष्ये अप्यसुरेषु वा नास्ते न च वायव्यः
शुभलम्बे शुभाशो च शुभे अन्धू शुभवासे।
चन्द्रताराबलोपेतो नायकोदये विज्ञ।
पूर्वनं श्लोकनक्षरचरणसंविधानं 

नाममंगलघोषेन रहस्य दक्षिणामृतो।

अर्थात् कालातीत हो जाने पर उत्तरायण में, गुरू, गुरुः के बाल, चृद्ध व अस्त न रहते हुये, शुभ लक्ष
एवं शुभ नवांश में, गुरु दिनों में, चन्द्र व तारा बलवान हो तब पूर्वनं में छिप्ना, चार, स्थिर एवं मूड
संज्ञान नक्षत्रों में नामकरण बालक के दक्षिण कान में करना चाहिए।

नामकरण संस्कार कब करना चाहिए इस सन्दर्भ में आचार्यों का कथन है कि:-

पूर्वानं श्रेष्ठ इत्युतको मध्यान्हो मध्यमः स्मृतः।
अपरानं च रात्रि च वर्जितनामकरणम्।।

पूर्वानं में नामकरण श्रेष्ठ होता है, मध्यान्ह में मध्यम होता है, अपरानं एवं रात्रि में नामकरण वर्जित
क्रिया है। दिन का विचार करने हुये बतलाया गया है कि रवि, भौम को छोड़कर धन, कर्म, सुत, भ्रातृ
एवं नवमथ चन्द्रमा हो तो शुभ होता है।

नामकरण संस्कार में जन्म के दश दिन बाद शिशु को सूक्तिका गृह से बाहर लाये। फिर तीन ब्राह्मणों
को भोजन कराने के बाद शिशु का नामकरण संस्कार करूँ। पारस्काराचार्य जी के अनुसार बच्चे का
नाम दो या चार अक्षरों का होना चाहिए। उसका पहला अक्षर घोष हो, मध्य में अन्तस्त वर्ण और
अन्त में दीर्घ या कृदंत या तद्वितान्त होना चाहिए। कन्या के नामकरण में विषम वर्ण तीन, पांच या
सात अक्षर होना चाहिए।

नामकरण संस्कार के मूलम का प्रतिपादन करने हुये बतलाया गया है कि:-

तत्ज्ञातकारम्यं दिशाशोविधिभ्यं पवित्रख्यारिकौन्तिथि गृहभूमिः।
एवदशरा द्वारशतांश अपि यहें मूद्यूवशिक्षकारोरेकु वर्षाः।
शिशु का नामकरण संस्कार पत्तियों एवं रितका तिथियों को छोड़कर किया जाता है। चतुर्दशी, अष्टमी,
आमावास्या, मूर्तिः एवं रवि की संक्रान्ति को पत्ति तिथियां कहा गया है। रवि की संक्रान्ति
का तात्पर्य है सूर्य का एक राशि से दूसरी राशि पर जाना। उस दिन जो तिथि हो उस तिथि को पत्ति

उत्तराखण्ड मुन्त विश्वविद्यालय
कर्मकाण्ड एवं मुहूर्त ज्ञान

तिथि की संज्ञा दी गयी है। चतुर्थी, नवमी एवं चतुर्दशी को रित्का तिथि कहा जाता है। इन तिथियों को
छोड़कर अन्य तिथियों में यानी प्रतिपदा, द्वितीया, तृतीया, पंचमी, चतुष्पती, सप्तमी, दसमी, एकादशी,
द्वादशी एवं त्रयोदशी तिथियों में नामकरण संस्कार कराया जाना चाहिये। आपे श्रुभेनिह कहते हुये समझाया है कि शुभ दिवसों में। शुभ दिवसों के सन्दर्भ में जब हम विचार करते है तो पाते हैं कि सोमवार, बुधवार, गुरुवार एवं शुक्रवार को दिन कहा गया है। जन्म दिन से खारखार या बारहवें यस यानी महीना, मनुसंता यानी मृगिश्न, रेवती, चित्रा एवं अनुराधा, धूप संज्य यानी तीनो उत्तर एवं रोहिणी, चित्रा संज्य हस्त, अधिनी एवं पुष्प एवं चर संज्य यानी स्वाती, पुरवर्दु , श्रवण, धनिया तथा शातिभिषा इन से समझाया है।

इस प्रकार नामकरण संस्कार के महत्त्व प्रतिपादन विषय को आपने जाना। अन्य आपके अपने अपने अपने ध्वेक करने के लिये कुछ प्रश्न प्रस्तुत करें जिसके तत्त्व करने आपकी बुद्धि में विषय परिपक्व होगा। प्रश्न अध्यापित है।

अध्यापित प्रश्न- 5

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अध्यापित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अध्यापित प्रश्न बहु विकल्पी है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका तत्त्व आपको करना है।

प्रश्न 1- इनमें नामकरण किस कर्ण में करना चाहिये?
क- दक्षिण कर्ण, ख- वाम कर्ण, ग- यथेर्च्च, घ- निष्कर्ष निम्न हनी।

प्रश्न 2- इनमें नामकरण कर्ण श्रेष्ठ है?
क- चुर्वान, ख- मध्यान, ग- अपरान, घ- सावान।

प्रश्न 3- इनमें नामकरण में पहला वर्ण क्या होना चाहिये है?
क- कृदन्त, ख- अन्तस्थ, ग- घोष, घ- तत्त्वान।

प्रश्न 4- इनमें नामकरण में मध्यवर्ण क्या होना चाहिये है?
क- कृदन्त, ख- अन्तस्थ, ग- घोष, घ- तत्त्वान।

प्रश्न 5- इनमें नामकरण में अन्त्य वर्ण क्या होना चाहिये है?
क- कृदन्त, ख- अन्तस्थ, ग- घोष, घ- कुछ भी।

प्रश्न 6- इनमें कन्या के नामकरण में कितने वर्ण होने चाहिये?
क- तीन, ख- चार, ग- छ, घ- आठ।

प्रश्न 7- इनमें पुष्कर नामकरण में कितने वर्ण होने चाहिये?
क- तीन, ख- चार, ग- पांच, घ- सात।

उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय

134
प्रश्न 8- इनमें नामकरण में चन्द्रमा कहां होना चाहिए?
क- दूसरे स्थान में, ख- छठे स्थान में, ग- बारहवें स्थान में , घ- आठवें स्थान में।

प्रश्न 9- क्या कन्या का नामकरण अमावास्या को कराना चाहिए?
क- हां, ख- नहीं, ग- पत्ता नहीं, घ- सम्पन्न है।

प्रश्न 10- इनमें संक्रान्ति का मतलब सूर्य का कहां जाना है?
क- दूसरे लाख में जाना, ख- दूसरे योग में जाना, ग- दूसरे नक्षत्र में जाना, घ- दूसरे राशि में जाना।

3.4.3 अन्नप्राशन मूहर्त का विचार-
अन्नप्राशन संस्कार के मूहर्त का विचार करते हुये मूहर्तचिन्तामणि में कहा गया है कि-

रिकन्तु रिका तिथि यानी चतुर्थी, नवमी एवं चतुर्दशी, नवं तिथि यानी प्रतिपदा, षष्ठी एवं एकादशी, आषाढ़ी, दर्षी यानी अमावास्या, हरि दिवस यानी व्रतदशी, तिथियों को चोड़कर, सौरी यानी शनिवार, भोमवार एवं चूरू स्थानों को छोड़कर, जनमंत्री एवं जनलग्न से आठवी राशि के लाख एवं नवमांश तथा मीन, मेष एवं वृषिक लाख को छोड़कर, छठवें महीने से सात मासों में एवं कन्याओं को विषम मासों में, स्थिर संज्ञन, मूदुसंज्ञन, लाख संज्ञन एवं चर संज्ञन इन सोलह नक्षत्रों में अन्नप्राशन उत्तम है। स्थिर संज्ञन नक्षत्र में तीनों उपर एवं रोहिनी लिया गया है। मूदुसंज्ञन नक्षत्रों में मृगशिरा, रेवती, चित्रा एवं अनुराधा को स्वीकार किया गया है। लाख संज्ञन में हस्त, अक्षी एवं पुष्य को स्वीकार किया गया है। चर संज्ञन में स्वताती, पुर्णवसू, श्रवण, धनिष्ठा, शतभीषण इन सोलह नक्षत्रों में अन्नप्राशन उत्तम माना गया है।

विशेष विचार करते हुये बतलाया गया है कि-

गर्भीधानन्दप्राश्यु न गुप्सित्योभोवायाधेन मौद्रयम्

जहातू कालस्य रोधादिगुद्मायमन याक्षममुनादिमाच्यो।

अर्थात् गर्भीधान से अन्नप्राशन का समय निश्चित होने के कारण गुह- शुक्र का अस्त, बाल्य और बुधत, सिंह के बुधप्रति, याम्यायन, न्युम्मास , अधिकास का ल्यान नहीं करना चाहिए।

मूहर्त के ग्रुः के अनुसार क्षीण चन्द्रमा, चूर्ण मूहर्त, गु, वृष, भौम, सूर्य, शनिः, शुक्र वे वर्ती अन्नप्राशनकालिक लाख से 9, 5, 12, 1, 4, 7, 10, 8 राशियों में से किसी स्थान में हो तो शिशु क्रम
से भिक्षा का अन खानेवाला, यज्ञ करने वाला, दीर्घजीवी, ज्ञानी, पितारोगी, कुठि, अन्न के कलेश युक्, वातरोगी एवं भोगों को भोगनेवाला होता है। अर्थांक उक्स ध्वनियों में से किसी स्थान में श्रीम चन्द्रमा हो तो भिक्षा मांगकर खाने वाला होता है। पूर्ण चन्द्रमा हो तो यज्ञ करने वाला होता है। इसी प्रकार से अन्य प्रहसों के लिये भी समझना चाहिये। लम्बशुद्धि का विचार करते हुए कहा गया है कि-

केन्द्रस्थितियों में हैं: खण्डेते लगे चिताबिपुलश्रृः ददति पापे।
लम्बशुद्धि शिक्षा शिखान प्रसादं मेघाकुबुलि जन्मसङ्करं केन्द्रमि।

अन्नप्राणिन लम्ब से केन्द्र तिरिक्ष कृतित परमां में शुभग्रह हो, ग्रीक, घन, स्वार ध्वनियों में पाप प्रह हो, ख यानी दशम स्थान शुद्ध हो, चन्द्रमा लम्ब में, अष्टम में, दश में न हो तो अन्नप्राणि करना चाहिये। कुछ आचार्य गण कहते हैं कि मेष यानी अनुभुधा, अम्बुप यानी शतिभिषा तथा अनल यानी स्वाती नक्षत्र अशुभ है।

आचार्य करणप के अनुसार अन्नप्राणिन संस्कार में इस प्रकार लगों का विचार किया है-

ि गो अम्बुम्भुदलाक्षांसिंहकर्नुयुगमः।

युमनाराजः चेते न निष्ण ज्वर वृक्षिकः।

अर्थांक वृं, धनु, कुम्भ, तुला, कृष्ण, सिंह, कर्क एवं मिथुन लम्ब अन्नप्राणिन हेतु शुभ माना गया है।

मेष, मीन एवं ज्वरक शीतक का निषेध किया गया है।

विशिष्ट जी ने कहा है-

युमेषु मासेषु च पश्चामासात् संबत्ते च निष्ण शिखनाम्।

अम्बुमासेषुं च कन्यकानां नवानसम्प्रदायमित्रमेतत्।

बालकों का चलने मास से युम्म मासों में तथा कन्याओं का पांचवे मास से विषम मासों में अन्नप्राणि करना चाहिये। गुलाङ्के च शुद्धेऽ सहते हुये नारद जी ने इसे शुद्ध पक्ष में एवं पूर्ण हे के समय करने का विचार बतलाया है। जन्म नक्षत्र के सन्दर्भ में नारद जी का चरण इस प्रकार है-

पहलकथनमीतलान्न प्राणिनो चोपनायेः।

शुभदं मेषु मासेषु च पश्चामासात् संबत्ते च निष्ण शुभम।

अर्थांक पहलबन्धन में, चील यानी मुण्डन में, अन्नप्राणि में एवं उपनयन में जन्म नक्षत्र शुभ मानी जाती है। अन्य कर्मों में अशुभ मानी गयी है।

अन्नप्राणि में विद्यमन्त्र को वर्जित किया गया है। दीपिका में कहा गया है कि-

कुन्डे विवाहां च त्रते पुंसवने तथा। नारद चायाखूड़यां विवाहमृः परित्यज्ञे।

आचार्य विशेष जी ने कहा है-

कुन्डे लम्ब नान्दे सूर्यं क्षीणचन्द्रे च भिक्षुः।

संत्रं पूर्णचन्द्रे स्वातुः कुजे पितरजाशिते।
वुधे ज्ञानी पृथ्वी भोगी दीर्घारूभोगवानसिताः।
बालोगी शानी राही केती चानविवाहित।

dd
Athithu jiss samay anuprashan kiyaa ja raha ho us samay lagan mein surbho to kushi, क्षीण चन्द्रमा
hoe to bhishkuk, purna chandra ho to shubh, mangal ho to pit rogi, बुध हो तो ज्ञानी, गुू्र हो तो भोगी,
shruk ho to diirgha tva evam bhavyaanaa atyasha shani, rahu ya keetu ho to vata rogi hota hai।

Is prakara anuprashan sanskara ke mohurth pratityadan vishaya ko aapan jana। Abh ham aapke jnaan
do or prao karne ke liye kuch prashan prastutas karenge jiske hal karne aapki budi में vishya paripakva
hotega। prash anuprlihit hai—

अभ्यास प्रश्न- 6

Upoorki vishaya ko phalkar aap anuprlihit prashn pe ek saakhte hain। Anuprlihit prashn bhad
vikalpne phaila। Pravech prashn mein diye gaye chaar vikalpy mein se koई एक ही सही है, जिसका चयन
aapko karha hai—

prash 1- anuprashan mein lagan mein surbh ho to fal kha hota hai?
  क- kushi, ख- bhishkuk, ग- shubh, घ- pit rogi।

prash 2- anuprashan mein ksn chandra ho to fal kha hota hai?
  क- kushi, ख- bhishkuk, ग- shubh, घ- pit rogi।

prash 3- anuprashan mein lagan mein purna chandra ho to fal kha hota hai?
  क- kushi, ख- bhishkuk, ग- shubh, घ- pit rogi।

prash 4- anuprashan mein lagan mein mangal ho to fal kha hota hai?
  क- kushi, ख- bhishkuk, ग- shubh, घ- pit rogi।

prash 5- anuprashan mein lagan mein buddh ho to fal kha hota hai?
  क- jnaani, ख- bhishkuk, ग- shubh, घ- pit rogi।

prash 6- anuprashan mein lagan mein gurho to fal kha hota hai?
  क- kushi, ख- bhogni, ग- shubh, घ- pit rogi।

prash 7- maitre naktar kha hai?
  क- amrutadhya, ख- santitha, ग- svastiki, घ- visaraaka।

prash 8- amruth naktar kha hai?
  क- amrutadhya, ख- santitha, ग- svastiki, घ- visaraaka।

prash 9- anil naktar kha hai?

उत्तराखंड मुक्ति विश्वविद्यालय
क- अनुराधा, ख- शतिभषा, ग- स्वाती, घ- बिराखा।
प्रश्न 10- द्वारा नक्शा क्या है?
क- अनुराधा, ख- शतिभषा, ग- स्वाती, घ- बिराखा।

3.5 सारांश-

इस ईकाई में आपने जातकम, नामकरण एवं अनाप्राशन के मुहूर्तों के बारे में ज्ञान प्राप्त किया। इस ज्ञान के बिना लोग इन संस्कारों का सम्पादन नहीं कर सकते। क्योंकि प्रत्येक कार्य का आयोजन करने वाला व्यक्ति यह भली भति समझता है कि कार्य निर्माणमा पूर्व तपस्या आवश्यक होती है। सम्पन्नता के साथ - साथ निषिद्ध उद्देश्य को भी प्राप्त करने में वह कार्य सफलता प्रदान करते हैं। और वह तबीय सम्पन्न हो सकता जब उचित मुहूर्त से संस्कार किया जाय।

शिशु का जातकमादिसंस्कार पर्व तिथियों एवं रितका तिथियों को छोड़कर किया जाता है। दुर्वसु, अष्टमी, आमवाया, पूर्णिमा एवं रवि की संधानित को पर्व तिथियों कहा गया है। रवि की संधानित का तात्पर्य है सूर्य का एक राशि से दूसरी राशि पर जाना। उस दिन जो तिथि हो उस तिथि को पर्व तिथि की संज्ञा दी गयी है। चतुर्दशी, नवमी एवं चतुर्दशी को रितका तिथि कहा जाता है। इन तिथियों को छोड़कर अन्य तिथियों में यानी त्रितीया, द्वितीया, तृतीया, पंचमी, षष्ठी, साली, शशी, एकादशी, द्वादशी एवं तिरुदशीं तिथियों में जातकम संस्कार कराया जाना चाहिए। इस तथाकथा के अनुसार नामकरण संस्कार का प्रतिपादन करने बाद अनेक श्रेणियों ने अपने - अपने तरीके से विचार किया है।

नामकरण संस्कार के मुहूर्त का प्रतिपादन करने हुये अनेक श्रेणियों ने अपने - अपने तरीके से विचार किया है। मदन रत्न में नारदीय बचन है कि-

सूतकानाते नामकरण विनियम स्वजस्तजितम्। अथर्त् सूतक के अन्त हो जाने के बाद अथवा कुल परम्परा के अनुसार नामकरण संस्कार करना चाहिए। इस संदर्भ में हरिहराचार्य जी कहते हैं कि जितने दिन का सूतक हो उतना दिन बीत जाने पर ही नामकरण संस्कार होगा। इसका मतलब जननाशौच के बाद कोई मरणाशौच आ जाय तो उस अर्थत्व के बीत जाने पर ही नामकरण किया जायेगा। सूतकारों का वचन है कि जनम से यारहें दिन नामकरण करना चाहिए। गोभिलसूत्र कहता है कि-

उत्तराखण्ड मुक्ति विश्वविद्यालय 138
दशराते व्युष्ट नामकरणामिति
अनन्त्राशासन संस्कार के मूर्त्त का विचार करते हीवे मूहत्तिचितामणिमें कहा गया है कि-

रिकानवाददेशी हरिदिवससमथों सीरिभीमार्कवानानु,
लतमं जनमाहमाहार्वं मीनमेशालितकं च।
हत्वा षड्यासस्म मास्यथ हि मूगट्र्टशी पंचमादोजमासे।

नक्षत्र: स्वाति, श्रीवार:
समुदल्पुरोङ्गे अर्थात् नित्य तिथि यानी चतुर्थी, नवमी एवं चतुर्दशी, नन्दा तिथि यानी प्रतिपद, चढ़ी एवं एकादशी, अष्ट्री, दशवार्णी अमावास्या, हरि दिवस यानी द्रादशी, तिथियों को छोड़कर, सीरि यानी शनिवार, भीमधार एवं सूर्यावर को छोड़कर, जनमाशी एवं जनमंगल से आठत्री राशि के लाम एवं नवमाशा तथा मीन, मेष एवं वृश्चिक लाम को छोड़कर, छठवे महीने से सम मासों में एवं कन्याओं को विषम मासों में, स्त्रिय सन्तर, मृदुसंतर, लघुसंतर एवं चर संतर इन सोलह नक्षत्रों में अनन्त्राशासन उत्तम है।

स्त्रिय सन्तर नक्षत्र में तीनो उत्तरा एवं रोहिणी लिया गया है। मृदुसंतर नक्षत्रों में मृगशिरा, रेवती, चिथा एवं अनुरा को स्वीकार किया गया है। लघुसंतर में हस्त, अभिन्दी एवं पुष्य को स्वीकार किया गया है। चर संतर में स्वाती, पुनर्वसु, श्रवण, धनिशा, शतिभिषा इन सोलह नक्षत्रों में अनन्त्राशासन उत्तम माना गया है।

3.6 पारिभाषिक शब्दावलियाँ-

ख- द्रास, हरिदिवस- द्रादशी, श्रीर-शनि, जवार- बुधवार, अर्कवार- शनिवार, अल- वृश्चिक, विशुतिथि- चन्द्रदशी तिथि, दश तिथि- दशमी तिथि, वद्री तिथि- द्वितीय तिथि , धात्र फल- ऑवला, आगा- अमावास्या, नाग तिथि- अष्ट्री तिथि, मधु मास- चेत्र मास, उज्ज्वला मास- वालिक मास, शुक्र मास- ज्येष्ठ मास, तपस्या- कलरुण मास, तपस मास- माघ मास, अग्नि तिथि- चतुर्थी तिथि, तारा नक्षत्र- आधुरा नक्षत्र, मित्रह- गंध नक्षत्र, राक्षस नक्षत्र- मूल नक्षत्र, कुदा नक्षत्र- रोहिणी, सभ नक्षत्र- अभिनी, वायू नक्षत्र- स्वाती नक्षत्र, इच नक्षत्र- पुष्य नक्षत्र, भग नक्षत्र- पूर्वार्ध वालिक, वासव नक्षत्र- धनिशा, शृगुत नक्षत्र- धर्वण नक्षत्र, पारी नक्षत्र- शतिभिषा, पीण नक्षत्र- रेवती नक्षत्र, अधिपाद नक्षत्र- पूर्वार्ध भागश्रीरा नक्षत्र, दीर्घ नक्षत्र- विशईक नक्षत्र, चम नक्षत्र- चरणी नक्षत्र, इदुभ-ज्येष्ठा, घट लांक- कुम्भ लांक, झघ लांक- मीन लांक, अलि लांक- वृश्चिक लांक, मृगशिरा लांक- सिंह लांक, नक्ष लांक- नक्षलांक, ओंगना लांक- कन्या लांक, कवि- गुंत, इन्द्र- मीनार, रेवती, लांक स्थान-म्यारां म्यार्वें, रेवती, स्थान-रातु स्थान, मैत्र नक्षत्र- अनुरा, अमावास्य नक्षत्र- शतिभिषा, अनिल नक्षत्र- स्वाती, अनल नक्षत्र- कृतक, उड- नक्षत्र, यस- दिन, ईश- स्मार्प, वर्न- अनिल, की- ब्रह्मा,
कर्मकाण्ड एवं मुहूर्त ज्ञान

3.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

पूर्व में दिये गये सभी अभ्यास प्रश्नों के उत्तर यहां दिये जा रहे हैं। आप अपने से उन प्रश्नों का हल कर लिये होंगे। अब आप इन उत्तरों से अपने उत्तरों का मिलान कर लीजिये। यदि गलत हो तो उसको सही करके पुनः तैयार कर लीजिये। इससे आप इस प्रकार के समस्त प्रश्नों का उत्तर सही तरीके से दे पायेंगे।

अभ्यास प्रश्नों के उत्तर- 1
1-क, 2-ख, 3-ग, 4-घ, 5-क, 6-ख, 7-ग, 8-घ, 9-घ, 10-क।

अभ्यास प्रश्नों के उत्तर- 2
1-क, 2-ख, 3-ग, 4-घ, 5-क, 6-ख, 7-ग, 8-घ, 9-ख, 10-य।

अभ्यास प्रश्नों के उत्तर- 3
1-क, 2-ख, 3-ग, 4-घ, 5-क, 6-ख, 7-ग, 8-घ, 9-क, 10-घ।

अभ्यास प्रश्नों के उत्तर- 4
1-घ, 2-ग, 3-ख, 4-घ, 5-क, 6-ख, 7-ख, 8-क, 9-घ, 10-ख।

अभ्यास प्रश्नों के उत्तर- 5
1-क, 2-क, 3-ग, 4-घ, 5-क, 6-क, 7-घ, 8-क, 9-ख, 10-घ।

अभ्यास प्रश्नों के उत्तर- 6
1-क, 2-ख, 3-ग, 4-घ, 5-क, 6-ख, 7-क, 8-ख, 9-घ, 10-घ।

3.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची-

1-मुहूर्त चिन्तामणि।
2-भारतीय कुण्डली विज्ञान भग-1
3-शीष्णवधा
4-शान्ति- विघ्नमम।
5-आदिक सूत्रावलि।
6-उत्सर्ग मयूर।
7-विद्यापीठ पंचांग।

### 3.9- सहायक उपयोगी पाठ्य सामग्री-

1- स्मृति कोषतु:।
2- श्री काशी विद्वत्नाथ पंचांग।
3- जातकालंकार।
4- याज्ञवल्क्य स्मृति:।
5- संस्कार- विधानम्।

### 3.10 निबंधार्टमक प्रश्न-

1-जातकर्म संस्कार का परिचय बतलाइये।
2- नामकरण संस्कार का परिचय बतलाइये।
3- अनन्तरण संस्कार का परिचय दीजिये।
4- जातकर्म संस्कार का मुहूर्त दीजिये।
5- नामकरण संस्कार का मुहूर्त दीजिये।
6- अनन्तरण संस्कार का मुहूर्त लिखिये।
7- जातकर्म संस्कार का महत्व लिखिये।
8- नामकरण संस्कार का महत्व लिखिये।
9- अनन्तरण संस्कार का महत्व लिखिये।
10- अन्न प्रश्न संस्कार हेतु लम्बो का विचार का वर्णन कीजिये।
इकाई- 4 कर्णवेध, चूड़ाकरण, उपनयन एवं दीक्षा मुहूर्तें

इकाई की रूपरेखा

4.1 प्रस्तावना
4.2 उद्देश्य
4.3 कर्णवेध, चूड़ाकरण, उपनयन एवं दीक्षा मुहूर्त का परिचय एवं महत्व-
   4.3.1 कर्णवेध संस्कार का परिचय एवं महत्व
   4.3.2 चूड़ाकरण संस्कार का परिचय एवं महत्व
   4.3.3 उपनयन संस्कार का परिचय एवं महत्व
4.4 कर्णवेध, चूड़ाकरण, उपनयन एवं दीक्षा मुहूर्ते
   4.4.1 कर्णवेध संस्कार का मुहूर्त चिह्न
   4.4.2 चूड़ाकरण संस्कार का मुहूर्त
   4.4.3 उपनयन एवं दीक्षा मुहूर्त
4.5 सारांश
4.6 पारिभाषिक शब्दावलियों
4.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
4.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
4.9 सहायक उपयोगी पाठ्यसामग्री
4.10 निबन्धात्मक प्रश्न
4.1 प्रस्तावना

इस इकाई में कर्णवेध, चूड़ाकरण, उपनयन एवं दीक्षा मुहूर्त संबंधी प्रविष्टियों का अध्ययन आप करने जा रहे हैं। इससे पूर्व की प्रविष्टियों का अध्ययन आपने कर लिया होगा। मनोत्तर संस्कारों में कर्णवेध, चूड़ाकरण, उपनयन एवं दीक्षा मुहूर्त इत्यादि संस्कार महत्वपूर्ण संस्कार हैं। ये संस्कार जातक के उत्पन्न होने के बाद संपन्न किया जाता है। इन संस्कारों का ज्ञान आपको इस इकाई के अध्ययन से हो जायेगा।

प्राचीन काल में कृषि एवं महापुरुषों द्वारा यह ऐसा अनूठा प्रयोग किया गया जिसमें मानव को मानव बनाने की प्रक्रिया का चित्रण एवं मनन किया गया। मानवता से व्यक्ति जब-जब जितना बदल होता है तभी एवं राष्ट्र का हास होने लगता है। इसलिये आवश्यक है कि समाज में सांस्कारिक लोगों की अभिवृद्धि हो। यह आवश्यक नहीं कि पढ़ा लिखा सूचित व्यक्ति गतन नहीं करेगा लेकिन यह जगत आवश्यक है कि एक सुसंस्कारित व्यक्ति अमानस्करण नहीं करेगा। आज लोगों का चारित्रिक पतन हो रहा है। इसके कारण नैतिकता निर्बल होती जा रही है। व्यक्ति के चारित्रिक बल को जीवन तरिका को विकसित करने का काम संस्कार करते हैं। इन संस्कारों की नींव जो गर्भाधान से रखी जाती है का पत्तन व्यक्तिवादित संस्कारों से हो जाता है इसलिये इनका ज्ञान आवश्यक है।

इस इकाई के अध्ययन से आप कर्णवेध, चूड़ाकरण, उपनयन एवं दीक्षा मुहूर्त का सम्पूर्ण ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे। इससे विषय के अन्तर्गत संबंधी काल का अन्तर्क्षण हो सकेगा जिससे सामान्य जन भी अपने कार्य क्षमता की भरपूर उपयोग कर समाज एवं राष्ट्र के निर्माण में महत्त्वपूर्ण हो जाएंगे। आपके तत्संबंधी ज्ञान के कारण कृषि एवं महापुरुषों का यह ज्ञान संरक्षित एवं संरक्षित हो सकेगा।

इसके अलावा आप अन्य योगदान दें सकें, जैसे - कल्याणी विविध के अनुपालन का सार्थक प्रयास करना, भारत वर्ष के गौरव की अभिवृद्धि में सहयोग होना, सामाजिक सहभागिता का विकास, इस विषय को वर्तमान समस्याओं के समाधान हेतु उपयोगी बनाना आदि।

4.2 उद्देश्य-

आप कर्णवेध, चूड़ाकरण, उपनयन एवं दीक्षा मुहूर्त के सम्पादन की आवश्यकता को समझ रहे होगें। इसका उद्देश्य भी इस प्रकार आप ज्ञान सकते हैं।
- सांस्कारिक ज्ञान को लोकोपकारक बनाना।
- कर्णवेध संस्कार का राष्ट्रीय विचार से प्रतिपादन।
4.3 कर्णवेध, चूड़ाकरण, उपनयन एवं दीक्षा मुहूर्त का परिचय एवं महत्व-

महर्षि पारस्क ने विवाह, गर्भधारण, पुंसवन, सीमन्तोनयन, जातकर्म, नामकरण, निक्रमण, अन्नप्राण, चूड़ाकर्म, उपनयन, केशान्त, समावतन एवं अन्तर्याह से तेरह संस्कारों की वात स्नीकार की है। बौधायन गृहस्त्त्व में विवाह, गर्भधारण, सीमन्तोनयन, पुंसवन, जातकर्म, नामकरण, उपनिक्रमण, अन्नप्राण, चूड़ाकरण, कर्णवेध, उपनयन, समावतन, पितृमेध इस तेरह संस्कारों का वर्णन किया है। इसी प्रकार अन्य आचार्यों ने अपने-अपने मतों के अनुसार संस्कार के वर्णन किया है। प्रथेक आचार्य का विचार एवं उसके प्रदत्त ज्ञान हम सभी के लिये अनुक्रमणीय है। इसमें हम कर्णवेध, चूड़ाकरण, उपनयन एवं दीक्षा मुहूर्त के पृथक-पृथक स्वरूपों का चर्चा करेंगे जिससे संबंधित विषय का ज्ञान प्राप्त हो सकेगा।

4.3.1 कर्णवेध संस्कार का परिचय एवं महत्व-

कर्णवेध शाब्द के शब्दको अर्थ को समझने का जब हम प्रयास करते हैं तो उसे दो भागों में बांटते हैं। पहला कर्ण एवं दूसरा बेध। कर्ण का अर्थ होता है कान, बेध शाब्द का अर्थ है बेधन करना। कान के बेधन करने के कारणों में बालकों को कर्णवेध संस्कार का नाम दिया गया है। अब यहाँ प्रश्न उठता है कि कान का बेधन तथा बेधन करने का कारण क्या है? क्या उससे कुछ लाभ होता है?

इस प्रश्न के उत्तर में आचार्य सुधरता का एक बचन मिलता है, जिसका वर्णन यहाँ उचित प्रतीत होता है। आचार्य सुधरता कहते हैं कि आभूषण निमित्त बालस्य कर्णों बिध्यते अर्थात् रक्त एवं आभूषण के निमित्त शिशु का कर्णवेध करने चाहिए। कर्णवेध के कारणों में प्रथम कारण रक्त एवं द्वितीय कारण आभूषण बतलाया गया है। रक्त के आशय के सन्दर्भ को और उस प्राप्त करने हेतु आचार्य जी लिखते हैं—

शांखोपिर च कर्णानि त्यक्तव यथे नसेन सेववीयम्।

व्यवस्थापा वा इशो विशेषत्व आन्त्रवृद्धिकृतयाः।।

अर्थात् कर्णानि म यानयाने वाली शिशृंगों को वेधन करने से आभूषण वृद्धि पर नियन्त्रण रक्त जा सकता है। अगर आंसू यह वृद्धि हो रही हो तो उसके नियमन हेतु भी शिशृंग भेदन का कार्य उत्तम होगा। दूसरा कारण बताते हुए स्पष्ट किया गया है कि आभूषण धारण करने के निमित्त भी कर्ण वेध
उत्तम माना गया है। कारण देते हुये कहा गया है कि उससे सीभाय की वृद्धि होती है। सीभाय से ताल्यय पति सूख एवं पुनर्सुख से है।
कर्णवेध के विधान का चरण करते हुये रत्नमला नामक ग्रन्थ में लिखा गया है कि- 

शिशोरजातदत्त योजनां भवेशसंगसपिणः।
सुताया वेधयेत् करणा सूवधा द्रष्टुसूवधा॥

अर्थात् अजाज दत्त शिशू का जो माता के गोद में रहता है विशेष कर कुन्या का सूझ से दो सूख के बराबर का छिद्र करना चाहिये। उस ने सुता यानी कुन्या के लिये वचन मिलता है फर्मु गृह सूजों में इसका भेद नहीं किया गया है। ऐसा लगता है वहां सभी के लिये अनिवार्य किया गया है। कर्णरन्था के विषय में आचार्य देवल का कथन है कि कर्ण रन्थ इतना होना चाहिये कि सूर्य की चाया उसके छिद्र में प्रवेश न करे।

कर्णन-ध्रे रईशचाया न व्रोधग्राजनम्॥
तं दृष्टा बिलयं याति पुर्ण विपुलवताना॥
आचार्य शालक्वाणे ने भी कर्णवेध के सन्दर्भ में एक नवीन जानकारी देते हुये कहा है कि-

अविद्यकण्य-तुतुं लम्भकण्यस्वीव च।
दधकण्य-तुतुं तृष्ण रश्चापसुपच्छित॥

अर्थात् अविद्य कर्ण युक्त होकर जो भोजन करता है या लम्भकण्यमुक्त जो भोजन करता है या 
दधकण्यमुक्त जो भोजन करता है उसका वह भोजन राखता को चला जाता है। यानी वह प्रतिकृतलता उपसन करे चाहिये होता है। भोजन के उपयुक्त तत्वों का शरीर के लिये उपयोग नहीं हो पाता है।

कर्णछेदन के महत्व को व्यक्त करते हुये चिन्ततमक गण कहते है कि कर्णछेदन से हार्निया नामक रोग नहीं होता है। इसमें वह शास्त्रीय निर्देश है कि वह संस्कार योग्य एवं निपुण व्यक्ति से कराना चाहिये। चछेदन हेतु सुधर का शुरू का प्रयोग उचित बतलाया गया है। इसका कारण यह है कि जातकर्म संस्कार के सम्पादन में लिखा गया है कि सुर्य का विष का विनाश होता है। तो उससे छेदन करने से किसी प्रकार का विष सम्पन्न दौष जिसे इश्नकसन के रूप में जाना जाता है नहीं होता है।

यह तो कर्णवेध का दृष्ट फल है। अद्वृत फल की चर्चा करते हुये आचार्य चक्रचकणि लिखते हैं कर्णवेध के कृते बालो न ग्रहोपभूतते अर्थात् जिस शिशू का कर्णवेध हो जाता है वह ग्रहों से अभिभूत नहीं होता है यानी प्रभावित नहीं होता है। और आध्यात्मिक बृह्दद से वह एक प्रकार का संस्कार है इसके समापन से पुरू जनकता तो होती ही है। लोक में तो शिष्ट जन, जिस में कर्णवेध न हुआ हो और जिस पुरू का उपनयन न हुआ हो उसके हाथ का स्पर्श किया हुआ जल पर भी नहीं पीते हैं।
अतः उपरोक्त अवधायन से आपको कर्णविध का परिचय एवं उसका महत्व क्या है? इसके बारे में जानकारी हो गयी होगी। अब हम इसको आधार बनाकर कुछ प्रश्न बनाने जा रहे हैं जिससे आपका ज्ञान इस विषय में और प्राप्त हो जायेगा। प्रश्न अभ्योलिखित है- 

अभ्यास प्रश्न- 1 

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अभ्योलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अभ्योलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है- 

प्रश्न 1- कर्ण वेध में कर्ण क्या होता है?
   क- कान, ख- करण यानी से , ग- करण यानी करना, घ- कर्ण महादानी।

प्रश्न 2- कर्ण वेध हेतु पहला कारण आचार्य सुधुत ने क्या दिया है?
   क- आभूषण, ख- रक्षा, ग- पिपासा, घ- इच्छा।

प्रश्न 3- कर्ण वेध हेतु दूसरा कारण आचार्य सुधुत ने क्या दिया है?
   क- आभूषण, ख- रक्षा, ग- पिपासा, घ- इच्छा।

प्रश्न 4- कर्ण वेध से आचार्य सुधुत क्या नियंत्रित करते है?
   क- हस्तकृत्व, ख- पादकृत्व, ग- कर्णकृत्व, घ- आन्तकृत्व।

प्रश्न 5- कर्ण वेध से कौन सा रोग दूर होता है?
   क- हार्षिया, ख- पीतिया, ग- फोतिया, घ- एनीमिया।

प्रश्न 6- अजात दन्त क्या है?
   क- दूरां, ख- दूरां न उगना, ग- दूरां धीरे -धीरे उगना, घ- दूरां उगना एवं गिरना।

प्रश्न 7- कर्ण वेध हेतु किसकी सूर्य का प्रयोग किया जाना चाहिए?
   क- लोहे की, ख- सीसे की, ग- सोने की, घ- रांगां की।

प्रश्न 8- सूर्य के सूर्य का गुण क्या है?
   क- धातु नाश, ख- कफ नाश, ग- पित्त नाश, घ- विष नाश।

प्रश्न 9- कर्ण वेध में कितने कान छिद्रते है?
   क- दोनों, ख- एक, ग- दायां, घ- बायां।

प्रश्न 10- कर्ण वेध में छिद्र कितना करना चाहिए?
   क- एक सूत्र बराबर , ख- दो सूत्र बराबर, ग- तीन सूत्र बराबर, घ- चार सूत्र बराबर।

4.3.2 चूड़ाकरण संस्कार का परिचय एवं महत्व-
चूड़ाकरण संस्कार को मुण्डन संस्कार के नाम से भी जाना जाता है ? आयुषे वपािम सुभावन्त तथा मुहूँठा विवाह लगने के दौरान, सीताकर्म का कथ्य ग्राम्य प्राप्ति की कामना के लिये इस संस्कार को कराना चाहिये। सुभावन्त ने कहा है केशों एवं नखों के अपमाजन एवं छेदन से हर्ष, सौभावन्त एवं उदास की वृद्धि एवं पाप का उपचार होता है।

पापोपशायन केशनखोरोमायपमायज्ञम्

हर्षलाघिवसीभावणकरमुसाहबद्वईनम्। चिकित्सा स्थान 24.72

आचार्य चरक लिखते हैं कि केश, समशु, तथा नखों के काटने तथा स्वास्थ्य तथा सौभावन्त की प्राप्ति होती है।

पौपितक्षयमयूपयुचिपुरुपदिनम्

केशमश्वशुवधुसन् कर्तनं सम्प्राप्तायनम्।

चूड़ाकरण संस्कार के सन्दर्भ में नियमों का प्रतिपादन करते हुये कहा गया है कि यदि शिशु की माता को पांच वर्ष से अधिक का गर्भ हो तो शिशु का मुण्डन शुभ नहीं होता है। यदि शिशु पांच वर्ष से अधिक का हो तो माता के गर्भीणि होन पर भी मुण्डन कर देना चाहिये। मुण्डन में तारा अषुभ होने पर यदि चर्म आपने मूल ज्ञानों में हो अथवा उच्च में हो अथवा शुभ ग्रह या अपने मित्र के ढङङ्ग में हो तो मुण्डन शुभ होता है। यदि चर्म शुभ हो और शुभ ग्रह की राशि का हो तो अषुभ तारा भी कौशय यात्रा आदि कार्यों में शुभ होती है।

ऋतुमन्याः सूतिकायाः सूतनोलाययाः नाचरेत्।

रजस्वला खी और सूतिका खी के पुत्र का मुण्डन या उपनयन नही करना चाहिये। यद्य पांडे का ज्ञेय मास में मुण्डन नहीं करना चाहिये। कोई कोई आचार्य गर्भ झांसीया मास में ज्ञेय पांडे का मुण्डन आदि करने का निषेध करते हैं। श्री, भौम, राजि वा राजि को और जिस दिन कौशय बनवायय हो उस दिन से नवां दिन, सन्त्वा समय, फिता तिथि, पर्व तिथि, इन सबको त्याग कर मुण्डन में कहे नक्शादिको में दन विषया, कौशय और नख विषया करना शुभ होता है।

मार्गशीर्ष में तथा ज्ञेये कौशय परिणय व्रतम्।

आदि पुष्पुलोभोश यनत: परिवर्जयेत्।

कौशय कर्म का प्रतिपादन करते हुये बतलाया गया है कि भिन्न आसन के, रण तथा ग्राम में जाने के दिन, सन्न करने के बाद, शरीर में उबटन लगा लेने के बाद और भोजन कर लेने के बाद अपना कल्याण चाहने वाले की कौशय कर्म नही करना चाहिये। यदा में, विवाह में, मृतक कर्म में, कारागार से छुटने पर, ब्राह्मण और राजा की आज्ञा से कौशय कर्म निन्दित वार आदि में भी कर लेना शुभ होता है।

उत्तराखण्ड मुन्त विश्वविद्यालय 147
कर्मकाण्ड एवं मुहूर्त ज्ञान

जिसकी खो गर्भिणी हो उसको मुर्दा नही ठोना चाहिये, तौर पर यात्रा नही करना चाहिये, समुद्र में स्नान नही करना चाहिये और शौर कर्म नही करना चाहिये।

क्रतुपाणिपीठूत-धर्मोक्षणे कृकुमं च द्रिज्जुपायज्या आचरत्
शाखवाहतीर्थकृमिस्लुमजनकुमाराचरणम् खलु गर्भिणीपति।

अंक: उपरोक्त अथवा यो आपको चूड़ाकरण संक्षेप का परिचय एवं उसका महत्त्व क्या है ? इसके बारे में जानकारी हो गयी होगी। अब हम इसको आधार बनाकर कुछ श्रवण बनाने जा रहे है जिससे आपका ज्ञान इस विषय में और प्राप्त हो जाएगा। प्रश्न अथवा लिखित है- 

अभ्यास प्रश्न- 2

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अथवा लिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अथवा लिखित प्रश्न बहु विकल्पी है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है।

प्रश्न 1 - केश कर्तन से क्या नहीं मिलता है?

कः दुख, खः हर्ष, गः सीभाय, घः उत्साह।

प्रश्न 2- बालक की माता को पांच मास का गर्भ हो तो मुण्डन कराया जा सकता है?

कः हा, खः नहीं, गः माता से पूछः, घः इच्छानुसार।

प्रश्न 3- बालक पांच वर्ष से अधिक की आयु का हो और माता को गर्भ हो तो मुण्डन कराया जा सकता है?

कः हा, खः नहीं, गः माता से पूछः, घः इच्छानुसार।

प्रश्न 4 - मुण्डन में तारा अरुभ होने पर तथा चन्द्रमा के मूल त्रिकोण में होने पर मुण्डन कराया जा सकता है?

कः हा, खः नहीं, गः माता से पूछः, घः इच्छानुसार।

प्रश्न 5- ज्येष्ठ बालक का ज्येष्ठ मास में मुण्डन कराया जा सकता है?

कः हा, खः नहीं, गः माता से पूछः, घः इच्छानुसार।

प्रश्न 6- पवृत्तिः में मुण्डन कराया जा सकता है?

कः हा, खः नहीं, गः माता से पूछः, घः इच्छानुसार।

उत्तराखण्ड विश्वविद्यालय 148
4.3.3 उपनयन संस्कार का परिचय एवं महत्व-

उपनयन साधन का अर्थ है गुरू के समीप ब्रह्मचारी को जो बट्टा है उसको ले जाना। ब्रह्मण बट्टा का उपनयन जन्म से या गर्भ से आदेश वर्ष में करना चाहिए। क्षत्रिय कुमार का उपनयन जन्म से या गर्भ से म्यारहवें वर्ष में होना चाहिए। जन्म से या गर्भ से बारहवें वर्ष में वैश्य कुमार का उपनयन संस्कार करना चाहिए। इसका कारण देखने हुये बतलाया गया है कि ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य की सावित्री कृमणा: अट, म्यारह एवं बारह अक्षरों की होती है। यानी ब्राह्मण की सावित्री आठ अक्षर की, क्षत्रिय की सावित्री म्यारह अक्षरों की एवं वैश्य की सावित्री बारह अक्षरों की होती है। क्षत्रिय विद्वानों के अनुसार यह वर्ष भेद प्रतिभा की प्रौढता को देखते हुये किया गया है। कुछ आचार्यों के अनुसार ब्राह्मण को वेद जीन जो शिक्षा दी जाती थी तथा ऊपरी वर्ष के अन्य क्रिया की शिक्षा का विचार था इसलिए भी वर्ष भेद हुआ। पारस्कर के अनुसार सभी की अपनी कुल परम्परा के अनुसार उपनयन संस्कार का विचार है।

ब्राह्मण बालक के उपनयन संस्कार की अवधि सोतह वर्ष तक की बतलाई गयी है। क्षत्रिय कुमार के उपनयन की अवधि 22 वर्ष तक की बतलाई गयी है। वैश्य कुमार के उपनयन की अवधि चौथी वर्ष की बतलाई गयी है। अर्थात् इन समयों के व्यतीत हो जाने उपनयन संस्कार किया जाता है तो फलदायी नहीं होता है। लेकिन इस विषय में काफी मत मतान्तर देखने को मिलता है। सत्रधरी शताब्दी के निवंधकार मिश्र मिश्र ब्राह्मण का चौथी, क्षत्रिय का तत्त्वी और वैश्य का छठी वर्ष की अवस्था तक अनुमूल्य देते हैं। वहीं वीदधर्म विभिन्न उद्देश्यों की प्राप्ति के लिये विभिन्न वर्षों में उपनयन कराने का संकेत देते हैं। जैसे- 

ब्राह्मवर्तम का प्राप्ति के लिये सांघ वर्ष में उपनयन संस्कार कराया जाता है। दीर्घयुत का प्राप्ति के लिये आठवें वर्ष में उपनयन संस्कार कराया जाता है। ऐसे- के लिये नवं वर्ष में उपनयन संस्कार
कराना चाहिए। भोजन के लिये दसवे, पत्थरों के लिये बारहवे, शिल्प कीशल के लिये तेघवे,
तेजस्विता के लिये चौदहवे, बन्धु बान्धवों के लिये पन्थवे एवं सभी गुणों की प्राप्ति के लिये तेघवे 
वर्ष में उपनयन कराना चाहिए। इसी संदर्भ में मनु जी कहते हैं:-

प्रायवर्षम कामस्य कार्य विप्रस्य चंचमे।
राजस बल्विंशित: यषो वैद्यस्यविधितोऽधिमे। मनुसृति 2.37

अर्थात् प्रायवर्षम कामना के लिये पांचवे वर्ष में, बल के इच्छुक श्रद्धाएं को छठवे वर्ष में एवं ऐबर्थम 
के इच्छुक वेस्ट का उपनयन संस्कार आठवे वर्ष में किये जाने चाहिए।
मनु जी का वचन एक जगह और इस मनुसृति के  होता है

आषोडशाद् /ऊ०चा/ऊःथंण/ऊ्थंय सावू/ऊ०ःी नाितवत/ऊथचअते।
आ/ऊःअअािवंशे /ऊथचच/ऊ०ःब/ऊथ98धो आचायुिव/ऊथचथशतेिव/ऊथचअशः।। मनु/ऊ्थंमृित

अथाूंत् ूअठूंत् सूपना के लिये पांचवे वर्ष में, बल के इच्छुक श्रद्धाएं को छठवे वर्ष में एवं ऐबर्थम 
के इच्छुक वेस्ट का उपनयन संस्कार आठवे वर्ष में किये जाने चाहिए।

उपरान्त उपनयन के संस्कार के लिये श्रद्धार्थों का दान होता है

ितरछी बधी हूभी पगडी, चाबुक,
ूद्या हीन धनुष, काला 
अमागूंगी रथ,
अमागूंगी रथ

उपरान्त उपनयन के संस्कार जीद, यम,

वीरिमूंोदय मूदेन वापसपति चार्य नव जीवन, ज्ञेय, हीनाचार। निन्दित - पापाचारी, जातिवहितकृत, नृशंस 
था  ग्राम्य। कनिष्ठ - संस्कार हीन, जातिवहितकृत युवक। ज्ञेय - पुरुषवीण हीन ग्राम्य, हीनाचार।
- नृशंसीजीवी इच्छादि ग्राम्य स्तम्भ में 
मिलता है कि प्रायवर्षम के संस्कार के लिये श्रद्धार्थों का दान होता है-

चार श्रद्धार्थी करते हैं जो नृशंस, ज्ञेय, हीनाचार। निन्दित - पापाचारी, जातिवहितकृत, नृशंस 
था  ग्राम्य। कनिष्ठ - संस्कार हीन, जातिवहितकृत युवक। ज्ञेय - पुरुषवीण हीन ग्राम्य, हीनाचार।
- नृशंसीजीवी इच्छादि ग्राम्य स्तम्भ में
का उदेश्य विद्या की प्राप्ति बताता है। याज्ञवल्क्य के अनुसार, उपनयन का सवृच्छ्य प्रयोग धर्म का अध्ययन करना है। साधारण दृष्टि से यदि देखा जाता है तो उपनयन संस्कार से संस्कारित बालक का जीवन एक प्रकार के विशेष नियमों से आबद्ध हो जाता है।

ब्रह्मचर्य जीवन को पूर्ण करने पर उसकी स्नातक संज्ञा होती है। स्नातक तीन प्रकार के शास्त्रों में बतलाये गये हैं जिन्हें विद्या स्नातक, ब्रत स्नातक और विद्याप्रत्येक स्नातक जाना जाता है। जो कुमार वेद का अध्ययन करता है उपनयन का सवृच्छ्य भाव इसका संस्कार करना है। यो वेद का अंत सदृश या उसे ब्रत स्नातक कहते हैं। वेद या ब्रत के दोनों को पूरा करने वाले स्नातक को विद्यात्र्येक स्नातक कहा गया है। जो आचार्य के बालाम पर यदि कुमार सोया हो तो बेठक, बैठा हो तो खड़ा होकर, खड़ा हो तो दौड़कर बोलें उस ब्रह्मचारी को धरती पर अवस्था आनन्द की प्राप्ति होती है। ऐसे स्नातक अपने ब्रह्मचर्य ब्रत को पूरा करके संसार में एक नया कीर्तिमान स्थापित करते हैं।

अतः उपरोक्त अवस्था से आपको उपकरण संस्कार का परिचय एवं उसका महत्व क्या है ? इसके बारे में जानकारी हो गयी होगी। अब हम इसको आधार बनाकर कुछ प्रश्न बनाने जा रहे हैं जिससे आपका ज्ञान इस विषय में और प्रोढ हो जायेगा। प्रश्न अधोलिखित है:-

अभ्यास प्रश्न- 3

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखित प्रश्न बहु विकल्पीय हैं। प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है:-

प्रश्न 1- ब्राह्मण ब्रत का उपनयन संस्कार कराना चाहिए-
क- आंठवृं वर्ष में, ख- यार्हवृं वर्ष में, ग- बारहवृं वर्ष में, घ- चौदहवृं वर्ष में।
प्रश्न 2- क्षत्रिय कुमार का उपनयन संस्कार कराना चाहिए-
क- आंठवृं वर्ष में, ख- यार्हवृं वर्ष में, ग- बारहवृं वर्ष में, घ- चौदहवृं वर्ष में।
प्रश्न 3- वैश्य कुमार का उपनयन संस्कार कराना चाहिए-
क- आंठवृं वर्ष में, ख- यार्हवृं वर्ष में, ग- बारहवृं वर्ष में, घ- चौदहवृं वर्ष में।
प्रश्न 4- ब्रह्मचर्यसू वाक्यात्मक हेतु उपनयन संस्कार कराना चाहिए-
क- पाँचवृं वर्ष में, ख- यार्हवृं वर्ष में, ग- बारहवृं वर्ष में, घ- सातवृं वर्ष में।
प्रश्न 5- दीपारयाम हेतु उपनयन संस्कार कराना चाहिए-
क- आंठवृं वर्ष में, ख- यार्हवृं वर्ष में, ग- बारहवृं वर्ष में, घ- चौदहवृं वर्ष में।

उत्तराखण्ड मुख्त विश्वविद्यालय 151
कर्मकाण्ड एवं मुहूर्त ज्ञान

प्रश्न 6- ऐश्वर्य हेतु उपनयन संस्कार कराना चाहिए-
क- आठवें वर्ष में , ख- नववें वर्ष में , ग- बारहवें वर्ष में, घ- चौदहवें वर्ष में।

प्रश्न 7- पशुओं के लिये उपनयन संस्कार कराना चाहिए-
क- आठवें वर्ष में , ख- यावर्ष के वर्ष में , ग- बारहवें वर्ष में, घ- चौदहवें वर्ष में।

प्रश्न 8- तेजस्विता हेतु उपनयन संस्कार कराना चाहिए-
क- आठवें वर्ष में , ख- यावर्ष के वर्ष में , ग- बारहवें वर्ष में, घ- चौदहवें वर्ष में।

प्रश्न 9- स्नातक कितने प्रकार के होते हैं?
क- एक, ख- दो, ग- तीन, घ- चार।

प्रश्न 10- प्रातं कितने प्रकार के होते हैं?
क- एक, ख- दो, ग- तीन, घ- चार।

4.4 कर्णवेध, चूँड़ाकरण, उपनयन एवं दीक्षा का मुहूर्त-

इससे पूर्व के प्रकरण में आपने कर्णवेध, चूँड़ाकरण, उपनयन संस्कार का परिचय एवं महत्व जाना। इस प्रकरण में कर्णवेध, चूँड़ाकरण, उपनयन एवं दीक्षा के मुहूर्त के बारे में आप जानेंगे। इसके ज्ञान से तत्संबंधी मुहूर्त के बारे में आप सक्षम हो जाओगे।

4.4.1 कर्णवेध संस्कार का मुहूर्त विचार-

मुहूर्तचिन्तामणि नामक ग्रन्थ में कर्णवेध संस्कार के मुहूर्त का प्रतिपादन करते हुए वर्णित गया है कि-

हितवेंताणित्वोपावहर्षिणं जन्ममाससं च रिका।
युम्म्भवं जन्मतामत्त्वूविविविविवणुः सम्मिते मात्यथो वा॥

अथीजावेत्ति विषु युम्माणितिलखुभेऽ: कर्णवेध: प्रशस्तः॥

अर्थात् कर्णवेध संस्कार हेतु चैत्र एवं पौष मास को छोड़ देना चाहिए। चैत्र मास का निषेध मीनार्क के कारण किया गया है। मीनार्क का मतलब मीन राशि के सूर्य से है। उसी प्रकार पौष एक धनु राशि के सूर्य से है जिसे खर मास की संज्ञा दी गयी है। अर्थात् यानी यह तर्क तिथि को छोड़ देना चाहिए।

व्यवहारार्थम में कहा गया है कि-

न जन्ममासे न च चैत्रपोषे न जन्मतामत्तु हरी प्रसुमे।
कर्मकाण्ड एवं मुहूर्त ज्ञान

तिथिवारस्त्रे न च विष्णुपूजन कर्णस्य वेधों न समानवर्षे॥

इसमें हरिशचन्द्र काल को भी त्यागने के लिए कहा गया है। हरिश्चन्द्र एकादशी से देवोत्सनी एकादशी तक के काल को हरिशचन्द्र का काल कहा गया है। अर्थात् आषाढ़ शुक्ल एकादशी से कार्तिक शुक्ल दशमी तक के काल को हरिशचन्द्र काल कहा जाता है। जम पानी यानी जम का महानी और रिका तिथि यानी चतुर्थी, नवमी एवं चतुर्दशी तिथि को त्याग देना चाहिये। इस सन्दर्भ में प्रयोग पारिजात में लिखा गया है कि-

यो जन्ममासेः स्वरकम्य यात्राः कर्णस्य वेधेः कुरूते हि मोहात्।

मूहः स रोगी धनपुर प्राप्तो गूढः निधनं तदाशु।

अथात् जो जम मास में क्षीर कर्म, यात्रा एवं कर्णवेध संस्कार करते हैं वे रोगी होते हैं तथा उनके धन एवं पुर का नाश होता है। युमाब्द यानी सम वर्ष को छोड़कर विषम वर्षों में कर्णवेध संस्कार करा सकते हैं। जम तारा यानी जम नक्षत्र से पहली, दसवीं और उनकीवीं नक्षत्र को छोड़कर जम से छठवे, सातवे एवं आठवे यहाँने में अथवा जम दिन से बारहवे या सोलहवे दिन, बुध, बृहस्पति, शुक्र तथा सोम जाये में, विषम वर्षों में, श्रवण, धनिष्ठा, पुण्वसु, मूदसंज्ञक यानी मृगशिर, रेवति, चित्रा, अनुपाधा एवं तारा संज्ञक यानी हस्त, अश्विनी, पुष्य इन दश नक्षत्रों में बालकों का कर्णवेध उत्तम होता है।

कर्ण वेध मुहूर्त में लगे मुहूर्त का विचार अवश्य करना चाहिये। इसका विचार करते हुये कहा गया है कि-

संशुधुः मुतिभवने विक्रोणवेधस्य: शुभावर्षवर्ष: काविजयने।

पापाश्चर्यसह जानस्य धाशस्य रुग्मसंस्कृतस्य त्रिदशते शुभावहः स्वातः।

इसका अर्थ करते हुये बतलाया गया है कि कर्णवेध लगे से अधिक स्थान शुद्ध होना चाहिये। यानी अधिक स्थान में कोई भी पग न हो। शुभ पग त्रिकोण में, केन्द्र में, आय भाव में, तीसरे स्थान में स्थित हों, शुक्र एवं गुरु लगे में हों, पापव्रत यानी क्षीर चन्द्र, मूर्ध, मंगल, शनि, राहु एवं केतु वृष्टी, चंद्र एवं एकादश स्थान में हो तो कर्णवेध करना चाहिये। बालकों का पहले दायां फिर बायां तथा बालिकाओं का पहले बायां फिर दायां कान का छेदन करना चाहिये।

अत: उपरोक्त अध्ययन से आपको कर्णवेध संस्कार के मुहूर्त क्या है ? इसके बारे में जानकारी हो गयी होगी। अब हम इसको आधार बनाकर कुछ प्रश्न चनाने जा रहे हैं जिससे आपका ज्ञान इस विषय में और प्रोढ़ हो जायेगा। प्रश्न अयोपरिचित है-

अथ्याय प्रश्न- 4
उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखित प्रश्न बहुविकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है-

प्रश्न 1- चैत मास को क्यों छोड़ना चाहिए-  
  क- मीनाकृति के कारण , ख- मेषाकृति के कारण , ग- वृषाकृति के कारण , घ- मिथुनाकृति के कारण।

प्रश्न 2- पौष मास को क्यों छोड़ना चाहिए-  
  क- मीनाकृति के कारण , ख- धनवाकृति के कारण , ग- वृषाकृति के कारण , घ- मिथुनाकृति के कारण।

प्रश्न 3- अम तिथि क्या है-  
  क- बृद्धि तिथि , ख- तिथि , ग- क्षय तिथि, घ- गत तिथि।

प्रश्न 4- रितक तिथि क्या है-  
  क- प्रतिपदा तिथि , ख- ह्यतीया तिथि , ग- तृतीया तिथि, घ- चतुर्थी तिथि।

प्रश्न 5- यूमावत क्या है?
  क- सम वर्ष, ख- विषम वर्ष, ग- अधिक वर्ष, घ- क्षय वर्ष।

प्रश्न 6- अष्टम स्थान शुद्ध कब होता है?
  क- पूर्ण रितक रहता है, ख- अधीरित रहता है, ग- पाप्राह युक्त होता है, घ- शुभमृग हुक्त होता है?

प्रश्न 7- समम स्थान क्या है?
  क- लिङ्क, ख- केन्द्र, ग- अधि स्थान, घ- आय स्थान।

प्रश्न 8- जन्म तारा यानी जन्म नक्षत्र से कौन नक्षत्र त्याज्य है?
  क- दसकृति, ख- मयाहवी, ग- बारहवी, घ- तेरहवी।

प्रश्न 9- हरियानी एकादशी कब होती है?
  क- वैशाख में, ख- ज्येष्ठ में, ग- आषाढ़ में, घ- श्रावण में।

प्रश्न 10- देवौत्तनी एकादशी कब होती है?
  क- भादेशद में, ख- आशिन में, ग- कार्तिक में, घ- मार्गशीर्ष में।

4.4.2 चूड़ाकरण संस्कार का महत्व-

इससे पूर्व के प्रकरण में आपने करणविध संस्कार के बारे में जाना। अब हम चूड़ाकरण संस्कार के विषय में चर्चा करने जा रहे हैं। चूड़ाकरण संस्कार के बारे में बतलाते हुये कहा गया है कि-  

चूड़ावषयःतृतीया प्रभवति विषमे अष्टरक्षित्यायनः।  
पवोनाः विच्छेदगयनसमये जन्तुहुक्त्यकानाम्।
वारे लगाशोधाज्ञानिधननयने शूद्रपुरे।
शेरोपेतिविमेट्रूलघुचररैरयष्ट्रचापि।

अथात् चूड़ाकरण संस्कार जन्म समय से अथवा गर्भाधान से तीसरे आदि विषम वर्ष में करना चाहिये। अश्ल अथात् अश्ली, अर्क अथात् वारसी, रिकिया यानी चतुर्थी, नवमी व चतुर्दशी, आद्य यानी प्रतिपदा, ष्ठी तिथियों अथवा पवीको छोड़कर अन्य द्वितीया, तृतीया, पंचमी, सप्तमी, दसमी, एकादशी एवं बयोदशी तिथियों में चेत्रमास को छोड़कर, उदयग्रन्थि समय यानी उत्तरायण वानी माघ, फालू, वैशाख, जूहं अथवा आषाढ़ मासों में, ज्यानी बुध, इन्द्र यानी सौम, शुक्र एवं हनुमान यानी गुरु वारों में, और इन्हीं की राशियों यानी वृष, मिथुन, कर्क, कन्या, तुला, घनु व मीन में और इन्हीं के नवाश यानी नवं अश्र में, जिस बालक का मुण्डन संस्कार करना हो उसकी जन्म राशि और जन्म लम्ब से आठवीं राशि के लिए होता है। पराशर मुनि के अनुसार, यदि राशि अथवा नहीं हो, तदनुसार राशि या नयी राशि एवं आषाढ़ राशि अथवा उदय के लिए होता है।

चूड़ाकरण लम्ब या केन्द्र में ग्रहों की स्थिति के अनुसार फलों का वर्णन किया गया है जो अधोलिखित है।

क्षीणचन्द्रकुजसौरिसहस्ररूपमृगशुभमृतिपुत्र ज्वराः।
स्यु क्रमणे वुधजीवभागाः केन्द्रिक्षुभमिष्टायाः।

अथात् चूड़ाकरणकालिक लम्ब से केन्द्र में श्वेत चन्द्रमा हो तो बालक की मृत्यु, मंगल हो तो श्वेत से मृत्यु, शनि हो तो पंचगुरु, शुभ हो तो ज्योति होने से शुभ, गुरु, शुक्र केन्द्र में हो तथा तारा दो, चार, छ, सात, नव हो तो चूड़ाकर्म शुभ होता है।

चौल कर्म में तारा बल को आवश्यकता बतलाया गया है। मुहूर्तचन्द्रमणि नामक प्रणय में कहा गया है कि -

ताराराू अवजे त्रिकीरोच्चे श्रीरं सत्त्वासपन्मित्रस्वेवः।
सौभेथे भूशंठे शूद्वथा वृत्ततारा शास्त्रं श्रीययात्मादिकृतेः।

अथात् तारा के दृश्य यानी एक, तीन, पांच, सात होने पर भी यदि चन्द्रमा मुण्डन अथवा त्रिकोण में हो, अपनी उच्च राशि हो, या शुभग्रह के धर या शीतकाल के वर्ग में हो या अपने ही वर्ग में
हो तो शैर कर्म शुभ होता है। यदि चन्द्रमा गोचर में शुभ स्थान पर हो और शुभ ग्रह की राशि में भी हो तो शैर कर्म याया आदि में दुष्ट तारा को वोष नष्ट हो जाता है।

अतः उपरोक्त अध्ययन से आपको चूड़ाकरण संस्कार के मूर्त्ति व्यय हैं? इसके बारे में जानकारी हो गयी होगी। अब हम इसको आधार बनाकर कुछ प्रश्न बनाने जा रहे हैं जिससे आपका ज्ञान इस विषय में और गोड़ हो जायेगा। प्रश्न अध्यालिखित हैं-

अभ्यास प्रश्न- 5 उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अध्यालिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं।

अध्यालिखित प्रश्न चूड़ा विकल्पीय है। प्रत्येक प्रश्न में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है-

प्रश्न 1- विचारो शब्द का व्यय होगा?

क- चैत्र मास को छोड़कर, ख- चित को छोड़कर,
ग- चैत्र मास को लेकर, घ- चित्रा नक्षत्र को छोड़कर।

प्रश्न 2- उदयाचरण समय व्यय है?

क- उत्तराखण्ड, ख- दक्षिणाक्षण, ग- याम्य गोल, घ- लिखित सभी।

प्रश्न 3- ज शब्द का अर्थ व्यय है?

क- सोम, ख- मंगल, ग- बुध, घ- गुरु।

प्रश्न 4- इतना शब्द का अर्थ व्यय है?

क- सोम, ख- मंगल, ग- बुध, घ- गुरु।

प्रश्न 5- इज्ज़ शब्द का अर्थ व्यय है?

क- सोम, ख- मंगल, ग- बुध, घ- गुरु।

प्रश्न 6-चूड़ाकरणकारक लम्ब से केन्द्र में छोड़ चन्द्रमा हो तो फल होता है?

क- मृगु, ख- शाख से मृगु, ग- पंगु, घ- ज्वर।

प्रश्न 7-चूड़ाकरणकारक लम्ब से केन्द्र में मंगल हो तो फल होता है?

क- मृगु, ख- शाख से मृगु, ग- पंगु, घ- ज्वर।

प्रश्न 8-चूड़ाकरणकारक लम्ब से केन्द्र में शिन हो तो फल होता है?

क- मृगु, ख- शाख से मृगु, ग- पंगु, घ- ज्वर।

प्रश्न 9-चूड़ाकरणकारक लम्ब से केन्द्र में सूर्य हो तो फल होता है?

क- मृगु, ख- शाख से मृगु, ग- पंगु, घ- ज्वर।

प्रश्न 10-चूड़ाकरण में बुध, गुरु, शुक्र केन्द्र में हो तथा तारा दो, चार, छ, सात, नव हो तो चूड़ाकर्म
क- शुभ होता है। ख- अशुभ होता है। ग- माता को कष्ट होता है। घ- पिता को कष्ट होता है।

इस प्रकार आपने चुंबकारण संक्रामक के मुहूर्त के बारे में जाना। अब हम उपनयन एवं दीक्षा के मुहूर्त के बारे में चिन्तन करेंगे।

4.4.3 उपनयन एवं दीक्षा मुहूर्त

उपनयन संस्कार के रूप में आपको उपनयन के बारे में बताया जा चुका है। अब हम इस प्रकरण में उपनयन कब कराना चाहिए, दीक्षा के लिए क्या मुहूर्त एवं फल होगा इस पर विचार करेंगे। इसके अध्ययन से उपनयन का कार्य निर्धारित करने का ज्ञान आपको हो जाएगा।

उपनयन संस्कार को ब्रजबंध शब्द से भी प्रायः सम्बोधित किया जाता है। इसमें नक्षत्र इत्यादिकों का चिन्तन करते हुये कहा गया है-

क्षिप्रदृढ्यवाहिकमूलमूलत्रिपुराणं रैष्ट्रेकविह्रसितंदने ब्रजं सतं।

द्वितीयुद्विद्विरत्वमिति तिथिः च कृष्णादिमित्रिनवकं य न च चापराह्नं।

अर्थां शिखर संस्करण यानी हरक, अधिक, पुष्प, ध्रुव संस्करण यानी रोहिणी, उत्तरा फल्युणी, उत्तरार्द्धा, उत्तराभाग्येण, आषार्धेष, चर संस्करण यानी स्वाती, पुनर्वसु, श्रवण, धनिष्ठा, शालभिषा, युतल, युतुं संस्करण यानी मुगुशिर, रेवती, चित्रा, अनुराधा, तीनों पूर्वां एवं आप्तां इन बार्णेव नक्षत्रों में, रवि, बुध, गुरु, शुक्र तथा सोम इन पांच वारों में, द्वितीया, तृतीया, चतुर्थी, चतुर्भुज, चतुर्वेणी, स्वर्गीय तिथियों में इस पुष्करण के प्रथम त्रिभाग यानी प्रतिपदा, द्वितीया, तृतीया, चतुर्थी, चतुर्भुज, चतुर्वेणी तिथियों में उपनयन संस्कार उत्तम होता है। उपनयन दिन के अपराह्न में नहीं करना चाहिए। मध्याह्न में मध्यम श्रेणी का होता है।

इस सन्दर्भ में आचार्य वसिष्ठ, कश्यप एवं नारायण के मत में हरम से तीन, श्रवण से तीन, रोहिणी से दो, पुनर्वसु से दो, रेवती से दो, तीनों उत्तरा और अनुराधा ये सोतह नक्षत्र ही उपनयन में लिये गये हैं।

श्रावण को पुनर्वसु नक्षत्र में उपनयन निषेध माना गया है। अतः उपनयन में यही नक्षत्र उत्तम है।

आर्को, आश्वेषा, तीनों पूर्वां, तथा मूल ये नक्षत्र, श्रावण के लिए पुनर्वसु सहित सात नक्षत्र वसिष्ठ आदि के मंच निषेध होते हुये भी आचार्य के मत में विहित है। अतः इनको मध्यम श्रेणी का समझना चाहिए। चैत का महीना और मीन राशि के सूर्य में उपनयन अतिप्रसात होता है।

अन्यत्र लिखा गया है कि-

जनमभाद्र दुपशेप सिंह शीती वा शुकुले गुरौ।

माँजीवन्ध: शुपः प्राक्तं चैतं मीनगते रवी॥

अन्यत्र लिखा गया है कि-

उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय

157
गोचराष्ट्रकवार्गायां यदि शुरुः नाते।
तदोपनयनं काय चैत्रे मीनगते गुरी॥

तथा-

जीवभार्गवयोरस्ते सिंहरथे देवतागुरी।
मेघलाभ्यनं काय चैत्रे मीनगते रघी॥

प्रतिबन्ध मध्ये लगभग योग की चर्चा करते हुये बतलाया गया है कि-
कवीश्चन्द्रलमणपा रिषी मृती ब्रह्म अधामा॥
व्यये अवज्ञाभार्गवी तथा तति मृती मुते खला॥

बालक का उपनयन ऐसे लगभग में निश्चित करना चाहिए जिसके छठे और आठवें स्थान में शुक्र,
बृहस्पति एवं चन्द्रमा स्थित होकर लगभग के स्वामी न हो। बारहवें स्थान में चन्द्रमा और शुक्र न हो
तथा लगभग के आठवें एवं पांचवें स्थान में पापभ्रान्त ग्रामी सूर्य, भूप, शां, राहु एवं केतु न हो। इस
प्रकार की ग्रह स्थिति बालक की उन्नति में बाधक होती है।

सामान्य प्रकार से लगभग शुद्धि की चर्चा करते हुये बतलाया गया है कि उपनयन मध्ये लगभग से छठे,
आठवें वा बारहवें स्थानों के छोड़कर अन्य स्थानों में शुभभ्रान्त पड़े हो तो शुभनलदायक होते हैं एवं
तीन, छ तथा चारवें स्थान में पापभ्रान्त उत्तम होते हैं। तथा पूर्ण चन्द्रमा वृषभाषि का या कर्क राशि का
होकर उपनयन लगन में हो तो उत्तम होता है।

अधिकारियों के संबंध में यह भ्रूक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है-
विप्राचार्येशी भार्गवेज्जी कुजाकों राजन्यानामपथा विश्वां च।
शूद्रान्यां ज्ञ्यान्यजणानां श्रीनं: स्याचाराख्येन: स्युर्जीवशुकःरसाय्याः॥

अर्थात् वैश्यों के स्वामी शुक्र और बृहस्पति है। क्षत्रियों के स्वामी मंगल और सूर्य है। वैश्यों के
स्वामी चन्द्रमा है, शूर्य के स्वामी बुध और अन्यर्जों के स्वामी श्रीन है। शुक्रवेद के स्वामी बृहस्पति,
बुधवेद के स्वामी शुक्र, सामवेद के स्वामी मंगल, अथवेद के स्वामी बुध होते हैं।

विशेष बतलाते हुये कहा गया है कि प्रथम गर्भ से उत्तम बालकों का उपनयन जन्म नक्षत्र, जन्म
मास, जन्म लगभग में हो तो वह बालक बड़ा विश्वास होता है। क्षत्रिय एवं वैश्य के प्रथम गर्भ को
छोड़कर दूसरे गर्भ से उत्तम बालकों का उपनयन होने से वे भी अधिक विश्वास होते हैं। बृहस्पति
अपनी उच्च राशि, अपनी राशि, अपने मित्र की राशि, मक्कर , कुम्भ राशि में भी अपने नवम्न और
ज्ञानम में बृहस्पति हो तो जन्म राशि से चार, आठ, बारहवें राशि पर होते हुये भी उत्तम होता है।
अपनी नीच राशि और शुभ राशि में हो तो गोचर से शुभ होने पर भी अशुभ फलदायक ही होते हैं।
कलातिपति म लड़के के उपनयन म और लड़की के विवाह म यदि उक्त प्रकार से गुरू शुभ न होता हो तो अश्वर्ग्य को शुभ देखने चाहिए। राजमात्राण म लिखा गया है कि-

अश्वर्ग्य ये शुध्द शुभः सर्वकर्मसु।

सूक्ष्मावस्थाकृतिः स्थूला शुद्धिस्तु गोचरा॥

इससे यह भी सिद्ध होता है कि गोचर से गुरु गुरू होने पर भी यदि अश्वर्ग्य से उतम गुरू नहीं है तो उपनयन एवं विवाह अशुभ होते है।

व्रतनाथ म प्रायः झन तत्त्वों का नियंत्रण देखने को मिलता है-

कृष्ण प्रदोष अनुष्ठाये गणी निष्पालनहार्।

प्राक्क सत्यागर्भिते नेषो व्रतनाथो गतग्रहो॥

अर्थां कृष्णपक्ष म यानी षड्या से अमावास्या तक, प्रদोष के दिन यानी द्राक्षी तिथि को अर्थात्रति के पहले यदि त्रयोदशी लग जाय, षड्या के डेढ़ प्रारंभ रात के पहले सातपदी आ जाय और तृतीया को एक प्रहर के पहले चतुर्थी प्रारंभ हो जाय तो ये तीन घटक कहे जाते है। प्रदोष के दिन उपनयन करना नही है। प्रदोष समय म वेदी और वेदों का अथ्यन्य-अथ्यन्य भी नही करना चाहिए। अन्ध्याय भी उपनयन म वर्तित है। अन्ध्याय का मतलब आषाढ़, ज्वेष्ट, पौष और माघ के शुक्लपक्ष म क्रम से दशमी, द्वितीया, एकादशी, द्वादशी अर्थात् आषाढ़ शुक्ल दशमी, ज्वेष्ट शुक्ल द्वितीया, पौष शुक्ल एकादशी और माघ शुक्ल द्वादशी, चतुर्दशी, पूर्णिमा, अमावास्या, प्रतिपदा, अष्टमी और संक्राम्यि के दिन ये सब व्रतनाथ म अथ्याय है। इनम उपनयन संस्कार नही करना चाहिए। इससे यह भी सिद्ध होता है जो तीन घटक होने पर भी यदि अन्ध्याय से उतम गुरू नही है तो उपनयन एवं विवाह अशुभ होते है।

उपनयन के समय यदि गुरू का नवांश हो तो उपनीत बालक भवेत् पापः पटुः षट्कमूदू द् बटुः।

यजार्थपुक्क तथा मूूषाः रथ्यायणेः तां क्रमात्॥

अर्थानुपनयन नाट म यदि सूर्य का नवांश हो तो उपनीत बालक कृपा स्वभाव का होता है। चन्द्रमा का नवांश हो तो जड़ होता है। मंगल का नवांश हो तो पापकमू होता है। बुध का नवांश हो तो घटक होता है। मंगल का नवांश हो तो पापकमू होता है। शुक्र का नवांश हो तो यज्ञकल्यां और धनवान होता है। शिन का नवांश हो तो बालक भवेत् पापः पटुः षट्कमूकृ द् बटुः।

उपनयन के समय किसी भी राशि म यदि चन्द्रमा शुभ राशि के तृतीय, षड्य, द्वितीय, सप्तमी, अष्टमी, नवमी का नवांश हो तो जो उपनीत बालक विधा म रूचि रखने वाला होगा। पापकमू की राशि प्रथम,
अष्टम, पंचम, दशम एवं एकादश के नवांश में हो तो अतिदिन होता है। अपने नवांश में हो तो दुखी होता है। किन्तु श्रवण नक्षत्र और पुनःवस्त्र नक्षत्र में चन्द्रमा हो और कर्क नक्षत्र का नवांश हो तो धनवान होता है। अथात् श्रवण नक्षत्र और पुनःवस्त्र के चतुर्घ चरण में चन्द्रमा रहे तो धनी होता है।

इसी प्रकार यह भी विचार किया गया है कि उपनयन काल में किस ग्रह के रहने से क्या फल प्राप्त होता है। जैसे-

राजसेवी वेश्यनुम: शाख्यात्मक पाठक:।
प्राक्षो अध्यात्म: व्येच्छानवि क्षेत्रे सूयादित्वये:॥

अर्थात् उपनयन के समय में सूर्य केन्द्र में हो तो उपनीत बालक राजा का नौकर होता है। चन्द्रमा केन्द्र में हो तो वेश्यनुम करने वाला होता है। मंगल केन्द्र में हो तो शाख्यात्मक होता है। चुंब केन्द्र में हो तो अध्यात्मक होता है। गुरू केन्द्र में हो तो विद्वान होता है। शुक्र केन्द्र में हो तो धनवान होता है। और शनि केन्द्र में हो तो नगरपारिका इत्यादि सेवा में होता है। इस प्रकार उपनयन के समय में आचार्य ब्रह्मचारी को उपदेश देता है जैसे- चर्चार्य विहित कर्म करो। दिन में कभी धुन मोहो। अन्य कथाओं पर निर्भ्रत रखो। अमि में हवार्ध समिदाधान करो। भोजन के पूर्व एवं पद्धार्थ जल का आचमन करो। इस प्रकार उपदेश को जानने पर मनुष्यादिका का कार्य क्रम होता है।

वैष्णवी: उपदेश देने के बाद होम की अमि के उत्तर में आचार्य के पैर को पकड़ हुए आचार्य को देखते हुए और हम देखते हुए कुमार को साविका मनुष्य सिखायें। कुछ आचार्यों के विचार से दाहिनी और खड़े या बैठे हुए कुमार को आचार्य साविका मनुष्य सिखायें। आचार्य साविका मनुष्य पहले एक एक पाद स्वयं कल्पना फिर शिष्य से कहलवाये। फिर आवी आवी तीसरी बार सम्पूर्ण मनुष्य आचार्य के साथ शिष्य दोहरा दे। ब्रह्मचार्य कुमार को उपनयन के बाद तत्काल आचार्य गायत्री छन्द में निबंध सिखायें। वहीं कृति वेद का वचन है आपको वै निर्धारण: अथर्तं ब्रह्मचार्य में अन्नदेव का अंश रहता है। क्षत्रिय कुमार को त्रिशू-छन्द में निबंध साविका मनुष्य सिखायें। वैष्णव कुमार को जगति छन्द में निबंध साविका मनुष्य सिखायें। सभी को गायत्री छन्द में साविका मनुष्य सिखायें जा सकता है। साविका प्रणाम के पश्चात् ब्रह्मचारी को प्रतिदिन समिदाधान करना चाहिए।

उपनयन समाप्त होने के बाद इस प्रकार आपने इस प्रकार एवं प्रारंभ करने का चयन करना होगा। उपरोक्त कथा को पढ़कर आप अधोलिखत प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखत प्रश्न को ध्यान दें। अधोलिखत प्रश्न बहुविकल्पी है। प्रत्येक प्रश्न में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है।

अभ्यास प्रश्न- 6

उपरोक्त विषय को पढ़कर आप अधोलिखत प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं। अधोलिखत प्रश्न बहुविकल्पी है। प्रत्येक प्रश्नों में दिये गये चार विकल्पों में से कोई एक ही सही है, जिसका चयन आपको करना है।
प्रश्न 1- उपनयन लन्न मे यदि सूर्य का नवांश हो तो उपनीत बालक होता है- क- कृ, ख- जड़, ग- पापकर्मकता, घ- पटु।
प्रश्न 2- उपनयन लन्न मे यदि चन्द्र का नवांश हो तो उपनीत बालक होता है- क- कृ, ख- जड़, ग- पापकर्मकता, घ- पटु।
प्रश्न 3- उपनयन लन्न मे यदि मंगल का नवांश हो तो उपनीत बालक होता है- क- कृ, ख- जड़, ग- पापकर्मकता, घ- पटु।
प्रश्न 4- उपनयन लन्न मे यदि बुध का नवांश हो तो उपनीत बालक होता है- क- कृ, ख- जड़, ग- पापकर्मकता, घ- पटु।
प्रश्न 5- उपनयन लन्न मे यदि गुरु का नवांश हो तो उपनीत बालक होता है- क- षट्कर्म, ख- यज्ञकर्म, ग- मूर्ख, घ- पटु।
प्रश्न 6- उपनयन लन्न मे यदि शुक्र का नवांश हो तो उपनीत बालक होता है- क- षट्कर्म, ख- यज्ञकर्म, ग- मूर्ख, घ- पटु।
प्रश्न 7- उपनयन लन्न मे यदि शनि का नवांश हो तो उपनीत बालक होता है- क- षट्कर्म, ख- यज्ञकर्म, ग- मूर्ख, घ- पटु।
प्रश्न 8-उपनयन के समय मे सूर्य केन्द्र मे हो तो उपनीत बालक होता है- क- राज सेवी, ख- वैश्य वृत्ति, ग- राशिवृत्ति, घ- अध्यापक।
प्रश्न 9-उपनयन के समय मे चन्द्र केन्द्र मे हो तो उपनीत बालक होता है- क- राज सेवी, ख- वैश्य वृत्ति, ग- राशिवृत्ति, घ- अध्यापक।
प्रश्न 10-उपनयन के समय मे मंगल केन्द्र मे हो तो उपनीत बालक होता है- क- राज सेवी, ख- वैश्य वृत्ति, ग- राशिवृत्ति, घ- अध्यापक।
प्रश्न 11-उपनयन के समय मे बुध केन्द्र मे हो तो उपनीत बालक होता है- क- राज सेवी, ख- वैश्य वृत्ति, ग- राशिवृत्ति, घ- अध्यापक।

4.5 सारांश-
इस ईकाई मे आपने कर्षणवेध, चूड़ाकरण एवं उपनयन तथा दीक्षा के मुहूर्तों के बारे मे ज्ञान प्राप्त किया। इस ज्ञान के बिना लोग इन संस्कारों का सम्पादन नहीं कर सकते। क्योंकि प्रत्येक कार्य का आरम्भ करने वाला व्यक्ति वह भली भंति सोचता है कि कार्य निर्देशनता पूर्वक सम्पन्न होना चाहिये। सम्पन्नता के साथ - साथ निर्देशित उद्देश्य को भी प्राप्त करने मे वह कार्य सफलता प्रदान करे। और वह तभी सम्पन्न हो सकता जब उचित मुहूर्त से संस्कार कराये जाये।
कर्णेव विषय संस्कार में कहा गया है कि युमाव्द यानी सम वर्ष को छोड़कर विषय वर्षों में कर्णेव विषय संस्कार करा सकते हैं। जब तारा यानी जम्मु नक्सूर से पहले, दसवीं और उन्नीसवीं नक्सूर को छोड़कर नक्सूर से छठवे, सातवे एवं आठवे महीने में अथवा जम्मु दिन से बारहवे या सोलहवे दिन, बुध, बृहस्पति, शुक्र तथा सोम वारों में, विषय वर्षों में, श्रवण, धनिष्ठा, पुनर्वसु, मिथुन संज्ञक यानी मृगशिरा, रेता, चित्रा, अनुरुधः एवं लघु संज्ञक यानी हस्त, अल्किनी, पुष्य इन द्वारक नक्सूरों में बालाकों का कर्णेव उत्तम होता है।

चूड़करण संस्कार जम्मु समय से अथवा गहमाप्राण से तीसरे आदि विषय वर्ष में करना चाहिए। अथ अर्थात अष्टमी, अर्क अर्थात द्राङ्क, रितवा यानी चतुर्थी, नवमी व चतुदूर्वशी, आदि यानी प्रतिपदा, चतुदूर्वशी तिथियों और ते को छोड़कर अन्य तितिया, तृतीया, पंचमी, सातवी, दशवी, एकादशी एवं अक्षोदवी तिथियों में चेतनास को छोड़कर, उदागम समय यानी उत्तरायण यानी माघ, फाल्गुन, वेषयाख, जेवेघ एवं आशाह मासों में, जय यानी बुध, इन्द्र यानी सोम, शुक्र एवं इज यानी गुरु वारों में, और इन्ही की राशियों यानी वृष, मिथुन, कर्क, कुष्ठ, तुला, धनु व मीन में और इन्ही के वांश यानी नवं अंग में, जिस बालक का मुण्डन संस्कार करना हो उसकी राशि ओर जम्मु लन से आठवीं राशि के लन को छोड़कर अन्य लनों में, लन से आठवीं स्थान में कोई शुभ या पापीह न हो, जेवेघा से युक्त अनुरुध रहत मुदासंज्ञक यानी मृगशिरा, रेता, चित्रा नक्सूरों में, चर संज्ञक यानी स्वाती, पुनर्वसु, श्रवण, धनिष्ठा एवं शतिभूषा, लघु संज्ञक यानी हस्त, अल्किनी, पुष्य इन बाहर नक्सूरों में, लन से तीन, छ, यार मध्य यानी एवं पापीह यानी अज्ञात, मंगल, शनि, राहु, केतु के रहने पर चूड़कर्म यानी मुण्डन संस्कार करना उत्तम होता है।

उपनयन संस्कार में चतूष संज्ञक यानी हस्त, अल्किनी, पुष्य, ध्रुव संज्ञक यानी रोहिणी, उत्तर फल्युनी, उत्तराशाड़, उत्तरावाद्रव, आश्वेषा, चर संज्ञक यानी ग्राही, पुनर्वसु, श्रवण, धनिष्ठा, शतिभूषा, मूल, शुक्र संज्ञक यानी मृगशिरा, रेता, चित्रा, अनुरुधः तीनों पूर्ण एवं आर्त्तौ इन बायास नक्सूरों में, रंि, बुध, गुरु, शुक्र तथा सोम इन पांच वारों में, द्वितीया, तृतीया, पंचमी, एकादशी, द्राङ्क एवं दर्शानी तिथियों में एवं श्रृंखल के प्रथम त्रिभुज यानी प्रतिपदा, द्वितीया, तृतीया, चतुर्थी, पंचमी तिथियों में उपनयन संस्कार उत्तम होता है। उपनयन दिन के अपरान्ह में नहीं करना चाहिए।

मत्यान्व में भूमिक वृष्णी का होता है।

4.6 पारिभाषिक शब्दावलियाँ-

राजसेवी - राजा की सेवा करने वाला, वैश्वक वृष्णी- व्यापार से आजीविका चलाने वाला, शास्त्रीय-शास्त्र कार्य से आजीविका चलाने वाला, पाठक- पढ़ाने वाला, प्राज्ञा- ज्ञानवान, अर्थविना- धनविना,
कर्मकाण्ड एवं मुहूर्त ज्ञान

बाक्क – 101

मलेश्वरकी सेवा करने वाला, स्थान - 47, कुश, तृतीय वाणिज्य नमन, खेत्र- ग्रह, कुश, नातिनारा वा उग्र, जड़- मूर्ख, पूर्व- कुशल, पटकरणकृत- 4: कर्म करने वाला, नातिनार- उपवीती बालक, विप्राधीश- विप्रों के स्वामी, भार्गव-शुक्र, देव- हृद, कुश- मंगल, अरक- सूर्य, राजन- क्षेत्र, औषधीक औषधियों के स्वामी, विशाल - वैश्च, द- बुध, छाखेशाः- शाखाओं के स्वामी, जीव- गुर, आर- गुर, सौम्य- बुध, जनमभाद- जनम नक्षत्र से, दुष्ट- दुष्ट स्थान, शत्रू- शत्रू राशि, मौजीबन्ध- उपनयन, प्राकृत- कहा गया है, चेत्र- चेत्र मास में मीनगते- मीन राशि में, जीव- गुर, धिरस्थ- सिंह राशि में स्थित, देवतागुरौ- देवताओं के गुरु, गुण- बुध, छाखेशाः- शा

4.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर-

पूर्व में दिये गये सभी अभ्यास प्रश्नों के उत्तर यहां दिये जा रहे हैं। आप अपने से उन प्रश्नों को हल कर लिये होगे। अब आप इन उत्तरों से अपने उत्तरों का मिलान कर लीजिये। यदि गलत हो तो उसको सही करके पुनः तैयार कर लीजिये। इससे आप इस प्रकार के समस्त प्रश्नों का उत्तर सही तरीके से दे पायेगे।

अभ्यास प्रश्नों के उत्तर- 1

1-क, 2-ख, 3-क, 4-घ, 5-क, 6-ख, 7-ग, 8-घ, 9-क, 10-ख।

अभ्यास प्रश्नों के उत्तर- 2

1-क, 2-ख, 3-क, 4-क, 5-ख, 6-ख, 7-ख, 8-क, 9-क, 10-ख।

उत्तराखण्ड मुंकत विश्वविद्यालय 163
### 4.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची-

1. मुहूर्त चिन्तामणि।
2. भारतीय कुण्डली विज्ञान भाग-1
3. श्रीप्रभोध
4. आदिलिङ्ग सूत्रावलि।
5. उत्सर्ग मयूर।
6. विद्यापीठ पंचांग।
8. संस्कार एवं शान्ति का रहस्य।

### 4.9- सहायक उपयोगी पाठ्य सामग्री-

1. स्मृति कौतुमभ।
2. श्री काशी विश्वनाथ पंचांग।
3. याज्ञवल्क्य स्मृति।

### 4.10 निबन्धात्मक प्रश्न-

1. कर्णवेर संस्कार का परिचय बतलाइये।
2. चूडाकरण संस्कार का परिचय बतलाइये।
3. उपनयन संस्कार का परिचय बतलाइये।
4. कर्णवेर संस्कार का मुहूर्त बतलाइये।
5. चूडाकरण संस्कार का मुहूर्त बतलाइये।
6- उपनयन संस्कार का मुहूर्त लिखिये।
7- कर्णविध संस्कार का महत्त्व लिखिये।
8- चूड़ाकरण संस्कार का महत्त्व लिखिये।
9- उपनयन संस्कार का महत्त्व लिखिये।
10- उपनयन संस्कार हेतु लम्मों का विचार का वर्णन कीजिये।
खण्ड - 3
विविध मुहूर्तें
दक्षिण – 1 वास्तु शान्ति, सूतिका स्नान, एवं अक्षराम्भ मुहूर्त

दक्षिण संरचना

1.1 प्रस्तावना
1.2 उद्देश्य
1.3 वास्तु शान्ति, सूतिका स्नान एवं अक्षराम्भ मुहूर्त
   अभ्यास प्रश्न
1.4 सारांश
1.5 पारंपरिक शब्दावली
1.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
1.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
1.8 निबंधात्मक प्रश्न
1.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई तृतीय खण्ड के प्रथम इकाई ‘वास्तु शालिनि, सूतिका स्नान एवं अक्षराम्भ मुहूर्त’ नामक शीर्षक इकाई से समाप्तित है। इससे पूर्व की इकाई में आपने चूड़ाकरण एवं नवसंस्कार का अध्ययन कर लिया है। यहाँ पर इस इकाई में आप ‘वास्तु शालिनि, सूतिका स्नान एवं अक्षराम्भ मुहूर्त’ का ज्ञान प्राप्त करें।

भारतीय सनातन परम्परा में हमारे प्राचीन आचार्यों ने मनुष्य जीवन को उत्तरोत्तर विकास के पथ पर अग्रसर करने हेतु निश्चित अवधि में उनके जन्म से लेकर तत्परयोग्य अवधि के चरणों को मानकी निश्चित संस्कार करने के लिये कहा है। यदि आचार्योंके उन संस्कारों को मनुष्य अपने जीवन में यदि करें तो निश्चय ही सर्वदा उसका कल्याण होगा। ‘वास्तु शालिनि, सूतिका स्नान एवं अक्षराम्भ मुहूर्त’ उन मुहूर्तों में से है।

इस इकाई में आप ‘वास्तु शालिनि, सूतिका स्नान एवं अक्षराम्भ मुहूर्त’ से सम्बन्धित विषयों का प्रस्तावित अध्ययन करें।

1.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के प्रथम आप जान पायेंगे कि –
1. वास्तु शालिनि किसे कहते है तथा उसको करने का शुभ मुहूर्त कब होता है।
2. सूतिका स्नान से क्या तत्पर्य है और वह कब शुभ होता है।
3. अक्षराम्भ मुहूर्त क्या है। तथा उसे करने का क्या महत्व है।
4. ‘वास्तु शालिनि, सूतिका स्नान एवं अक्षराम्भ मुहूर्त’ का वर्तमान स्वरूप क्या है।
5. उपयुक्त संस्कार को करने की विधि क्या है।

1.3 वास्तु शालिनि, सूतिका स्नान एवं अक्षराम्भ मुहूर्त

वास्तु शालिनि मुहूर्त- 
गृहप्रवेश के पूर्व दिन शुद्ध उपलब्ध होने पर अथवा तत्पर्य ही शुभ दिन में वास्तु पूजा – बलिक्रियादि का आचरण करना चाहिये।

तिथि – 1 कृष्णपक्ष, 2,3,5,7,10,11,12,13 शुक्लपक्ष।

वार – सोमवार, बुधवार, गुरू, शुक्लवार।

नक्षत्र – अक्षिनी, रोहिनी, मृगशिरा, पुनर्वसु, पुष्य, उत्तरात्रय, हस्त,चित्रा, स्वाती, अनुराधा, मूल, श्रीवण, श्रीमद्या, शातिभिषा एवं रेवती।

उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय

168
कर्मकाण्ड एवं मुहूर्त ज्ञान

लक्ष्ण – कोई भी राशि लगाने जब 1, 2, 4, 5, 7, 9, 10, 11 वे भागों में शुभमंगल और 3, 6, 11 वे दुष्कर्म हों तथा 8, 12 वे सूर्य, मंगल, शनि राहु, केतु न हो।

सूत्रिका (प्रसुता) स्नान मुहूर्त – सूत्रिका स्नान जन्मदिन से एक सप्ताह के पश्चात ही अभिषेक है।

तिथि - 1 (कृ.) 2, 3, 5, 7, 10, 11, 13 (शु.) 15।

वार – सूर्य, मंगल एवं गुरु।

नक्षत्र – अधिनी, रोहिणी, मृगशीरा, उत्तरात्रय, हस्त, स्वाती, अनुराधा एवं रेवती।

लक्ष्ण - 2, 3, 4, 6, 7, 9, 12 लन्य राशि। लन्य सौभाग्य ग्रह से युत व दृढ़ हो तथा पंचम में ग्रह – राहिल्य हो।

अक्षराम्भ व विद्याम्भ मुहूर्त – बालक पाँच वर्ष की अवस्था में सम्प्राप्त हो जाने पर अधोर्णित विशुद्ध दिन को विविधानायक, ग्राहाद, लक्ष्मीनारायण, गुरु एवं कुलदेवता की पूजा के साथ उसे लिखने पड़ने का श्रीगणेश करवाना चाहिए। अर्थात् अक्षराम्भ संस्कार करवाना चाहिए।

मास – कुम्भ संक्रान्ति वर्षिक तथा उत्तरार्ध मास।

तिथि – शुक्लपक्ष की 2, 3, 5, 7, 10, 11, 12।

वार – सोमवार, बुधवार, गुरुवार एवं शुक्रवार।

नक्षत्र – अधिनी, आदर्श, कुबरसु, पुष्य, हस्त, चित्रा, स्खाली, अनुराधा, ज्येष्ठा, अभिनंदन, श्रवण एवं रेवती।

लक्ष्ण - 2, 3, 6, 9, 12 लन्यराशि। अष्टम भाव ग्रहरत्न होना चाहिए।

वर्णमाला गणितादि में बालक परिपक्व हो जाने पर भविष्यत आजीविका प्रदात्री कोई विशेष या सर्वसामान्य विधाय का शुभआयन करना चाहिए। अप्राप्त रूप से विद्याम्भ मुहूर्त –

मास – भद्रकाल के अतिरिक्त उत्तरार्धमास।

तिथि – 2, 3, 5, 7, 10, 11, 13 आदि शुक्लपक्ष की तिथियाँ।

वार – रविवार, गुरूवार एवं शुक्रवार।

नक्षत्र – अधिनी, मृगशीरा, आदर्श, कुबरसु, आश्वेषा, तीनों पूर्व, हस्त, चित्रा, स्खाली, श्रवण, धनिण्या एवं शतभिषा।

लक्ष्ण - 2, 5, 8 राशि लन्यजब केन्द्र त्रिकोण में शुभग्रह हो तथा 3, 6, 11 वे क्रूर ग्रह हों।

आचार्य रामदेवजी ने मुहूर्तसिद्धांताणि में प्रतिपादित किया है -

प्रसूता – स्नान का मुहूर्त –
बुधवार, रोमणी, मृगिशरा, हूदभ त एवं 8/6/12/4/9/14 इन तिथियों में प्रसुति का स्नान शुभ नहीं है।

प्रसुतिका स्त्री के जलपूजन का यहूतर्ख –

कबीरज्ञात वैराधिमासे न पौश जल्पूजेत्यूतिकामासपूर्ति।

शुभ और वृहद्वितीय के अस्त, चेत्रमास, अधिकमास, पौश इनमें जल – पूजा का त्याग करना चाहिये।

अक्षराम्म मुहूर्तः

गणेश विश्वुद्धाग्रमा: प्रमून्त्य पंचमाबद्धकः।

तिथिः श्यामज्ञातिश्चिह्नूषु श्यामकुलक्रेणुः।

लघुअनिलान्त्यभादितीशतक्षमित्रभः।

चरोनसतनौ श्रीशृणिपिण्यः सदा दिने।

गणेश, विश्वुद्ध, चरमवती और लूधामी का पूजन करके पंचम वर्ष में 11112151126161513 तिथि में, उत्तरायण सूर्य हो और हस्त, अश्विनि, पुष्य, अभिषित, श्रवण, वृष्टित, रेवती, पुनर्वशु, आदिव, चित्रा, अनुराधा इन नक्षत्रों में चर 1,4,7,10 लम रहित अन्य लमों तथा शुभग्रह के वारों में बालक का अक्षराम्म करना शुभ है।

विद्यार्थ मुहूर्तः

मुगलकरामघुरुद्धपुर्नीमूलपुर्विकामाये

युरुढङ्कर्मजीविविसिद्धि पशुपशुरत्रिकः।

श्यामज्ञातिश्च मून्त्यश्यामन्त्रित्रभमे परि: शुभेश्वरित्यूतमा श्रीरामके त्रिकोणेत्रः स्मृतः।
मूर्तिगुरु, आद्री, नृत्यतु हस्त, चित्र, स्वाति, श्रवण, धनिष्ठा, शालता, अधिनी, मूल, तीनों पूर्वों,
पुष्य, आर्द्रेश्वर, तीनों उत्तर, रोहिणि, अनुराधा और ग्रेवी इन नक्षत्रों में – रवि, बुध, गुरू, शुक्रवारों
में 6,5,3,11,12,10,2 विविधायों में तथा शुभमहार 9,5,1,4,7,10 वे स्थान में हो तब बालक को
विद्यार्थी करना शुभ है।

वास्तुपुरुष स्वरूपम् –
पुरा कृतयुग नारदमहासुतं समुत्थिम।
व्यायमान शरीरं सकलं भुवं ततः॥

तददेवव विश्वमं देवा गता: सन्त्रा भयावृता:।
ततस्तैः क्रोधस्यनतैः गृहीत्वा तमथासुमु॥

विनिक्षिप्तमधोक्त्रं स्थितास्त्रैव ते सुरा:।
तमेव वास्तुपुरुषं द्रास्तः कल्पितवत्वान् व्यायम॥

सत्यं ग्रह के आरम्भ में एक महान प्राणी उत्पन्न हुआ, जो अपने विशाल शरीर से समस्त भुवनों में
व्याप्त था, इसको देखकर देवराज इंद्र सहित सभी देवता भय एवं आश्चर्य चकित थे, तदनं
उन्होंने क्रृप होकर उस असुर को पकड़कर उसका शियर नीचे करके भूमि में गाड़ दिया और स्वयं वहाँ
खड़े रहे। इसी का नाम द्रास्तः ने वास्तुपुरुष रखा।

मनुषय जब अपना गृह निर्माण करता है, तो उसे गृहनिर्माण प्रक्रिया में वास्तुशान्ति का ध्यान रखना
चाहिये अर्थात् जब वास्तुशान्ति करवाकर वह गृह में प्रवेश करता है, तो निरचन ही गृह में बाहरी
आवरण से उसकी रक्षा होती है।

अभ्यास प्रश्न –

1. वास्तु शान्ति किन वारों में अशुभ होता है
   क. सोम ख. बुध ग. गुरू घ. शनि
2. यूजिका से तापयत है।
   क. सूर ख. प्रसुता सती ग. सही घ. कोई नहीं
3. अष्टराम्म किन वारों में प्रशान्त होता है।
   क. शनि ख. मंगल ग. रवि घ. शुक्र
4. अर्क किसका पर्याय है।
   क. मंगल ख. सूर ग. गुरू घ. कोई नहीं
5. त्रिकोण होता है।

उत्तराखण्ड मुक्ति विश्वविद्यालय 171
1.4 सारांश

इस इकाई में पाठकों के ज्ञानार्थ वास्तु शान्ति मुहूर्त, सूतिका नाम एवं अक्षराम्भ मुहूर्त की चर्चा की गयी है। वास्तु शान्ति का सम्बन्ध गृहनिर्माण से है तथा सूतिका नाम का जिस स्त्री का प्रसव हुआ हो उससे है तथा अक्षराम्भ का सम्बन्ध शिशु को प्रथम बार अक्षर बोध कराने वाला संस्कार से है। इन तीनों की आवश्यकता मनुष्य को अपने जीवन में पड़ती है। वास्तु: आचार्य द्वारा संस्कारों का निर्माण हो मानवों के सर्वार्थमुखी विकासार्थ किया गया है।

1.5 शब्दावली

वास्तु = गृह के रक्षा कराने वाले देवताओं

सूतिका = जिस स्त्री का पुत्र उत्पन्न हुआ हो, और उससे लगने वाला अशीच।

अक्षराम्भ संस्कार = शिशु को प्रथम बार अक्षर का ज्ञान कराने हेतु किया जाने वाला संस्कार।

षोडश संस्कार = मानव जीवन में जीवन से मृत्यु पर्यन्त किये गये विभिन्न (16 प्रकार के ) संस्कार

1.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. घ
2.ख
3. घ
4.ख
5. ग

1.7 सन्दर्भ ग्रन्थसूची

1. संस्कारदीपिक - महामहोपाध्याय श्रीनिवासानंद परवतीय
2. पारसकर्गृहसूत्र - आचार्य पारसकर (गदाधर भाष्य)
3. हिन्दूसंस्कारविविधः - डा. राजबली पाणडेय

1.8 निबंधात्मक प्रश्न

1. वास्तु शान्ति मुहूर्त संस्कार का परिचय प्रस्तुत करें।
2. सूतिका एवं अक्षराम्भ से आप क्या समझते हैं। विस्तार से वर्णन कीजियें।
इकाई – 2 वर्णरण एवं विवाह मुहूर्त

इकाई संरचना

2.1 प्रस्तावना
2.2 उदेश्य
2.3 वर्णरण एवं विवाह मुहूर्त परिचय
   अभ्यास प्रश्न
2.4 सारांश
2.5 पारिभाषिक शब्दावली
2.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
2.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
2.8 निबन्धात्मक प्रश्न
2.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई तृतीय खण्ड के द्वितीय इकाई 'वर्णण एवं विवाह मुहूर्त' नामक श्रीमंत इकाई से समन्वित है। इससे पूर्व की इकाई में आपने वास्तव शान्ति, सूतिका एवं अशाराम मुहूर्त का अध्ययन कर लिया है। यहां पर इस इकाई में आप 'वर्णण एवं विवाह मुहूर्त' का ज्ञान प्राप्त करेंगे।

भारतीय सनातन परम्परा में हमारे प्राचीन आचार्यों ने मनुष्य जीवन को उल्लोहातर विकास के पथ पर अग्रसर करने हेतु विशिष्ट अवधि में उनके जन्म से लेकर समय—समय पर विभिन्न संस्कार करने के लिये कहा है। यदि आचार्यों के उन संस्कारों का मनुष्य अपने जीवन में यदि करें तो निर्दय से सविदा उसका कल्याण होगा। 'वर्णण एवं विवाह मुहूर्त' उन मुहूर्तों में से है।

इस इकाई में आप 'वर्णण एवं विवाह मुहूर्त' से समन्वित विषयों का विस्तारपूर्वक अध्ययन करेंगे।

2.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पर्चात्र आप जान पाएंगे कि—

1. वर्णण किसे कहते है तथा उसको करने का शुभ मुहूर्त कब होता है।
2. विवाह का तत्त्वत्थत्व है।
3. वर्णण एवं विवाह का महत्व क्या है।
4. 'वर्णण एवं विवाह मुहूर्त' का वर्तमान स्वरूप क्या है।
5. उपयुक्त संस्कार को करने की विधि क्या है।

2.3 वर्णण एवं विवाह मुहूर्त' परिचय

विवाह मुहूर्त-

भारतीय आध्यात्मिक समाज वायवस्था के अन्तर्गत गृहस्थाश्रम ही संवृत्तकृष्ट माना गया है।

इसका कारण है कि स्वरूप सृष्टि का प्रादुर्भाव ही स्त्रीधारा और पुरुषधारा के पुनःसंगम से हुआ है। यह निर्विवाद सत्य है कि परमपिता परमात्मा ने स्वयं को ही, विष्णु सृजन के उद्देश्य से नर और नारी स्वरूप दो लम्बूरूप खण्डों में मूर्तिमान किया। वामांग को स्त्रीरूप एवं दक्षिणांग को पुरुष रूप में प्रचलित किया। शाने: शाने: इन धाराओं ने एक विरासत जन-समूह को खड़ा किया। इस प्रकार, आविष्कृत असंख्य नर नारियों ने संस्कृति के आध्यात्मिक विकास के साथ अपने समकक्ष प्रतिष्ठानदी के प्रवरण की आवश्यकता का अनुभव किया। अन्तर्विषयक, विवाह प्रथा का जन्म हुआ जो आगे
बाली पीड़ितों के लिये अनुपयोगी सिद्ध हुआ। विवाह ही गृहस्थापन की आधारशिला है, और उसी माध्यम से मानव, देवपितामह रूप न प्राप्त कर विवाह को प्राप्त करता है।

विवाह मास – मिथुनकुंभम्पुर्णा वृषाजगे मिथुनगोपिय त्रिलवे गुदे।

अलीमुग्ध जगते करपीडनं भवित काित/ऊथचस्तु पौष मधु/ऊपूं ि/प।।

वाली पीढ़ीं के लिये अनुपयोगी सिद्ध हुआ। विवाह ही गृहस्थापन की आधारशिला है, और उसी माध्यम से मानव, देवपितामह रूप ने प्राप्त कर विवाह को प्राप्त करता है।

विवाह नक्षत्र – रेवती, तीनों उत्तरा, रोहिणी, मृगशिरा, मधा, मूला, अनुग्रह, हस्त, स्वाती आदि नक्षत्रों में विवाह कर सुभ कहा गया है।

पक्ष व तिथि गुदे – शुक्ल पक्ष के प्रति आचार्यो का सभी शुभ कार्यों के सन्दर्भ में विवाह गुदा कहा गया है। कृष्ण पक्ष के भी आत्मक तक मतान्तर से दर्शी तक तिथि जा सकता है। तिथियों के विषय मे महत्व नहीं दिया जाता है क्योंकि जहाँ तक सम्बन्ध हो तिथि को चढ़ना चाहिए। लेकिन प्रचलन ऐसा है कि चतुर्दशी, अमावस्या व शुक्ल प्रतिपदा को ही प्राय: छोड़ा जाता है।

वर वरण मुहूर्त – तीनों उत्तरा, तीनों दूर्त, कृतिका, रोहिणी में शुभ वार व शुभ तिथि में उत्तम शकुनादि देखकर, चन्द्रबल व वरण तरह की दोनों को शुभ होने पर वर का वरण करना चाहिए। इसे टिका, रोकना या ठाका आदि भी कहा जाता है। कन्या का पिता तिलक उक्त महूर्त में लड़की को चचन या चाचन देता है।

कन्या वरण मुहूर्त – तीनों पूर्व, श्रवण, अनुग्रह, उ.स., कृतिका, धनिष्ठा, स्वाती नक्षत्रों में या विवाह के नक्षत्रों में पूर्ववत् शुभ तिथि, शुभ वार, तथा में पूर्वाभिमुख या उत्तराभिमुख होकर कन्या को उत्तम वस, खजूर, फल, मिठान, व आपूर्णता से बर की माता व बहनें बरण करें। वर के द्वारा कन्या को अंगूठी पहनाते समय भी उक्त महूर्त व तिथि का अनुसरण करना चाहिए।

गृहस्थापन को चारों आद्रों का मूलाधार बताया गया है। लेकिन कहा गया है कि भली प्रकार से अपनी विद्या का समाप्त कर अर्थात् युवावस्था में ही विवाह कर गृहस्थापन में प्रवेश करना चाहिए।

विवाह का समय –

विवाहो जन्मत: स्त्रीणां गुमेदये पुनर्पीत्रः।

अयुधे श्रीप्रदुः पुंसां विपरिते तु मृत्युः।।

जन्म से सम संस्कृत वर्षों में कन्या का और विषम वर्षों में पुरुष का विवाह करना शुभप्रद है, इससे विपरीत होने पर अशुभ होता है।
विवाह के आठ भेद - ब्राह्म, प्राजापत्य, देव, आर्य, गान्धवर्म, आमुर, राक्षस व पैशाच ये आठ प्रकार के विवाह होते हैं। इनमें पहले चार प्रकार को श्रेष्ठ माना गया है। गान्धवर्म विवाह प्रेम विवाह है, जो महत्व श्रेणी का माना गया है तथा रोश तीन प्रकार अधर्म या निकृष्ट है।

विवाह के मास - माघ, फाल्गुन, वेशाख, ज्येष्ठ, आषाढ़ व मागशीष। ये सभी मास विवाह के लिये शुभ माने गये हैं।

पक्ष व तिथि शुद्ध - शुक्ल पक्ष के प्रति आचार्यों का सभी शुभ काय्यों के सन्दर्भ में विशेष झुकाव होता है। कृष्ण पक्ष की भी अत्यधि तक मतान्तर से दशमी तक लिया जा सकता है। तिथियों के विषय में विशेष महत्व नहीं दिया जाता है। तथापि जहाँ तक समय हो रिक्त तिथि को छोड़ना चाहिये। लेकिन प्रचलन ऐसा है कि चतुर्दशी, अमावस्या व शुक्ल प्रतिपदा को ही प्राय: छोड़ा जाता है।

अभ्यास प्रश्न –

1. निम्नलिखित में विवाह का नक्षत्र नहीं है
   क. रेवती ख. तीनों उत्तरा ग. रोहिणी घ. अधिनी

2. वर वरण हेतु उपयुक्त नक्षत्र है
   क. भरणी ख. मृगशिरा ग. तीनों उत्तरा घ. श्रवण

3. जन्म से सम संहित वर्षों में विवाह करना किनके लिये शुभ होता है
   क. कन्या का ख. वर का ग. कन्या एवं वर दोनों का घ. कोई नहीं

4. कुज दोष से तात्पर्य है
   क. मंगल दोष ख. सूर्य दोष ग. गुरु दोष घ. कोई नहीं

5. तारा का गुण कितना होता है
   क. 3 ख. 4 ग. 5 घ. 6

विवाह लग्न प्रारंभा –

भार्या विवर्णकरण शुभस्वर्लयुक्ता
शीलं शुभं भवति लन्नयशेन तस्यः।
तस्मानिहिन्द्रासम्यः परिचिन्तनते हि
तन्त्रस्तमयुपब्दताः सुरस्वतिधर्मः॥

सुशील स्वभाव की स्वीकृया (धर्म, अर्थ, काम) को देने वाली होती है, परं च उसका शील और सत्त्वार्थ लग्न के वर से शुभ होता है, क्योंकि पुत्र, शील, और धर्म विवाहलन के अधीन है, अतः
विवाह समय का विचार किया जाता है

वर के गुण

कुल च शीतल का च नाथता के चिराण्य च विटरवर्गांच।
वरे गुणान्तर परिवर्त्य देया कन्या वुधसः शैतंत्रिकीयम्॥
कन्या दान के पुर्व वर का कुल स्वभाव सनाथता विद्वान धन शरीर तथा आयु इन सात गुणों की परीक्षा कर लेनी चाहिये।

कन्या के गुण

अनन्यपूर्वक कन्यामसपिण्डं यथायथसिम्।
अरोपिण्यो नात्मकत्वमसमान्योग्योत्रजाम्॥
जिस कन्या का अन्य किसी ने दान अथवा उपभोग न किया हो सापिण्डय न हो वर से उप्रत तथा शरीर में कम हो निरोगिण्यो सोदर बन्धुयुक्त एवं भिन गोत्र की कन्या देखकर विवाह निक्षित करना चाहिये।

विवाह के लिये मेलापक विचार –

वरषों वषयं तथा तारा योगिश्च प्रहमनकम्।
गणमेत्रम् भकूटं च नाठी चैतेणुं पुरातिकाः॥
वर्ष, वशय तारा योगिश्च प्रहमनकम् गणमेत्रम् भकूटं च नाठी चैते गुणप्रतिकाः॥।
अर्थानुप्राविं वर्षम् न जीवित॥
एवं विधे कुजे संस्थे विवाहो न कदाचन।
कायाँ व गुणवाहल्ये कुजे या तांचूणे द्वारः॥।

1.4.7.8.12 स्थानों में यदि मंगल कन्या की जन्मकुण्डली में हो तो पति का और यदि वर की जन्मकुण्डली में हो तो स्त्री पातक होता है। इसीलिये इस प्रकार के योग वाली कन्या को मंगली और वरी का मंगल कहते है। यदि वर या कन्या किसी एक की कुण्डली में वह योग हो तो हानिकारक है और यदि दोनों की कुण्डली में समान योग हो अथवा अधिक गुण मिलते हों तभी विवाह करना चाहिये।

मंगल का परिहार –

उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय

177
वर और कन्या किसी एक की कुंडली में उपयुक्त अनिष्टकर्ता मंगल हो और दूसरे को उन्हीं राशियों में शनि अथवा कोई भी पापघात हो तो उक्त अनिष्ट का नाश होता है। इस प्रकार चन्द्र कुंडली से भी विचार करना चाहिए। यदि वर - कन्या दोनों की कुंडली में परस्पर दोष्य का परिहार हो तभी विवाह सम्बन्ध श्रेष्ठ कहा जाता है।

विशेष - तम, दान, धन, वृद्धी, मकर, मेष, अग्नि, शिव, एवं इसके अनुसार वर एवं कन्या दोनों की राशि का मंगल हो तो दोनों राशियों का नाश होता है।

विवाह में ज्येष्ठसमय का निदेश तथा परिहार -

ज्येष्ठ मध्यम संस्कार त्रिज्येष्ठ स्थानान्तर का करार। केचित्तूर वहिंग प्रोज्येष्ठमहावास्यामयं ज्येष्ठोऽस्यावथाय:।

दो ज्येष्ठ मध्यम अर्थात् दोनों (वर - कन्या) में से एक प्रथम गभूतपन और ज्येष्ठ मास भी हो तो है। तीन ज्येष्ठ (ज्येष्ठ वर, ज्येष्ठ कन्या तथा ज्येष्ठ मास) विवाह में कारण शुभ नहीं है। कुछ आचार का यह भी मानना है कि यदि कृतिः में सूर्य हो तो विवाह का त्याग करना चाहिए तथा आदि गर्भ अर्थात् प्रथम सन्तान का परस्पर विवाह अनुशंसा करता है।

2.4 सारांश

इस इकाई में पाठकों के ज्ञानार्थ वर वरण एवं विवाह मुहूर्त की चर्चा की गयी है। इससे पूर्व की इकाईयों में आपने वालु शान्ति मुहूर्त, सूर्यका स्नान एवं अक्षाराम्भ मुहूर्त का अध्ययन कर लिया है। अब इस इकाई में आप वरण एवं विवाह को जानने। वर वरण से तापस्तर वर को कन्या के पिता के द्वारा विवाहार्थ वरण करने से है। इस संस्कार में वर को स्वशक्ति के अनुसार कन्या का पिता वर को वस, अलंकार, फल, मिश्नान इत्यादि से सुशोभित कर विवाह के लिये वरण करता है। वर वरण के पश्चात् औसत ही कन्या का वरण होता है पश्चात फिर उनका विवाह संस्कार किया जाता है।

2.5 शब्दावली

वरण = छेका, तितक, टीका।
विवाह = कन्या एवं वर को जीवन भर के लिये रिश्ते में बौधने वाला बनन।
त्रिज्येष्ठ = क्रम में ज्येष्ठ सन्तान, ज्येष्ठ मास, ज्येष्ठ नक्षत्र।
गर्भीत्यन्त = गर्भ से उत्पन्न।

2.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. घ
2. ग
3. क
4. क
5. क

2.7 सन्दर्भ ग्रन्थसूची

1. संस्कारदीपक - महामहोपाध्याय श्रीनित्यानन्द परवतीय
2. पारस्परिपुरुष - आचार्य पारस्पर (गदाधर भाष्य)
3. हिन्दुस्मर्तविधि: - डा. राजबली पाण्डेय

2.8 निवन्धात्मक प्रश्न

1. वरण से क्या तात्पर्य है। वर वरण को स्पष्ट कीजिए।
2. विवाह से आप क्या समझते है। विस्तार से वर्णन कीजिए।
इकाई – 3  गृहरम्भ एवं गृहप्रवेश मुहूर्त

इकाई की संरचना

3.1 प्रस्तावना
3.2 उद्देश्य
3.3 गृहरम्भ एवं गृहप्रवेश मुहूर्त
   अभ्यास प्रश्न
3.4 सारांश
3.5 पारिभाषिक शब्दावली
3.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
3.7 सन्दर्भ प्रन्थ सूची
3.8 निबन्धात्मक प्रश्न
3.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई तृतीय खण्ड की तृतीय इकाई ‘गृहरूपम एवं गृहप्रवेश मुहूर्त’ नामक शीषक इकाई से समन्वित है। इससे पूर्व की इकाई में आपने वर्तमान एवं विवाह का अध्ययन कर लिया है। यहां पर इस इकाई में आप ‘गृहरूपम एवं गृहप्रवेश मुहूर्त’ का ज्ञान प्राप्त करेंगे।

इस संसार में मानव को अपना जीवनयापन करने के लिये उनकी कुछ मूलभूत आवश्यकताएँ होती हैं – जिनमें प्रमुख हैं – भोजन, वस कंव आवास। प्रस्तुत इकाई का सम्बन्ध आवास से है। मानव जहाँ अपने परिवार के साथ निवास करता है उसे गृह कहते हैं एवं उसके निर्माण की क्रिया को गृहनिर्माण एवं निर्माण के पश्चात् उसमें प्रथम बार प्रवेश करने की क्रिया गृहप्रवेश कहलाता है।

गृहरूपम एवं गृहप्रवेश करना कब शुभ होता है और कब अशुभ इसका ज्ञान आप प्रस्तुत इकाई में करेंगे।

3.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पर्यायों आप जान पाएंगे कि –

1. गृहरूपम क्या है?
2. गृहप्रवेश कैसे होता है?
3. गृहरूपम एवं गृहप्रवेश का महत्व क्या है?
4. ‘गृहरूपम एवं गृहप्रवेश’ का वर्तमान स्वरूप क्या है?
5. उपर्युक्त संस्कार को करने की विधि क्या है?

3.3 गृहरूपम एवं गृहप्रवेश मुहूर्त परिचय

गृहरूपम मुहूर्त –

मानवीय जीवन काल को ऋषि मुनियों ने चार आश्रमों में विभाजित किया है – ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ एवं सनातन इनमें गृहस्थश्रम को सर्वोच्च माना गया है। गृहस्थश्रम की सुखसम्पन्नता के लिये स्वीकार – निकेतन का होना परमाश्रयक है। क्योंकि स्वातंत्र्यक अधिकार प्राप्त गृह में करिष्ट्यमाण कर्म अपना यथेष्ट फल नहीं देते।

जैसा कि भविष्यपुराण में लिखा है –

गृहस्थश्रम क्रिया: सर्वा न सिद्धवत्त गृहं बिना।

परसों क्रृता: सर्वा: श्रीत: स्मार्तिक्रिया: शुभा: ॥

निष्काला: स्तुथ्य तस्तासा भूमिच: फलममुने ॥
अत: स्वाधिकार प्राप्त निवास स्थान का निर्माणसम्बन्ध मुहूर्त का यहाँ उल्लेख किया गया है।

गोचर गुहिद - गृहारम्भ मुहूर्त संख्य में सबसे प्रथम गृहस्थान की जन्मसार्थी से गोचरस्थ सूर्य, चन्द्र, गुरु और गुहिद का प्रबल होना अनिवार्य है।

मास -

चैत्र - मेषार, वैशाख - सर्वदा, ज्येष्ठ वृषार, आषाढ़ - कर्क्षमास, श्रावण सर्वदा, भाद्रपद विषारक, आषाढ़ तुला का सूर्य, कार्तिक वृषिक राशिस्थ सूर्य, मार्गशीर्ष सर्वदा, पौष और मकर पर्वत सम्पूर्ण मास पर्वत धन्यकर्न न हो तो पौष अग्रभ है।

गृहारम्भ के योग -

1. रोहिणी, मृणालिका, पुंवसु, तलेय, तीनों उत्तर, पूर्व, श्रवण आदि नक्षत्र हो तथा गुरूचर मिन हो तो गृह आरम्भ करने से गृह में धन - सम्पति तथा संतति का पूर्णसुख प्राप्त होता है।

2. अश्विनी, रोहिणी, मृणालिका, उ. फार., हस्त, चित्रा, नक्षत्र यदि बुधवार के रूप में भी हो तो उस दिन बनाया हुआ गृह में सुख - पुनार्थ सिद्धिदायक होता है।

3. अश्विनी, आद्री, चित्रा, विशाखा, बन्धुद्रा, शतिभुषा, आदि नक्षत्र गुरूचर युत हो तो उस दिन गृहारम्भ धन - धान्यदायक होता है।

4. भरणी, स्वाती, अनुराधा, ज्येष्ठा, पू.भा., उ. भा., तथा शानिवार के संगम में शुभ्र किया हुआ गृहारम्भ भूत - प्रेतों से अधिकृत रहता है।

गुरू - शुक्रस्त, कृष्ण पक्ष, निषिद्ध मास, रिवात, व्यंजन, आदि नक्षत्र गुरूचर युत हो तो उस दिन गृहारम्भ में गर्भित है।

विवाहों के रूप में विद्यमान त्रिकोण दोषों की भी विद्यमानता गृहारम्भ में बर्ज्य है।

शिलान्यास मुहूर्त - गृहारम्भ की शुभ वेता में खिनत नीच को प्रस्तुत शिलान्यास मुहूर्त के दिन विधिनिष्ठ पद्धतियों से पूर्ण चार चाहिए। तद्भव ग्राम्य तिथिदायिन गुहिद इस प्रकार है -

तिथि - 1 कृ., 2,3,5,7,10,11,12,13 शु।

वृश्चिक - सोमवार, बुधवार, गुरूचर एवं विनिवार

नक्षत्र - अश्विनी, रोहिणी, मृणालिका, पुण्य, तीनों उत्तर, हस्त, श्रवण एवं रेवती।

विशेष - सयमक समय में ब्रह्म, वासुपुरुष, पंचपोष्पाल, कूम्भ, गणेश तथा स्थान - देवताओं का शिलान्यास पूर्वक पूजन एवं स्युभ पूजा वाहनाधिकार के साथ तथा स्थान एवं गंगादि पूजन स्थानों की रेती सहित मुहूर्त शिला का उचित कारण में स्थापना करें। तदन्तर, प्रकाशन क्रम से अन्य पद्धतियों को
जमाना चाहिये।

जलाशय खनन दिशा एवं मुहूर्त –

ग्राम अथवा शहर से पूर्व और पश्चिम में खुदा हुआ जलाशय स्वादु और उच्च कोटि का जल प्रदान करता है – ऐसा कबी कालिदास का मत है। परन्तु गाँव के आनेर, नैरुत्थ और बायव्य कोण में जलाशय निर्माण सवृंथा अरुंध है। तथा च –

आनेवेशक दिशा के प्रामाण्य पुरस्कर्त व भवति कृपः।

नित्य स कोरति भवन ताह वा मानस प्राच।

नैरुत्थकोणे बालक्षण्यं चन्द्रिकाशयश्च वायव्ये॥

विभिन्न दिशाओं में स्थित जलाशय का फल –

<table>
<thead>
<tr>
<th>दिशा</th>
<th>पूर्व</th>
<th>आमेर</th>
<th>दक्षिण</th>
<th>नैरुत्थ</th>
<th>पश्चिम</th>
<th>बायव्य</th>
<th>उत्तर</th>
<th>ईशान</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>फल</td>
<td>एश्वर्य</td>
<td>पुत्र हानि</td>
<td>क्री भंग</td>
<td>निधन</td>
<td>संपति</td>
<td>श्रातु भय</td>
<td>सौंड</td>
<td>पुष्प</td>
</tr>
</tbody>
</table>

जलाशय खनन मुहूर्त -

सामान्य रूप से कुंआ, तालाब, बावड़ी, आदि समस्त जलस्थानों का शुभारंभ निम्न मुहूर्त में शास्त्र सम्मत है।

मास – वैशाख, ज्येष्ठ, आषाढ़ (मिथुनार्क), माघ, फाल्गुन

तिथि – गुरु 2,3,5,7,10,11,12,13।

वार – सोमवार, बुधवार, पुर्ववार, शुक्रवार

नक्षत्र – अधिनी, पोषिणी, मृगिषार, पुन्यशु, तीनों उत्तरा, हस्त, चित्रा, स्वाती, अनुगाय, मूल, श्रवण, धनिष्ठा, शतभूषा, रेषति।

लम – 2,4,7,9,10,11,12 आदि राशि लम

तथा शुभ ग्रहों के नवांश। लम में कुंभ, गुरु दसवं शुक्र, पापग्रह निर्वाल तथा शुभ ग्रह सबल हो।

विशेष – गुरु, शुक्रस्त, गुरुवित्य, दक्षिणायन, गुरु – शुक्र का शीशाव पिव बार्त्तिक, नयोदशातमक पक्ष, भूषण, स्वाधुमास तिथि, भद्रा, कुंयोगादित्वाच्च।

वातुल शान्ति मुहूर्त –

गृहप्रवेश के पूर्व दिन पंचांग शुभि उपलब्ध होने पर अथवा तपूर्व ही शुभ दिन में वातु पूजां – बलिक्षणादि का आचरण करना चाहिये।

तिथि – १ कृष्णपक्ष, 2,3,5,7,10,11,12,13 शुक्लपक्ष।

वार – सोमवार, बुधवार, गुरु, शुक्रवार।
नक्षत्र – अच्छी, रोहिणी, मृगशिरा, पुनर्वसु, पुष्य, उत्तराष्ट्र, हस्त,चित्रा, स्वाति, अनुराधा, मूल, श्रवण, घनिष्ठा, शतभीषा एवं रेबती।

लम्न – कोई भी राशि लम्न जब 1,2,4,5,7,9, 10,11 वें भागों में सुभ्रग्रह और 3,6,11 वें पापग्रह हों तथा 8,12 वें सूर्य, मंगल, रात्रि रहे, केवल न हो।

नूतन गृहप्रवेश महत्त्व –

मास – ज्येष्ठ, बैशाख, माघ, फाल्गुन - (उत्तम) , कार्तिक, मार्गशिर्ष – (मध्यम), परशु कुम्भ संक्रान्ति में माघ फाल्गुन भी हो तो भी गृहप्रवेश न करें। कदाचित् अयथवश्यक होने पर मकर, मीन, मेष, वृष और तुतुंच संक्रान्तियों में त्रयाज्य चान्द्र मास (चैत्र, बीष्म) भी गृहप्रवेशार्थ प्राप्त है।

तिथि – 1 कृ., 2,3,5,7,10,11,13 शु।

दिनांक के अनुरुप गृहप्रवेशोपयोगी तिथियाँ -

<table>
<thead>
<tr>
<th>दिन नाम</th>
<th>पूर्व</th>
<th>पश्चिम</th>
<th>उत्तर</th>
<th>दक्षिण</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>शुभ तिथियाँ</td>
<td>5,10,15</td>
<td>2,7,12</td>
<td>3,8,13</td>
<td>1,6,11</td>
</tr>
</tbody>
</table>

जीणांदि गृह प्रवेश महत्त्व -

पुरातन, दूसरे के द्वारा निर्मित, अथवा बहु वृष्टि, बाढ़ादि देवी अथवा राजप्रकोप से विनष्ट, जीणा, बाढ़ी, उत्तराविकारित गृह में प्रवेश करने के लिये प्रस्तुत महत्त्व विचारणीय है।

मास – श्रवण, कार्तिक, मार्गशिर्ष तथा नूतन गृहप्रवेशोक्त मास।

वार – सोमवार, बुधवार, गुरुवार एवं शनिवार।

तिथि – 1 कृ., 2,3,5,6,7,8,10,11,12,13 शु।

नक्षत्र – रोहिणी, मृगशिरा, पुष्य, उत्तराष्ट्र, विष्णु, हस्त,चित्रा, स्वाति, अनुराधा, श्रवण, घनिष्ठा, शतभीषा एवं रेबती।

विशेष – प्रस्तुत कर्म में दक्षिणायन सूर्य, गुरु, शुक्र का अस्त बाल्य वार्षिक, सिंह मकरस्य गुरु एवं लुप्त संवतसारादि दोषों का चिंतन न करके उपरोक्त विश्वास काल तथा नूतन गृहप्रवेशोक्त लम्न बल का ही चिंताकरें। तथ्यात् भ्रद्र, व्यापत, वैधृत, मासांत, स्थोत्र दिनात्मक पक्ष, क्षणद्रि तिथि एवं नाम राशि से निर्बन्ध चान्द्र तो परिवर्त्य ही है।

अभ्यास प्रश्न

1. आश्रमों की संख्या कितनी है।
क. 3 ख. 4 ग. 5 घ. 6

2. आश्रमों में आश्रम माना गया है।

उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय 184
क. प्रहरचर्य  ख. वानप्रस्थ  ग. गृहस्थाश्रम  घ. वानप्रस्थ

3. निमित्तिक्षित में बास्तु शान्ति के लिये शुभ वार है ।

क. मंगल  ख. शनि  ग. रविवार  घ. शुक्र

4. जीवन से तात्पर्य है ।

क. पुराण  ख. नवीन  ग. अवांछीन  घ. कोई नहीं

5. गृहप्रवेश कितने प्रकार का होता है ।

क. 3  ख. 4  ग. 5  घ. 6

नवदुग/ऊथचअ /ऊ्55वेश मुह/ऊ्ंः/ऊथ9ं त/ऊथचअ –

मास – वैशाख, ज्वेष्ट, माघ एवं फाल्गुन ।

तिथि – गुरुत्र 2,3,5,7,10,11,13

चार – सोमवार, बुधवार, गुरुवार, शनिवार एवं शुक्रवार

नक्श्र – रो. पु. पीतो उत्तर, हस्त, चित्रा, स्वती, अनुराधा, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिष, रेवति ।

लन्न – 2,5,8,11 आदि लन्न ।

विशेष – गुरु – गुरुकास्त, भव्य, निर्बल चन्द्र तथा अनिष्ठ वर्ग परिवर्जनीय ।

गृहप्रवेश विचार – गृहप्रवेश तीन प्रकार का होता है । अयूर्व, सपूर्व व इन्द्र प्रवेश, ये तीन मृदु है ।

नूतन गृह में प्रवेश करना अपूर्व प्रवेश होता है । यात्रावि के पर्यावरण गृह में प्रवेश करना सपूर्व कहलाता है । जीणान्द्रार जिसे यात्रा मकान में प्रवेश का नाम इन्द्र प्रवेश है । इसने मुख्यतः अयूर्व प्रवेश का विचार यहां विशेष रूप से करता है ।

माघ, फाल्गुन, वैशाख, ज्वेष्ट मास में प्रवेश उत्तम व कार्यक, मार्गशीर्ष में मध्यम होता है ।

माघफाल्गुनवैशाखज्वेष्टमाससपूर्व शोभन: ।

प्रवेशो मध्यमो ज्येष्ठ: सौम्यकार्यकार्यमायो: ।।

प्रवेशो ज्येष्ठ: मध्यमो सौम्यकार्यकार्यमायो: ।।

कृष्ण पक्ष में दसाष्टी तिथि तक एवं गुरुत्र पक्ष में चन्द्रीयामन्तर ही प्रवेश करना चाहिये । जीणान्द्रार बाले गृहप्रवेश में दक्षिणावन मास शुभ है । सामान्यतः गुरु शुक्रकास्त का विचार जीणान्द्रार किये या पुरुषे या खरा के मकान को छोड़कर सर्वत्र करना चाहिये ।

तीनों उत्तर, अनुराधा, रुप्शिणी, मुगलिना, चित्रा, रेवती, धनिष्ठा, शतभिषा, पुष्क, अश्विनी, उत्तर में प्रवेश शुभ है । तिथि व वार शुभ होने पर फिर लाग में शुद्ध देखकर चन्द्रमा व तारा की अनुकूलता रहने पर गृहप्रवेश शुभ होता है ।

प्रवेश के समय शुक्र पीछे व सूर्य वाम रहे तो शुभ होता है । शुक्र के विषय में यात्रा विचार के प्रसंग में बतायेंगे । वाम रवि का ज्यान आप इस प्रकार कर सकते हैं –

उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय 185
प्रवेश लम से 5,6,7,8,9 भावों में सूर्य रहने से दक्षिणभिमुख मकान में प्रवेश करते समय वाम सूर्य होता है। इसी प्रकार 8,9,10,11,12 भावों में प्रवेश समय सूर्य होते हैं तो पश्चिमभिमुख मकान में 2,3,4,5,6 भावों में सूर्य होते हैं तो पश्चिमभिमुख मकान में एवं 11,12,1,2,3 स्थानों में सूर्य रहने से उत्तरभिमुख मकान में प्रवेश करने पर वाम सूर्य रहता है जैसा कि कहा है -

अद्वैत पंचमात्व विताल स्वामित वचन ।

पूर्वारूपिते गेहे सूर्यो वामः प्रकटितः॥

deव प्रतिष्ठा मुहूः - उत्तरायण सूर्य में, शुक्र गुरु व चन्द्रमा के उदि रहने पर जलाशय, बाग -

बागीचा या देवता के प्रतिष्ठा करने चाहिए। प्रतिपद रहित शुक्ल पक्ष सर्व ग्राम है, लेकिन कृष्ण पक्ष में भी पंचमी तक प्रतिष्ठा हो सकती है। लेकिन अपने मास, तिथि आदि में दक्षिणायन में भी प्रतिष्ठा का विषय है। जैसे आक्षण मास नवरात्र में दूरा की, चतुर्दशी में गणेश की, भाद्रपद में श्री कृष्ण की, चतुर्दशी तिथि में सर्व शिवजी की स्थापना सुखद है। इसी प्रकार उपमुक्ति देवाणा तथा

भैरव, मातृका, वराह, नृसिंह, वामन, मिहषासुरमिदुः सूर्य कृत्य का अपनी तिथि उप सुखद है। इसी प्रकार उपमुक्ति देवाणा

भैरव, मातृका, वराह, नृसिंह, वामन, मिहषासुरमिदुः आदि की प्रतिष्ठा दक्षिणायन में भी होती है।

महिषासुरहन्ती च स्थायम् वै दक्षिणायने॥ (वैखानस संहिता)

वद्यवि मलमास सर्वः कृत्य के प्रति सुखवनेत् रहने पर जलाशय, बाग -

अशु तिथि को राजमाहाल यूः करके विषमित ूः से आधार से िपत करूः।

यितिथयूः तिथि के प्रति उप मूः तक हूः, लेकिन कुछ विषम ऋषि में भी सभी देवताओं की प्रतिष्ठा

शुभ मानते हैं।

मांगलवार को छोड़कर शेष वायु यजमान को रहने पर आसन व सूर्य बल शुभ होने पर उपमुक्ति, धर्म या द्रिष्टिभाग लम में भर्ति बनान व भाद्रपद में लम शुद्धि करके विषमित प्रकार से विद्वानपूर्वक स्थापित करें।

प्रतिष्ठा में अशु तिथि को जनम देती है - तिथियों लक्षाहीना तु न प्रतिष्ठा समो रूपः। इस प्रकार

महायान तक हस्त, चित्रा, स्वाती, अनुराधा, ज्योत्स्ना, भूरि, धनिष्ठा, रात्रिमित्रा, रेवती,

अहिन्द्री, मुरुण्या, पुष्य, तीनों उत्तरा, रोहिणी, मुगशिरा, नक्षत्रों में बलवान् लम में, अष्टप राशि, लम

को छोड़कर प्रतिष्ठा का मुहूः िहना चाहिए।
3.4 सारांश

इस इकाई में पाठकों के ज्ञानार्थ गृहार्मभ एवं गृहमुहूर्त प्रवेश मुहूर्त की चर्चा की गयी है। इससे पूर्व की इकाईयों में आपने वर बरण एवं विवाह का सम्पूर्ण अध्ययन कर लिया है। यहाँ इस इकाई में अब आप गृहार्मभ एवं गृहमुहूर्त की समझें। मानव के मुलभूत आवश्यकताओं में आवास एक महत्वपूर्ण आवश्यकता है और आवासार्थ वह गृहनिमाण अरम्भ करता है जहाँ वह अपने परिवार के साथ निवास करता है। गृहनिमाण अरम्भ करने की क्रिया गृहार्मभ तथा गृहमुहूर्त कर उसमें प्रवेश करने की विधि गृहप्रवेश कहलाती है।

इस इकाई में आप गृहार्मभ एवं गृहप्रवेश से सम्बन्धित अनेक विषयों का अध्ययन करेंगे।

3.5 शब्दावली

वास्तु = गृह सम्बन्धी देवता।
गृहार्मभ = गृहनिमाण हेतु कार्य आरम्भ करने वाली क्रिया।
गृहमुहूर्त = नूतन गृहनिमाण के परस्परत: उसमें प्रवेश करने की क्रिया।
पूर्वाभिमुख = पूर्व दिशा की ओर मुख।

3.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. ख
2. ग
3. घ
4. क
5. क

3.7 सन्दर्भ ग्रन्थसूची

1. संस्कारदीपिका - महामहोपाध्याय श्रीनित्यानन्द पर्वतीय
2. पारस्कर-गुहामूर्त - आचार्य पारस्कर (गदाधर भाष्य)
3. हिन्दुसंस्कारविधि: - डा. राजबली पाण्डेय

3.8 निबन्धात्मक प्रश्न

1. गृहार्मभ से आप क्या समझते हैं। स्पष्ट कीजिये।
2. गृहप्रवेश का विस्तार से चर्चा कीजिये।
इकाई – 4 यात्रा, दिशालय विचार

इकाई की संरचना

4.1 प्रस्तावना
4.2 उद्देश्य
4.3 यात्रा एवं दिशालय
 अभ्यास प्रश्न
4.4 सारांश
4.5 परिभाषिक शब्दावली
4.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
4.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
4.8 निबन्धात्मक प्रश्न
4.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई तृतीय खण्ड की चतुर्थ इकाई ‘यात्रा एवं दिक्षूल’ नामक शैष्पक इकाई से सम्बन्धित है। इससे पूर्व की इकाई में आपने गृहार्थ एवं गृहविविधता का अध्ययन कर लिया है। यहाँ पर इस इकाई में आप ‘यात्रा एवं दिक्षूल’ का ज्ञान प्राप्त करेंगे।

मानव अपने कार्य सिद्ध करने के लिये विभिन्न स्थलों पर यात्रा करता है। उसे यात्रा कब करनी चाहिये तथा वह कब यात्रा करे कि उसका लक्ष्य कार्य पूर्ण हो जाये तो इसके लिये उसे यात्रा एवं दिक्षूल का ज्ञान होना परमावश्यक है। यात्रा एवं दिक्षूल से सम्बन्धित विषयों का ज्ञान आप विस्तारपूर्वक प्रस्तुत इकाई में करेंगे।

4.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप जान पायेंगे कि—

1. यात्रा से आप क्या समझते हैं?
2. विभिन्न स्थलों पर यात्रा का शुभाशुभ समय क्या है?
3. यात्रा का महत्व क्या है?
4. यात्रा में दिक्षूल विवाह क्यों आवश्यक है?
5. यात्रा प्रशस्त हो इसका मूल्य क्या है?

4.3 यात्रा एवं दिक्षूल परिचय

यात्रा मुहूर्त विवाह - पद्मी, अष्टमी, द्वादशी, अमावस्या, पूर्णिमा, शुक्ल प्रतिपदा तथा रक्तका
तिथियों को छोड़कर शेर तिथियों यात्रा में प्राप्त है। अमृतसिद्धि या सर्वार्थसिद्धि योगों में तिथ्यादि विवाह के बिना भी यात्रा की जा सकती है

7. शुक्ली, आदर्श, विशाखा, चित्रा, आश्वेत, भूत, भरणी ये नक्षत्र यात्रा में मध्यम हैं। कृतिका, स्वाति, आदि, नृणामुक्त, शतिभषा, मूल, ज्योश्टा, रोहिणी ये नक्षत्र तिथियों में मध्यम हैं। अधिनी,
मूर्यांगिता, पुरवस्, पुष्य, हस्त, अनुराधा, श्रवण, धनिष्ठा, रेवती ये नक्षत्र यात्रा में श्रेष्ठ है।

जब लम्ब व राशि से अष्टम राशि लगे हैं तथा राशी के शुक्ल ग्रह के लगे हैं, तो यात्रा करना अति आवश्यक है।

आवश्यक होने पर कृष्ण युग की शुभतिथि तथा दिव्य तिथि यात्रा करना श्रेष्ठ होता है। जब अपनी जन्मपाद शुभकृत हो अथवा सूर्य की राशि से प्रथम राशि वेश लगे हो तो यात्रा जयादा है।
जब केन्द्र विश्वास में सुभ व 3,6,10,11 में पापग्रह हो तब यात्रा करे। चन्द्रमा 1,6,8,12 में अशुभ होता है। इसी प्रकार दशाम शानि, सन्तम शुभ हो तथा लम्बाई 6,7,8,12 में अशुभ होता है।

चन्द्रमा विचार – यात्रा में चन्द्र वल शुद्ध अनिवार्य है। 1,4,8,12 राशियों में चन्द्रमा का गोचर यात्रा में अशुभ है। यथा – केंद्र चन्द्र जलाशय शातिरणरथो (यात्रा श्रीमणि) यात्रा में चन्द्रमा का वाष्प भी प्रयत्नपूर्वक देखना चाहिये। जिस दिशा की राशि में चन्द्रमा हो उसी दिशा में चन्द्रमा का वाष्प होता है। जैसे 1,5,9 राशियों का चन्द्रमा पूर्व में 2,6,10 राशिगत चन्द्रमा देखनें में 3,7,11 राशि का चन्द्रमा पश्चिम में व 4,8,12 राशि का चन्द्रमा उतर में रहता है। चन्द्रमा को सदैव यात्रा में सामने या दाहिने होना चाहिये। यात्रा व फूढ़गत चन्द्रमा हानिप्रद है। यथा –

सम्मुख संरक्षणाधार देशसह सुखसम्पदः।

पश्चिमे प्राणसदहो वामे चन्द्रे धन्यक्षे।

सम्मुख चन्द्रमा प्रायः सभी दोषों को शान्त करने में सक्षम होता है। मान्यत्व ने तो यहाँ तक कहा है कि –

करणभगणदोषं वारसं/ऊःअिवान्रवसं/ऊथं पान्दोषं कुिलकितिशजदोषं यामयामाध/ऊथचअदोषम्।

शिनकु जरिवदोषं राह/ऊः्के /ऊथं वािद दोषं हरि सकलदोषं च/ऊथं /ऊ्5ंमास/ऊ्अं मुख/ऊ्थं थ।।

घात चूः ओकनी दे/ऊथ जैसे 1,5,9,2,6,10,3,7,4,8,11,12 भावे में चन्द्रमा घात चन्द्रमा कहलाता है। यथा, शास्त्रार्थ, मुक्तम दायर करना एवं वाद – विवाद आदि में घात चन्द्र का त्रुण करना चाहिये।

योगिनी विचार – योगिनी का भी यात्रा में विचार मुख्य है। तिथि विशेष के आधार पर दिशाओं में योगिनियों का वाष्प माना जाता है। योगिनी सदैव पीछे या बाये होनी चाहिये। योगिनी वास को सारिणी के माध्यम से समझा जा सकता है –

<table>
<thead>
<tr>
<th>दिशा</th>
<th>पूर्व</th>
<th>अम्ब</th>
<th>दक्षिण</th>
<th>नैत्रत्य</th>
<th>पश्चिम</th>
<th>वायु</th>
<th>उत्तर</th>
<th>ईशान</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>तिथि</td>
<td>1,9</td>
<td>3,11</td>
<td>5,13</td>
<td>4,12</td>
<td>6,14</td>
<td>7,15</td>
<td>2,10</td>
<td>8,30</td>
</tr>
</tbody>
</table>

इन तिथियों में योगिनी का वास कड़ी गई दिशाओं में होता है। युद्धादि की यात्रा में बायें योगिनी भी त्याज्य है। पीछे रहना सदैव शुभ है।

राहु विचार – राहु व योगिनी सदैव पीछे रहने पर यात्रा विशेष सफल होती है। सम्मुख राहु में विशेषतः गृहारम्भ व गृहप्रवेश नहीं करना चाहिये। राहु वास का चक्र यहाँ दिया जा रहा है –

उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविज्ञान

190
राहु वास चक्र

<table>
<thead>
<tr>
<th>सूर्य संक्रान्ति मास</th>
<th>वृश्चिक, धनु एवं मकर</th>
<th>मेर, कुम्भ व मीन</th>
<th>वृष, मिशन एवं कर्क</th>
<th>सिह, कन्या एवं तुला</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>राहु वास की दिशा</td>
<td>पूर्व दिशा</td>
<td>दक्षिण दिशा</td>
<td>पश्चिम दिशा</td>
<td>उत्तर दिशा</td>
</tr>
</tbody>
</table>

सर्वार्थ सिद्धि योग – विशेष वार व नक्षत्रों के योग से सर्वार्थ सिद्धि योग बनते हैं। इनमें वार गणना प्राचीन प्रचलनानुसार सूर्योदय से सूर्योदय तक मानते है। इन वार व नक्षत्रों के योग में सर्वार्थसिद्धि योग बनते है।
1. रविवार – मूल, तीनों उत्तरा, अधिनी, हस्त, पुष्य
2. सोमवार – श्रवण, अनुराधा, रोहिणी, पुष्य व मृगशिरा
3. मंगलवार – उत्तरा भाद्रपद, कृतिका, अधिनी व श्लेषा
4. बुधवार – भस्म, अनुराधा, कृतिका, रोहिणी, मृगशिरा
5. शुक्रवार – पुनर्वसु, अनुराधा, रेवती, अधिनी, श्रवण
6. शनिवार – रोहिणी, श्रवण, स्वताती।

इन योगों में प्रायः सभी शुभ कार्य सफल होते है।

अमृतसिद्धि योग – सर्वार्थसिद्धि योगों में से कुछ को बहुत शक्तिशाली देखकर उनका नाम अमृतसिद्धि योग रखा गया है। रविवार व हस्त नक्षत्र, सोमवार में मृगशिरा, मंगल में अधिनी, बुधवार में अनुराधा, गुरुवार में पुष्य, शुक्रवार में रेवती, शनिवार में रोहिणी रहने पर अमृतसिद्धि योग बनते है।

भद्र विचार – विष्ट करण का ही दूसरा नाम भद्रा है। भद्रा नाम की राक्षसी थी, जिसके काल में किये गये कार्य का नाश हो जाता है।

शुक्ल पक्ष में 8,15 तिथियों के पूर्वों में तथा 4,11 के उत्तरार्ध में भद्रा रहती है। कृष्ण पक्ष में 3,10 के उत्तरार्ध में व 7,14 के पूर्वों में भद्रा होती है।

अभ्यास प्रश्न –

1. रिक्ता संजुक तिथि है।
क. 3,8,13 ख. 1,11,6 ग. 9,4,14 घ. 5,10,15
2. सर्वार्थ सिद्ध योग बनते है।
क. बारी एवं राशियों के संयोग से ख. बारी एवं नक्षत्रों के संयोग से ग. नक्षत्रों एवं करण के संयोग से घ. कोई नहीं

3. रविवार का दिवसूल दोष निन्मलिखित में किससे दूर होता है?

क. दूध से ख. दही से ग. घृत से घ. तिल से

4. शनि - सोम को किस दिशा में दिवसूल होता है?

क. दक्षिण ख. पश्चिम ग. पूर्व घ. उत्तर

5. बिष्ट करण को हम किस नाम नाम से जानते है?

क. जया ख. भूमि ग. रेखा घ. कोई नहीं

भूमि दार्शनिक विचार – भूमि का फल उसके भूमि लोक वास में ही होता है। जब भूमि स्वर्ग या पातल में हो तो शुभ माना जाता है। अन्यथा वह सभी शुभ कारणों में त्याज्य है।

जब मेष, वृश्चिक, मिश्रण एवं वृश्चिक का चन्द्रमा हो तो भूमि स्वर्ग लोक में रहती है। शुक्ल पक्ष में विष्ट की संपीण संहा एवं कृष्ण पक्ष में वृश्चिकी संहा है। सूर्य का आयुभाग जहरीला होने से शुक्लपक्ष में प्रारंभ की 5 पहियाँ तथा कृष्ण पक्ष में अनन्त पूर्व पहियाँ भूमि का मुख होता है। क्योंकि विनय के पिछले भाग में डंक होता है। पीयुष धरा में मुख या पूर्व के विषय में अनेक मत बताये है। हमारे विचार से तो सामान्यत: भूमि अशुभ ही होती है। तथा लोकवामनुसार यदि भूमि पर उसका वास आये तो सदैव त्याज्य है। अतः खण्ड के अनुसार मुँह या पूंछ का भेद समन्वयपक विद्याओं ने नहीं माना है।

भूलोकस्था सदा त्याज्या स्वर्गात्पातालगा शुभा । (मुहूर्त गणपति)

सामान्यत: भूमि की पूंछ का काल संदैव ज्ञान क्षेप होता है, ऐसा कहा गया है। लेकिन इस विषय में विभिन्न है। चतुर्दशी में पूर्ण को, अष्टमी में अनम कृष्ण की ओर, सप्तमी में दक्षिण की ओर, पूर्णिमा में नेत्रलय की ओर, चतुर्दशी में पश्चिम की तरफ़, दशमी में वायुक्ष की ओर, आषाढ़शी में उत्तर व तुलिया में ईशान कृष्ण की ओर भूमि के मुख की दिशा में नहीं जाना चाहिये। पूंछ की दिशा में जाने से सदा सफलता मिलती है। भीषण कारणों में भूमि शुभ होती है, अर्थात् वध, बन्धनादि कारणों में मारणदि कृष्णाओं में यह सफलता देती है।

यात्रा में सीरे समय –
यात्रासंतिरूहुगोपते वरिष्ठा
मध्या शनीश्रष वुधोश्यामसां गुहे पु
भानी कुनिरजःवृविष्क्रमग्यतित्तिदा
शस्त्रत्सु देवलमते/शवनि पृढ़गोड़के: ॥
मेष, सिंह, चृशु के सूर्य में यात्रा श्रेष्ठ होता है। मकर, कुम्भ, मिथुन, कन्या, वृष, तुला के सूर्य में मध्यम है। तथा कर्क, मीन, वृश्चिक के सूर्य होते हैं तथा दौरयात्रा होती है। यात्रा के समय सूर्य का पृष्ठ भाग में रहना उत्तम है।

विशेष – यात्रा के समय तात्कालिक लम, 12 या 2 में सूर्य होते हैं तो पश्चिम दिशा की 4, 3, 5 में होते हैं तथा दक्षिण दिशा की, 7, 6, 8 में होते हैं। पूर्व दिशा, 10, 9, 11 में होते हैं।

भर्तूणाम काल और भर्तूणामक नक्षत्र –

पुष्य में कर्त्तिविक्षुन्यां सब्रोशामागमनं शुभम्।

सर्वकाले शिवास्वर हरे वुधे मृगे शुद्धी॥

पुष्य, अनुराधा, हस्त और अग्निम में सभी दिशाओं में, तथा हस्त, पुष्य, मृगिशरा, श्रवण इनमें सभी समय यात्रा गुण मानी है।

दिक्षूल बिचार –

शनी चन्द्रे चत्वरप्रियम् दक्षिणां च दिशय मुरी।

सूर्य शुक्र पश्चिमां च चुः भोंमे तथोऽतरम्॥

आनंद्या च गुरी चन्द्रे नैःत्रुत्यारविशुद्धियोऽः।

ऐशाय्या चंद्रे चाय्ये मंगले गमने त्यजेत्॥

न प्रजेठक्ष्लमेव प्राच्चर्याय याम्ये चाजपदे तथो॥

उद्विविवधामपृष्ठी च त्रैविचार्याय धातुभे तथा॥

शनि – सोम को पूर्व दिशा में, बुधप्ति को दक्षिण में, रवि – शुक्र को पश्चिम में, बुध मंगल को उत्तर दिशा में दिशा शूल होता है। तथा बुधप्ति सोम को अनिकार में, रवि – शुक्र को नैःत्रुत्य रोण में, बुध – शनि को इश्वस कोण और मंगल को वाच्यकोण में दिक्षूल होता है। एवं ज्येष्ठा नक्षत्र में पूर्व, पूर्वोत्तरपद में दक्षिण, रोहिणि में पश्चिम और उत्तराफ्यामुंगनी नक्षत्र में उत्तर दिशा में शूल है, अत: इनमें यात्रा करना गुण नहीं है।

विशेष – 119 विधि में पूर्व, 5113 में दक्षिण, 6114 में पश्चिम और 2110 विधि में उत्तर दिशा में शूल है। इन विधियों में पूर्व आदि दिशाओं की यात्रा वर्जित है।

दिशाओं में विधि – वार नक्षत्र शूल बोधक चक्र –

<table>
<thead>
<tr>
<th>दिशा</th>
<th>पूर्व</th>
<th>दक्षिण</th>
<th>पश्चिम</th>
<th>उत्तर</th>
</tr>
</thead>
<tbody>
<tr>
<td>तिथि</td>
<td>119</td>
<td>5113</td>
<td>6114</td>
<td>2110</td>
</tr>
<tr>
<td>वार</td>
<td>शनि, सोम</td>
<td>गुरु</td>
<td>रवि, शुक्र</td>
<td>बुध, मंगल</td>
</tr>
</tbody>
</table>
दिक्षूल दोष का पाठ –
 सूर्यवारे घृं च पीत्वा गच्छेसोमेम पयस्तथा।
 गुडमंगारके वारे बुधवारे तिलानि।
 गुरुवारे दधि जैव शुकवारे यवानि।
 माषाम्मुक्तवा शानी गच्छेचूलदोषशान्तये।

tाम्सूल चन्दने मुच्च पुष्पं दधि घृं तिला।
 बारशूलहरण्यकर्द्र दानाद्धत्तरतोश्चानात।
 रविवार को घृं, सोम को दूध, मंगल को गुड़, बुध को तिल, वृहस्पति को दधि, शुक्र को जी और
 शनिवार को उड़क खाकर यात्रा करे तो शूल दोष शान्त हो जाता है। तथा रविवारों में क्रम से
 पान, चन्दन, मिठी, पुष्प, दधि, घृं, तिल इनके दान देने से वा प्राशन करने से अथवा धारण करने पर
 भी शूल दोष नहीं लगता है।

4.4 सारांश

इस इकाई में पाठकों के ज्ञानार्थ यात्रा एवं दिक्षूल विचार की चर्चा की गयी है। इससे पूर्व की
इकाईयों में आपने
गृहार्भ एवं गृहप्रेरणा का अभ्यास कर लिया है। अब यहाँ आप यात्रा व दिक्षूल सम्बन्धित ज्ञान
प्राप्त करेंगे। मानव अपने जीवन में कई बार यात्रा करता है। उसे कब किस दिशा में यात्रा करनी
चाहिये, तथा कब यात्रा करने से लाभ होगा, हानि होगा आदि इत्यादि का विचार इस इकाई में हम
करेंगे। दिक्षूल से तात्पर्य है – किसी दिशा विशेष में निश्चित तिथि में यात्रा करना।

4.5 शब्दावली

यात्रा = भ्रमण करना।
दिक्षूल = दिशा विशेष में निश्चित तिथि में यात्रा सम्बन्धित सुभाषुभ विचार।
परिहार = निवारण।
सर्वकाल = सभी कालों में
सर्वदिनमन = सभी दिशाओं में गमन।

4.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
कर्मकाण्ड एवं मुहूर्त ज्ञान

1. ग
2. ख
3. ग
4. ग
5. ख

4.7 सन्दर्भ ग्रन्थसूची
1. संस्कारदीपक - महामहोपाध्याय श्रीनित्यानन्द पर्वतीय
2. पारस्करशस्त्र - आचार्य पारस्कर (गदाधर भाष्य)
3. हिन्दूसंस्कारविधि - डा. राजबली पाणडेय

4.8 निबन्धात्मक प्रश्न
1. यात्रा से आप क्या समझते हैं। स्पष्ट कीजिये।
2. यात्रा एवं दिशाशूल का विस्तार से वर्णन कीजिये।
इकाई – 5 चन्द्रवास, शिववास एवं अग्निवास

इकाई की संरचना

5.1 प्रस्तावना
5.2 उद्देश्य
5.3 चन्द्रवास, शिववास एवं अग्निवास
   अभ्यास प्रश्न
5.4 सारांश
5.5 पारंपरिक शब्दावली
5.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
5.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
5.8 निबन्धात्मक प्रश्न
5.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई तूर्य खंड के पंचम इकाई “चन्द्रवास, शिववास एवं अभिवास” नामक शीर्षक से सम्बन्धित है। मुल मूर्ति एवं आयुष्मान में महत्वपूर्ण कार्य करने हेतु शुभ समय की आवश्यकता उत्पन्न होती है। तथा इकाई कर्मकाण्ड सम्बन्धित चन्द्रवास, शिववास अभिवास का विषय बताया गया है।

चन्द्रमा का किसी राशि में स्थित होना चन्द्रवास का बोध करता है। भगवान शिव सम्बन्धित पूजन अर्चन के लिए कर्मकाण्ड में शिववास का ज्ञान कहा गया है तथा यज्ञदि कर्मों के साप्ताहिक हेतु अभिवास का ज्ञान कहा गया है।

इस इकाई में आप चन्द्रवास, शिववास एवं अभिवास का अध्ययन करें।

5.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप जान सकेंगे कि—

- चन्द्रवास क्या है?
- शिववास क्या है?
- कर्मकाण्डकोक्त अभिवास क्या है?
- पूजन आदि कर्म में चन्द्रवास, शिववास एवं अभिवास का क्या महत्व है?

5.3 चन्द्र वास, शिव वास एवं अभि वास

भारतीय सनातन परम्परा में कृष्णियों की यह विशेषता रही है कि वह निरन्तर चिन्तन पथ पर आग्रह होते हुए लोकोपकार की दृष्टि से नवीन - नवीन ज्ञान एवं विष्णु से संबंधित ज्ञान को लाभान्वित करते हैं। यह अत्यन्त गौरवपूर्ण विषय है कि कृष्णियों ने भूसापेश्वरा आकाशशास्त्र चन्द्रमा का वास स्थान ज्योतिष शास्त्र के माध्यम से ज्ञात किया, उसी क्रम में भगवान शिव और अभि का वास स्थान सूत्रात्मक रूप में ज्ञात किया। वह अपने आप में अलोकिक है।

चन्द्रमा वास ज्ञान -
मेष, चाष तथा धनुरि निरांभागाम।
वृष तथा कन्या भक्ति र याम्यः ॥
युगम तुलायां च घटी प्रतीयां।
ककुण्डलिनि मीनी दिशिष्यवतर्षस्य॥
अध्ययन - मेष, सिंह और धनु राशि का चन्द्रमा पूर्व दिशा में, वृष, कन्या और मकर राशि का चन्द्रमा दक्षिण दिशा में, मिथुन, तुला और कुम्भ राशि का चन्द्रमा पश्चिम दिशा में तथा कर्क, वृश्चिक और
मीन राशि का चन्द्रमा उत्तर दिशा में रहता है।

चन्द्रमा का वास फल -
सम्पूर्त त्वर्धालाभ: स्वादिष्टिणे सुखसम्पदः।
पृष्ठतो तरण चैव वामे चन्द्र धनक्षयः।
यात्रा करते समय (गृह से प्रस्थान करते समय) सम्पूर्त चन्द्रमा हो तो अर्थ लाभ, दाहिने हो तो सुख सम्पत्त, पीछे हो तो शोक सन्ताप, बाँधे हो तो धन का नाश होता है। चन्द्र विचार, योगिनी विचार और दिशाप्रयोग विद्वन्ने महत्वपूर्ण यात्रा में अनिवार्य माना जाता है।

विशेष - ज्योतिष शास्त्र के अनुसार चन्द्रमा सर्वाधिक तीम गति बाला प्राप्त माना जाता है। वह प्राप्त में सूर्य के समान ही राजा माना जाता है। एक राशि का भोग करने में चन्द्रमा को सवा दो दिन से सात दिन का समय लगता है। जन्मकाल में चन्द्रमा जिस राशि पर होता है, वही जातक का भी राशि माना जाता है। चन्द्रमा मन का प्रतीक है। चन्द्रवास जानकर यात्रादि कार्य में इनका प्रयोग करते हैं।

शिव वास –
तिथि दिष्टेनीकृत्य बाणीः संयोजयेतातः।
सप्तभिषच्छ हंसवशेषे शिववासं समुदिशेषेतु।
एकन वासः केलाशे द्वितीय गौरीसनिधिः।
नृतीये वृषभारुपः सम्भायाः च चातुरुपः।
पंचमे भोजने चैव क्रीडायाः च रसायने।
श्रमाने सप्तेश्रे च चाश्वनाशः।
उदारितः।
केलाशे लभते सौख्यं गौरीं च सुख सम्पदः।
वृषभेभविभाहत सिद्धि: स्वादः सम्भायां सन्तान कारणी।
भोजने च भवेत् पीडः क्रीडायां कष्टमेव।
चाश्वाने वर्णं तेज फलमेवं विचारयेत्।

अर्थ – जिस तिथि में शिववास जात करना हो, उस तिथि का दिष्टिण कर उसमें 5 जोड़े तथा प्राप्त योग फल में सात संवहा से भाग दे। प्राप्त शेषनासर शिववास समझना चाहिए। यदि 1 शेष हो तो शिव का वास स्थान केलाश में, 2 शेष हो तो गौरी के सानिध्य में, 3 शेष हो तो वृष (बैल) पर आराध्य, 4 शेष हो तो सभा में, 5 शेष हो तो भोजन में, 6 शेष हो तो क्रीडा में तथा 7 शेष हो तो समस्याने में शिव का वास स्थान समझना चाहिए।

शिववास फल –
केलाश में – सुख की प्राप्ति

उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय 198
गीरी के साधनध्य भर - सुख प्राप्त
चुरानुसार होने पर - अभिनव सिद्धि
सभा में होने पर - सत्ताप कारणी
भोजन में होने पर - पीढ़ा
क्रीड़ा में होने पर - कँप
श्रमाभार में होने पर - मरण

उपयुक्तानुसार शिव का वास तथा वास स्थान पर होने वाले फल समझना चाहिये। विशेषकर भगवान शिव से सम्बन्धित पूजन - अर्चन में शिव वास का महत्त्व है। रूढ़किरण, रूढ़याग, महामृत्युजय आदि कर्मकाण्ड सम्बन्धित कारणों में शिव वास का ज्ञान आवश्यक है, तभी तब सम्बन्धित पूजन का शुभ फल प्राप्त होता है।

अभिन वास -
सेका तिथिविरुध्या कुर्ताप्ता शेषेणृश्वे भूति वधिवासः।
सीख्याय होमो शणिपपपशे प्राणिर्नाशी दिचि भूतले च॥

अर्थ - जिस तिथि में अभिवास जात करना हो, उस तिथि में एक जोड़कर उसमें रविभाद्रि से दिन गणना कर जोड़े और प्राप्त योगफल में चार से भाग देने पर तीन और शून्य शेष बचे तो अभि का वास पृथ्वी पर जानना चाहिए, उसमें हवन करें तो सौत्तह होता है। एक और दो शेष बचे तो अभि का वास आकाश या पाताल में जाना चाहिए, उसमें यदि हवन करे तो प्राण और अर्थ (भन) का नाश होता है। तिथि की गणना प्रायः तिथिकार्य में शुकल पक्ष से होती है। जैसा कि लिखा है -
शुकलादिगणना कार्यं तिथिनां गणिते सदा॥

उदाहरण -
जैसे कार्तिक शुकल पंचमी, वृहत्सप्तिवार का हवन करना अभिन्न है। तिथि 5, वार 5, दोनों को योग करने पर 10 प्राप्त हुआ और योग में सूत्तनुसार । जोड़ा तो 11 हुआ। इसमें चार का भाग देने से लिखित 3, इस कारण अभि का वास पृथ्वी पर हुआ, इसमें हवन करने से सौत्तह और लाभ होगा। यह विचार हवनामक काम्य हवन के लिए है। जय, क्षीरदि हवन में इसका विचार नहीं होता है।

विशेष - कर्मकाण्ड प्रायोगिक होने के कारण उसमें दिये गये विचार भी प्रायोगिक होते है।
चंद्रवास, शिवास एवं अभि के वास स्थान का ज्ञान कर्मकाण्ड की अतीन्द्रियता को प्रदशित करता है। सम्बन्ध तर्कराय कर्मकाण्ड व्यवसायपरक हो चुका है, इसीलिए इसके मूल तत्त्वों को आम जनता और न ही इसके अध्येता समझ पा रहे है। आज वैदिक वर्गों में इसका उपहार होता रहता है। इसका एकमात्र करना अध्येताओं का मूल से कटना है। आज भी नियमविवाद होकर कर्मकाण्ड किया जाये तो फल ज्ञान प्रतिष्ठात प्राप्त होगा, इसमें संशय नहीं है ऐसा मेंरा मत है।
अभ्यास प्रश्न –

1. वृष राशि का चन्द्रमा किस दिशा में होता है।
   क. पूर्व ख. दक्षिण ग. पश्चिम घ. उत्तर
2. यात्रा करते समय चन्द्रमा सम्मुख होता है।
   क. धन लाभ होता है ख. धन का क्षय होता है ग. अचल धन की प्राप्ति होती है घ. कोई नहीं
3. शिव के वृषारूढ़ होने पर क्या फल मिलता है?
   क. लाभ ख. अभीष्ट सिद्धि ग. हानि घ. धन प्राप्ति
4. कैलाश होता है?
   क. सुख सम्पदा ख. रूपकरण ग. सन्तापकारिणी घ. धनप्राप्ति
5. सर्वविधि तीत्र गति वाला प्रश्न है?
   क. सूर्य ख. चन्द्रमा ग. शुक घ. मंगल

5.4 सारांश

इस इकाई का अभ्यास कर आपने जाना कि मेष , सिंह और धनु राशि का चन्द्रमा पूर्व दिशा में, वृष, कन्या और मकर राशि का चन्द्रमा दक्षिण दिशा में, मिथुन, तुला और कुम्भ राशि का चन्द्रमा पश्चिम दिशा में तथा कर्क, वृद्धि और मीन राशि का चन्द्रमा उत्तर दिशा में होता है तथा जिस तिथि में शिववास ज्ञात करना हो , उस तिथि का विवृतिन्त कर उसमें 5 जोड़े तथा प्राप्त योग फल में सात संख्या से भाग दे। प्राप्त शोषणुसार शिववास समझना चाहिये। जिस तिथि में अभिनवव ज्ञात करना हो, उस तिथि में एक जोड़कर उसमें रविवाद से दिन गणना कर जोड़े और प्राप्त योगफल में चार से भाग देने पर तीन और शून्य शेष बचे तो अभि का वात पृथ्वी पर जानना चाहिए, उसमें हवन करने तो सीख्य होता है। एक और दो शेष बचे तो अभि का वात आकाश या पाताल में जानना चाहिए, उसमें यदि हवन करे तो प्राण और अर्थ (धन) का नाश होता है।

5.5 शब्दावली

लोकार्पण = जन कल्याण
नवीन = नया
जनमानस = मानवों के लिये
समुख = सामने
सर्वदिगमन – सभी दिशाओं में गमन
वृषारूढ़ – वृष पर बैठे होना
अभीष्ट - चाह
5.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. ख
2. क
3. ख
4. क
5. ख

5.7 सन्दर्भ ग्रन्थसूची

1. वृहदवकहड़ाचूभ्रमू - महामहोपाध्याय श्रीनित्यानन्द परवतीय
2. मुहूभिन्नातमणि - आचार्य पारस्कर (गदाधर भाष्य)
3. हिन्दुसंस्कारविधि - डा. राजबली पाण्डेय

5.8 निवन्धात्मक प्रश्न

1. चन्द्र वास क्या है? स्पष्ट कीजिये।
2. अनिवास एवं शिववास का विस्तार से वर्णन कीजिये।